



हिंदी कथा एवं निबंध साहित्य

Edited By
Dr. Vinod Kumar

Printed by
LAXMI PUBLICATIONS (P) LTD.
113, Golden House, Daryaganj,
New Delhi-110002
for
Lovely Professional University
Phagwara

Course Code	D	H	I	N	4	1	7	Course Title	HINDI KATHA EVAM NIBANDH SAHITYA
--------------------	----------	----------	----------	----------	----------	----------	----------	---------------------	---

Weightage		
CA	ETE (Th.)	ETP
20	80	00

COURSE CONTENT:

Sr. No.	Content	SLM	Units of SLM
1.		DHIN403_KATHA_SAHIT YA_ EVAM_NIBANDH	27
2.			28
3.			29
4.			30,31
5.			32

प्रेमचंद की कहानियां: कहानियों का सार एवं प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण,
प्रेमचंद की लेखन कुशलता

आचार्य रामचंद्र शुक्ल का साहित्यिक योगदान और उनके निबंध साहित्य की विशेषताएं

आचार्य रामचंद्र शुक्ल कृत चिंतामणि (श्रद्धा, भक्ति, लोभ और प्रीति, लज्जा-ग्लानि)
निबंधों का सार और सप्रसंग व्याख्या विश्लेषण और समीक्षा

विष्णु प्रभाकर की लेखन कुशलता, जीवनी आवारा मसीहा- कथावस्तु, उद्देश्य
एवं नामकरण , चरित्र-चित्रण और व्याख्या विश्लेषण और समीक्षा

यात्रा वृत्तांत चीड़ों पर चाँदनी की कथावस्तु, उद्देश्य, भाषा-शैली, प्रमुख गद्यांशों
की व्याख्या-विश्लेषण और समीक्षा

पाठ्यक्रम
(SYLLABUS)
हिंदी कथा एवं निबंध साहित्य

उद्देश्य

- छात्रों में साहित्य को समझने एवं उसके आरचादन की योग्यता का विकास करना।
- छात्रों को गद्य साहित्य की विभिन्न विधाओं से परिचित कराना।

Sr. No.	Content
1	प्रेमचंद की कहानियां: कहानियों का सार एवं प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण, प्रेमचंद की लेखन कुशलता
2	आचार्य रामचंद्र शुक्ल का साहित्यिक योगदान और उनके निबंध साहित्य की विशेषताएं
3	आचार्य रामचंद्र शुक्ल कृत चिंतामणि (श्रद्धा, भक्ति, लोभ और प्रीति, लज्जा-ग्लानि) निबंधों का सार और सप्रसंग व्याख्या विश्लेषण और समीक्षा
4	विष्णु प्रभाकर की लेखन कुशलता, जीवनी आवारा मसीहा- कथावस्तु, उद्देश्य एवं नामकरण , चरित्र-चित्रण और व्याख्या विश्लेषण और समीक्षा
5	यात्रा वृत्तांत चीड़ों पर चाँदनी की कथावस्तु, उद्देश्य, भाषा-शैली, प्रमुख गद्यांशों की व्याख्या-विश्लेषण और समीक्षा

विषय-सूची

इकाई (Units)	(CONTENTS)	पृष्ठ संख्या (Page No.)
1.	‘विष्णु प्रभाकर’ का साहित्यिक योगदान <i>Hardeep Kaur, Lovely Professional University</i>	1
2.	‘आवारा मसीहा’ : कथावस्तु एवं उद्देश्य <i>Vinod Kumar, Lovely Professional University</i>	16
3.	‘आवारा मसीहा’ : प्रमुख गद्यांशों की व्याख्या <i>Reeta Singh, Lovely Professional University</i>	39
4.	‘आवारा मसीहा’ : प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण <i>Hardeep Kaur, Lovely Professional University</i>	70
5.	‘चीड़ों पर चाँदनी’ : कथावस्तु एवं उद्देश्य <i>Vinod Kumar, Lovely Professional University</i>	87
6.	‘चीड़ों पर चाँदनी’ : भाषा-शैली एवं गद्यांशों की व्याख्या <i>Hardeep Kaur, Lovely Professional University</i>	106

नोट

इकाई-1: 'विष्णु प्रभाकर' का साहित्यिक योगदान

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

- 1.1 प्रभाकर जी की लेखन कुशलता
- 1.2 जीवनी के प्रमुख तत्वों का वर्णन
- 1.3 जीवन वृत्तांत के आधार पर लेखक द्वारा साहित्य की मर्मज्ञता की व्याख्या
- 1.4 प्रभाकर जी के कृतित्व के आधार पर 'आवारा मसीहा' की समालोचना
- 1.5 सारांश (Summary)
- 1.6 शब्दकोश (Keywords)
- 1.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
- 1.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- प्रभाकर जी की लेखन कुशलता को जानने में;
- जीवनी के प्रमुख तत्वों का वर्णन करने में;
- लेखक द्वारा साहित्य की मर्मज्ञता की व्याख्या को समझने में;
- 'आवारा मसीहा' की समालोचना करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

'आवारा मसीहा' श्री विष्णु प्रभाकर द्वारा लिखित बंगाल के प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री शरतचन्द्र की प्रमाणिक जीवनी है। इसमें प्रभाकर जी ने उस महान व्यक्ति के जीवन चरित का वर्णन किया है जो कुछ लोगों की दृष्टि में महामानव, मसीहा, देवता आदि था परंतु कुछ लोग उसे बुरा व्यक्ति तथा वेश्यागामी कहते थे। प्रभाकर जी का यह जीवनी साहित्य इसी एक व्यक्ति को केंद्र मानकर लिखा गया है। उन्होंने नायक के भाव जगत और सामाजिक जीवन की गाथा को दर्शाया है। इस प्रकार उन्होंने यह सिद्ध किया है कि किस प्रकार परिस्थितियों के बीच नायक आगे बढ़ता जाता है अर्थात् व्यक्ति का कृतित्व और अंकन का ढंग किस रूप में हुआ है? उस युग की शक्तियों ने नायक के साथ कैसा व्यवहार किया?

1.1 प्रभाकर जी की लेखन कुशलता

विष्णु प्रभाकर जी ने बंगाल के सुप्रसिद्ध उपन्यासकार शरतचन्द्र की जीवनी की 'आवारा मसीहा' के नाम से रचना की है। यहाँ हम लेखक की जीवनी कला की समीक्षा निम्नांकित तत्वों के आधार पर करेंगे—

1. जीवन वृत्तांत के तत्वों की व्याख्या,
2. जीवन वृत्तांत के आधार पर लेखक द्वारा साहित्य की मर्मज्ञता की व्याख्या,
3. प्रभाकर जी के कृतित्व के आधार पर ‘आवारा मसीहा’ की समालोचना।

जीवनी साहित्य बहुत पुराने समय से लिखा जाता रहा है परंतु इसके तत्वों के बारे में बहुत कम लोग जानते हैं। इसलिए हम यहाँ पर जीवनी साहित्य के तत्वों पर विस्तार से विचार करेंगे ताकि ‘आवारा मसीहा’ नामक कृति की समीक्षा आसानी से हो सके।

जीवनी साहित्य में किसी महत्वपूर्ण व्यक्ति के जीवन से संबंधित कार्यों का लेखा-जोखा होता है। इसमें बाहरी घटनाओं का आकलन नायक के चरित को आधार बनाकर किया जाता है जिसमें आंतरिक जगत से संबंधित विशेषताओं को भी स्पष्ट किया जाता है। इस प्रकार ‘जीवन चरित’ मानव की जीवनी का असली और वास्तविक कार्यचक्र है।

इस बात को हम भली-भाँति जानते हैं कि ‘जीवन चरित’ संपूर्ण जीवन का विस्तृत नक्शा है। इसमें विशिष्ट व्यक्ति के संपूर्ण चरित्र की चर्चा की जानी चाहिए। लेकिन कभी-कभी चरित्र तथा आचरण से बाहर की बातों का वर्णन करना भी आवश्यक हो जाता है। जीवनी साहित्य में कुछ बातें बड़ी हो सकती हैं और कुछ छोटी अर्थात् जन्म से लेकर व्यक्ति के मरण तक का लेखा लिखना परमावश्यक हो जाता है। डा. प्रजापति ने लिखा, “जीवनी एक ऐसा इतिहास है जिसमें विशिष्ट व्यक्ति के जीवन की गीली मिट्टी को सूखा बनाकर एक मंजूषा में भरा जाता है।”

1.2 जीवनी के प्रमुख तत्वों का वर्णन

जीवनी के प्रमुख तत्वों का वर्णन निम्नांकित शीर्षकों के अंतर्गत किया जाएगा—

1. जीवनी नायक: विशिष्ट व्यक्ति—जिस विशेष व्यक्ति का ‘जीवन चरित’ लिखना होता है उसे केंद्र में रखा जाता है। उससे संबंधित अन्य चरित आसपास घूमते हुए से दिखाई देते हैं। इस चरित नायक के व्यक्तित्व को इस ढंग से लिखा जाता है मानो उसके जीवन को नए सिरे से गढ़ा गया है। उसमें नवीनता लाने का पूर्ण प्रयास किया जाता है। इसके लिए लेखक यथार्थ के साथ कल्पना को भी जोड़ता है क्योंकि कल्पना के सूत्र अतीत को जगाते हैं और तथ्यों में एक नयापन ले आते हैं। इससे नायक की भावनाओं को बल मिलता है और यथार्थ का ताना-बाना बुनने में आसानी हो जाती है। कल्पना की इस परिधि को उस सीमा तक लाँघने की चेष्टा की जाती है जिस सीमा तक कल्पना यथार्थ के साथ घुल-मिल सके। यदि किसी कमजोरी से कल्पना का आवरण हट जाता है तो इससे जीवनी की देह भद्दी और कुडौल दिखाई देने लगती है। इस दृष्टि से यह कहना भी उचित ही होगा कि कल्पना शीलता ही जीवनी चरित नायक को पुनः जन्म देती है।

इस संबंध में राहुल सांकृत्यायन के शब्दों का स्मरण अपरिहार्य है—

“लेखक यदि किसी नायक की जीवनी लिखना चाहता है तो उसका कर्तव्य है कि जैसा उसे देखे वैसा ही वह पाठकों के सामने रख दे। जीवन चरित्र में अंदर और बाहर की भावनाओं का एक सेतु होता है जो विषय को जड़ता से बचाता है। इससे मानव की गरिमा, उसकी ख्याति को कोई हानि नहीं पहुँच पाती है। लेखक को चाहिए कि वह अपने मन में केवल एक ही मूर्ति को प्रतिष्ठापित करे और उसी की पूजा-अर्चना करते हुए अन्य पात्रों को उसके सामने लाकर बिठा दे। इसके विपरीत चलने वाला रचनाकार जीवन-चरित्र न लिखकर इतिहास की रचना करने वाला मान लिया जा सकता है।”

इस प्रकार जो लेखक जीवनी चरित की रचना करता है वह नायक के कार्यों को ज्यों-का-त्यों रखने का प्रयास करता है क्योंकि कार्य भी वास्तव में चरित्र के साथ ही चलता है। यदि हम व्यक्तित्व को ही सृजित करने की बात सोचते

नोट

रहेंगे तो नायक के कर्म पीछे छूट जाएँगे और जीवन चरित अधूरा रह जाएगा। इसलिए व्यक्तित्व और कृतित्व दोनों पर विशेष बल दिया जाता है। हम केवल वही लिख सकते हैं जिसका हमें ज्ञान होता है या फिर हम नायक के सानिध्य से सीखते हैं। नायक के हृदय में क्या है? इसके बारे में हम अपनी ओर से कोई भी अनुमान नहीं लगा सकते। इसलिए कर्म ही मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्धारण करता है और उसी आधार पर विशिष्ट व्यक्ति की जीवनी लिखी जाती है।



टास्क प्रभाकर जी की लेखन कुशलता पर एक लेख लिखिए।

2. सामाजिक पृष्ठभूमि का परिपूर्ण आकलन—‘जीवन चरित’ की रचना करते समय लेखक को चरित नायक के कार्यों को प्रभावित करने वाले सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक संगठनों का भी गंभीरता के साथ आकलन करना पड़ता है क्योंकि नायक इन तत्वों के बीच रह कर ही अपने जीवन को सही रूप देता है। कोई भी नायक बिना कर्मों के जीवित नहीं रह सकता। कर्म जीवन की एक विश्वसनीय कला है, जो मानव को स्थिर, स्थायी और जीने योग्य बनाती है। कर्म के पीछे मनुष्य किसी उद्देश्य, मान्यता, संकल्प शक्ति और किसी अज्ञात प्रेरणा को सजाए रहता है क्योंकि ये सारे तत्व जीवनी-तत्व के सूत्र हैं जो मानव को आगे बढ़ने की प्रेरणा देते रहते हैं। प्रायः मनुष्य निरुद्देश्य कुछ भी नहीं करता है। कर्म के द्वारा वह विश्व में कुछ ऐसे चिह्न भी छोड़ जाता है जो उसके संस्कारों को पवित्र बनाते हैं, साथ ही दूसरों को अच्छे कार्य करने की प्रेरणा भी देते हैं। जब व्यक्ति या नायक के कर्म आदर्श उपस्थित करते हैं तो वे एक पवित्र परंपरा का रूप धारण कर लेते हैं। इस दृष्टि से हमें यह विचार करना है कि यदि चरित्र चित्रण का लेखक किसी भी नायक की जीवनी को लिखते समय इन तमाम महत्वपूर्ण उद्देश्यों और तथ्यों को ध्यान में रखता है तो जीवनी अपने सही रूप में सबके सामने आती है अन्यथा जीवनी का उद्देश्य मर जाता है। जीवनी लेखक को कभी-कभी तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत नहीं करना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से नायक के भावों, विचारों और कार्यों को ठेस पहुँचती है तथा जीवनी का उद्देश्य भी पूर्ण नहीं होता।

श्री प्रभाकर जी ने ‘आवारा मसीहा’ में इन सब बातों का परिपालन किया है। वे केवल अंतरदर्शी ज्ञान से ही नहीं जूझते रहे हैं, वरन् उन्होंने नायककालीन वातावरण और घटनाओं की सामाजिक पृष्ठभूमि का भी पूर्ण आकलन किया है। इससे जीवनी उद्देश्यपूर्ण बन पड़ी है। उन्होंने चरित्र नायक के चरित्र का विकास बड़ी कुशलता के साथ किया है। इसके लिए उन्होंने उस काल की परंपराओं से भी परिचय कराया है। वह अतीत की चेतना में काफी गहरे पहुँचे हैं और बड़ी योग्यता के साथ अपनी बात को स्पष्ट कर सके हैं।

3. वास्तविकता का विशिष्ट ध्यान—लेखक को चरित नायक के जीवन से संबंधित सभी जोड़-घटाओं को वास्तविक रूप में रखने का प्रयास करना चाहिए ताकि नायक के जीवन चरित को लोग निरी कपोल कल्पना न समझने लगें। जिस स्थान पर तथ्यों का जाल टूट जाए वहाँ लेखक को अनुमान (सत्य से परे नहीं) का सहारा लेना चाहिए। इस बात का ध्यान भी रखना चाहिए कि लेखक हर स्थान पर अपनी ही बात न थोपे। जीवनी को विकास देने के लिए लेखक टिप्पणी के रूप में अपनी बात रख सकता है परंतु उद्देश्य से परे उसे कुछ भी नहीं कहना चाहिए। जीवनी कला का मुख्य उद्देश्य तो यही होता है कि लेखक अपनी ओर से जो कुछ कहे, उसे वह पृष्ठभूमि में रखे। अतः लेखक के अपने विचार जितने गुप्त रहेंगे उतना ही जीवनी में ‘जीवन’ आएगा। ‘जीवन चरित’ को वास्तविक बनाने के लिए इससे अच्छी बात और क्या सोची जा सकती है?

4. प्रामाणिकता—लेखक को प्रामाणिक जीवन चरित लिखना चाहिए। इसके लिए उसे नायक की सत्य घटनाओं को संकलित करने की ओर विशेष ध्यान देना होगा। सच बातों से ‘जीवन चरित’ की आत्मा मरती नहीं है। इससे नायक प्रत्येक काल में जीवित रहता है। सच बातों को छोड़कर ‘जीवन चरित’ लिख डालने से कोई भी पाठक उसे जीवनी नहीं कहेगा। सच बातों से नायक को सम्मान मिलता है। सच बातें ही जीवन को प्रामाणिक बनाती हैं। इसके

लिए चरित लेखक को संघर्षशील होना चाहिए। उसे प्रत्येक बात बड़ी निष्पक्षता के साथ रखनी चाहिए। यह निर्विवाद सत्य है कि जहाँ निष्पक्षता और निडरता होती है वहाँ जीवनी का शरीर जीवित रहता है। जो लेखक चरित नायक के गुणों का ही बखान करते हुए, दुर्गुणों पर परदा डालते हुए आगे चलते हैं, वे अच्छे जीवनीकार कभी नहीं कहे जा सकते।

5. रुचिकर भाषा शैली का प्रयोग—जीवनी लेखक को सदैव सरल, सुबोध और रुचिकर भाषा-शैली का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि इससे जीवनी जन साधारण के लिए भी पठनीय हो जाती है। जीवनी का यह एक सशक्त पक्ष है। बिना इस पक्ष को ध्यान में रखे जीवनी लिखने का कार्य सिवाय पांडित्य बघारने के और कुछ नहीं होगा। एक सफल जीवनी लेखक वही है जो चलताऊ भाषा का प्रयोग करता है। साथ ही जीवन की घटनाओं को थोड़े से शब्दों में व्यक्त करने की क्षमता भी लेखक में होनी चाहिए परंतु इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि विचारों और भावों को किसी भी सीमा तक हानि न पहुँचे। भाषा को सजाकर रखने में लेखक की सार्थकता है।

6. कल्पना और अनुभूति का प्रयोग—जीवन चरित को लिखते समय लेखक को साफ-सुथरी और सप्राण कल्पना तथा आत्मपरक अनुभूति का प्रयोग करना पड़ता है क्योंकि कल्पना और अनुभूति जीवनी कला के प्राण हैं। इनका प्रयोग जीवनी को इतिहास बनने से बचाता है और कौशल का परिचय देता है। जिस लेखक के पास यह दोनों तत्व नहीं होते वह उच्चकोटि की जीवनी लिखने में असमर्थ रहता है। इस दृष्टि से यह बात भी स्मरणीय है कि कल्पना का प्रयोग उसी सीमा तक करना चाहिए जहाँ तक उसकी आवश्यकता हो। कल्पना का हर जगह प्रयोग करने से बचना चाहिए। जीवनी को अधिक कल्पनाशील बना देने से चरित नायक का चरित यथार्थ से परे हो जाता है। अतः सत्य के धरातल पर कल्पना सम्मत ढाँचा खड़ा करने में कोई हानि नहीं है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. जीवनी में विशिष्ट व्यक्ति के जीवन की गीली मिट्टी को सुखाकर एक में भरा जाता है।
2. कल्पनाशीलता ही जीवनी चरित नायक को पुनः देती है।
3. कर्म ही मनुष्य के व्यक्तित्व का करता है।

1.3 जीवन वृत्तांत के आधार पर लेखक द्वारा साहित्य की मर्मज्ञता की व्याख्या

1. जीवनी का नायक: विशेष व्यक्ति—जीवनी का नायक एक प्रकार से जीवित व्यक्ति होता है जो अपने जन्मकाल से लेकर मृत्यु पर्यंत तक ऐसे विशिष्ट कार्य करता है जो उसे महत्वपूर्ण व्यक्ति बना देते हैं। इसलिए लेखक उसका चरित्र चित्रण नायक की तरह करता है न की देवलोक के देवता की तरह। लेखक उसका तथ्यों के आधार पर वर्णन करता है। ऐसा व्यक्ति राजनीतिज्ञ, साहित्यकार, वैज्ञानिक आदि कुछ भी हो सकता है। जीवनी लेखक जब उस चरित नायक के व्यवहार, घटनाओं और आचरण का उल्लेख करता है तो उसे क्रमशः अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। वह उन समस्याओं पर विजय प्राप्त करता हुआ अपने कार्य में मग्न हो जाता है और फिर एक दिन पाठकों को पठनीय कृति सौंप देता है। यहाँ हम ‘आवारा मसीहा’ के विश्वविख्यात नायक से संबंधित लेखक की कला की समीक्षा कर रहे हैं। इस विख्यात उपन्यासकार की जीवनी को लिखने में लेखक ने अपने कीमती चौदह वर्ष व्यतीत किए क्योंकि शरत के जीवन-चरित को लिखना आसान काम नहीं था। वह एक ऐसा व्यक्ति था जो अतीत में खो गया था और जिसके जीवन की घटनाओं की वास्तविकता को खोजना हँसी खेल नहीं था क्योंकि शरच्चंद्र बड़े विचित्र व्यक्ति थे। उनसे संबंधित बहुत-सी बातें लोगों की जबान पर थीं। कुछ का आधार उनकी कृतियों में खोजा जा सकता था। उनके बारे में बहुत सी किवदंतियाँ भी प्रचलित थीं जिन पर लिखना या कोई यथार्थ बात कहना सरल काम नहीं था। दूसरे, शरत बाबू एक ऐसे व्यक्ति थे जो हजारों कल्पनाओं, रहस्यों, मिथ्याचारों और भ्रांतियों से घिरे हुए थे। न तो कभी एक स्थान पर बँध कर रहे और न कभी किसी को उन्होंने अपने बारे में कुछ

भी विस्तार से बताया। वे लोगों को अपनी बनाई गल्पें सुनाते रहते थे। लेकिन उनके कहने का ढंग इतना सुंदर होता था कि लोग समझते, जैसे यह सचमुच की बात बता रहा है।

एक बार कुछ लोग उनके पीछे पड़ गए कि वे अपने जीवन के बारे में कुछ अवश्य बताएँ। इस पर उन्होंने कहा कि लेखक और पानी की गति एक समान समझनी चाहिए। इसलिए लेखक के व्यक्तिगत जीवन के बारे में कुछ भी पूछना कोरे कागज के समान है। वह लेखक है इसलिए यदि वह अपने विषय में कुछ नहीं बताता है तो भी लोगों को उसकी रचनाएँ पढ़कर उसके बारे में बहुत कुछ जान लेना चाहिए। यदि पाठक खोजेगा तो लेखक का जीवन उसकी रचनाओं में से झाँकता हुआ दिखाई देगा। सोचो, क्या लेखक के जीवन का यह वास्तविक परिचय नहीं है? यही कारण है कि विज्ञ पाठक उसके लेखकीय जीवन और उसके वास्तविक जीवन दोनों को जरा से इशारे में ही समझ जाते हैं। दोनों अलग-अलग भी हैं और एक भी हैं। बस यही समझ लो कि शरत ने जो कुछ लिखा वही 'वह' है कुछ नहीं। इसके बाद कभी किसी जिज्ञासु पाठक ने उनसे कुछ नहीं पूछा।

अब हम शरत के साहित्य को छान कर आत्मसात करने का प्रयास करेंगे तो पाएँगे कि शरत बाबू ने अपने लेखकीय कार्य से अपने विषय में सबकुछ बता दिया है। वे असलियत में क्या थे? इस रहस्य को खोलने में शायद वे अपना अपमान समझते थे। यही कारण है कि उन्होंने अपने बारे में कभी किसी को कुछ नहीं बताया। शायद वे कभी प्रसिद्ध होना नहीं चाहते थे। उन्होंने काफी लिखा लेकिन कभी इस बात का प्रयत्न नहीं किया कि उनकी रचनाएँ ठीक समय पर प्रकाशित हों। उनकी सभी रचनाओं का प्रकाशन उनके मित्रों द्वारा ही संभव हो सका। यदि उनके मित्र उनको साहित्यिक जगत में न लाते तो वे अंधकार में खोए रहते या फिर उनका अंत रंगून जैसे देश में ही हो जाता। यही कारण है कि उनकी प्रतिभा को आलोकित करने का श्रेय उनके मित्रों को ही जाता है। एक विद्वान ने उनके बारे में लिखा है, "शरतचन्द्र बड़े शर्मिले स्वभाव के थे। इसी कारण वे अपनी काल में सदैव अपनी ख्याति से बचते रहे। शायद वे बराबर इस कारण लिखते रहे कि मृत्यु के उपरांत उनका कृतित्व लोगों के सामने आएगा और तब सबको बड़ा अजूबा सा लगेगा। शायद उनके लेखन कार्य को देखकर लोग उनसे कुछ सीख सकेंगे। इसके साथ ही शरत बाबू ने ऐसा साहित्य दिया जो जीवन को निकट से छूने वाला है। ऐसे साहित्यकार कम ही हुए हैं जो जीवन की वास्तविकताओं की गाँठ सत्य की धरती पर खोलते हैं। शरतचंद्र इस क्षेत्र में अपना उदाहरण स्वयं हैं।"

शरत बाबू का जीवन भी बड़ी अनोखी घटनाओं से भरा हुआ है। वह एक ऐसे पिता की संतान थे जो नदी की धार की तरह इधर से उधर घूमता ही रहा। उनकी माता का जीवन पेट के लिए चून जुटाने, तन ढकने के लिए वस्त्र जुटाने और शरत बाबू के लिए फीस जुटाने में कटता था। उनको अपने मायके से ही सहायता मिलती थी। इन सब बातों का सीधा प्रभाव बालक शरत पर पड़ना स्वाभाविक था। वह बाल्यकाल से ही शरारती स्वभाव लेकर इस धरती पर अवतरित हुए थे। इसी कारण उनकी इच्छा स्वतंत्र वातावरण में जीने की थी। चूँकि पिता किसी एक स्थान पर बँधकर नहीं रहे और न उन्होंने बालक की शिक्षा-दीक्षा पर विशेष ध्यान दिया। अतः स्वाभाविक था कि शरत की पढ़ाई में बाधा पड़ती रही। परंतु शरत बाबू ने तीक्ष्ण बुद्धि पाई थी। वे किसी बात को एक बार समझ लेते तो फिर उसे जीवन भर नहीं भूलते थे। अपनी इसी विलक्षण स्मृति और बुद्धि के कारण वे प्रत्येक कार्य बड़ी समझदारी से करते थे। कक्षा में भी उनके अध्यापक उनके परिश्रम और लगन की प्रशंसा करते थे। पढ़ाई-लिखाई के मामले में शायद ही उनको कभी दंड मिला हो। कक्षा अध्यापक के अलावा अन्य अध्यापक भी उनसे प्रभावित थे। अचानक एक-एक करके जब उनके माता-पिता को नियति ने उठा लिया तो घर-गृहस्थी का सारा भार उनके कंधों पर आ पड़ा। ऐसी अवस्था में वे अपने छोटे भाई-बहनों को नाना-नानी के पास छोड़कर जीवकोपार्जन हेतु रंगून चले गए। वहाँ उनको पचास रुपए महीने की एक नौकरी मिल गई। इसके साथ ही वे लेखन कार्य भी करते रहे। उनका हृदय बड़ा कोमल था। वे फूल की तरह कोमल और सूर्य की तरह स्पष्ट थे। दूसरों के दुख देखकर वे बड़ी जल्दी उसकी सहायता करने में जुट जाते थे। रंगून में उन्होंने एक स्त्री से विवाह किया और प्रकृति ने उनको एक बच्चा भी दिया। परंतु उनके भाग्य में बालक का सुख नहीं लिखा था अतः बालक सामान्य सी बीमारी में और पत्नी प्लेग के प्रकोप में चली गई शरत बाबू ने धीरे से एक साँस भरी और छोड़ दी- 'मनुष्य अकेला आया और अकेला ही जाएगा।' शायद ये शब्द उनकी दुखी आत्मा से निकले थे।



टास्क शरत बाबू का जीवन किस प्रकार की घटनाओं से भरा हुआ था?

नोट

वह सोचने लगे, जब नियति ने मेरे पल्ले से दुख बाँध ही दिया है तो मुझे उसका सामना अपने ही ढंग से करना चाहिए। वह मदिरा के प्याले का अधरों से स्पर्श कर मदिरा की धार को घूँट-घूँट कंठ के नीचे उतारने लगे। मदिरा के साथ ही उनको अफीम गटकने की भी आदत पड़ गई। इसके बावजूद भी वे साहित्य-निर्झरणी का भी आनंद लेते रहे। वह दिनभर कार्यालय में लेखनी चलाते और रात्रि को उपन्यास, कहानी-कथा आदि जो मन में आता लिखने लगते। इसी बीच एक अनोखी घटना घटी। एक ब्राह्मण देवता से उनकी भेंट हुई। वह अपनी तरुणी पुत्री को उनके पास छोड़कर कलकत्ता खिसक लिए। शरत बाबू ने उस तरुणी को अपनी जीवन-संगिनी बनाया और उसके साथ अपना शेष जीवन बिताया।

जिस मकान में वह अपनी पत्नी के साथ रहते थे, उसमें अचानक आग लग गई। उन्होंने बड़े मनोयोग से ‘चरित्रहीन’ नामक उपन्यास लिखा था, वह आग में जल कर स्वाहा हो गया। लेकिन सचमुच वे बड़े जीवट के व्यक्ति थे। उन्होंने बड़े धैर्य से इस विषय को पी लिया और शरत बने रहे-ऐसा शरत जो सदैव ठंडी करके पीना जानता है। इसके बाद उन्होंने अन्य रचनाओं का निर्माण किया और बराबर छपने के लिए भेजते रहे। उनका प्रकाशन कलकत्ता जैसी महानगरी से निरंतर गति से होता रहा। इसी समय उनके मित्रों और प्रकाशकों ने जोर डाला कि वे कलकत्ता में आकर रहे इसलिए उन्होंने ठीक चौदह वर्ष के बाद रंगून छोड़ दिया और पत्नी सहित कलकत्ता चले आए। उस समय भारत में स्वाधीनता का आंदोलन खुलकर चल रहा था। अतः शरत बाबू ने भी उसमें ऊँची आवाज से भाग लिया। उन्होंने भारत की स्वतंत्रता के विषय पर ‘पाथेर दावी’ नामक एक अभूतपूर्व रचना लिखी जिसे अंग्रेज सरकार ने अपने नियंत्रण में ले लिया। लेकिन इससे शरत जरा भी नहीं घबराए। वे गुप्त रूप से क्रांतिकारियों का साथ देते रहे क्योंकि वह गरम दल को स्वीकार करने वाले व्यक्ति थे। उनका कहना था कि बिना क्रांति के अंग्रेज भारत को छोड़कर कभी नहीं भाग सकते। क्रांति में सच्चाई होती है और वार्तालाप में राजनीति। अतः शरतचंद्र क्रांति का समर्थन करते थे।

इस समय तक शरत बाबू अपनी रचनाओं के कारण प्रसिद्धि पा चुके थे। कुछ लोगों का विचार बना कि उनको रवींद्र बाबू की तरह ‘नोबल पुरस्कार’ मिलना चाहिए। लेकिन शरत बाबू झूठी ख्याति के लिए कभी इधर से उधर नहीं दौड़े वह कहते थे कि मैं जो कुछ लिखता हूँ अपने देश और समाज के लिए लिखता हूँ। चूँकि वह मदिरा पान और अफीम खाने की आदत को अभी तक नहीं छोड़ पाए थे इसलिए वह बीमार रहने लगे। डॉक्टरों ने उनका परीक्षण किया तो पता चला कि उनको कैंसर है। इसी जानलेवा कैंसर की शाखाएँ जब उनके शरीर में फैलीं तो वह इस देह को छोड़कर अनंत में मिल गए।

प्रभाकर जी ने शरत बाबू के चरित का वर्णन बड़े मनोयोग से किया है। उनके रूप-रंग, उनके व्यक्तित्व, कृतित्व, उनके विचार, अनुभव, उनका स्वभाव और प्रकृति शक्ति आदि का सजीव वर्णन लेखक ने इस ढंग से किया है, मानो पाठकों के सामने ही सारी बातें हो रही हैं। इस दृष्टि से हम प्रभाकर जी की जीवनी कला में विविधता, कलात्मकता, मनुष्य के हृदय की सच्चाई आदि को देखते हैं। जीवनी के तत्वों को सजाने में उन्होंने अपनी अपूर्व क्षमता का परिचय दिया है। चरित नायक के कार्यों को जीवन मूल के साथ कुशलता से जोड़ा है। इसी कारण लेखक शरत की दयालुता और परदुख कातरता को लेखबद्ध करने में सफल रहे हैं। सचमुच वह दृश्य कितना विचित्र होगा जब घर धू-धू करके जल रहा होगा और जिसके साथ नायक की पुस्तकें और पांडुलिपियाँ भी राख में बदल रही होंगी। और जिसे देखकर नायक के मुख से दुःख भरे शब्द निकले होंगे—‘अब क्या किया जा सकता है?’ लेखक ने शरत के इन जैसे मनोभावों को बड़े सुंदर ढंग से व्यक्त किया है।

शरतचन्द्र पढ़ने और लिखने दोनों कार्यों में रुचि लेते थे। यही कारण था कि उन्होंने एक विदेशी व्यक्ति से सैंकड़ों पुस्तकें थोड़े से रुपयों के बदले ले ली थीं फिर उन पुस्तकों को बड़े करीने से घर की अलमारियों में सजाया था।

उन्होंने बड़े परिश्रम से कुछ चित्रों को भी बनाया था। साथ ही 'चरित्रहीन' जैसी पुस्तक लिखने में उन्होंने न जाने कितनी रातें जागकर काटी थीं लेकिन नियति ने अपने मुख की ज्वाला में सबकुछ निगल लिया। क्या शरत बाबू के वश की बात थी कि वे उस आग को शांत कर अपनी पाण्डुलिपि को बचा लेते? शायद नहीं, इसी कारण वे हाथ बाँधे खड़े रहे और भीतर ही भीतर दुखभरे आँसू पीते रहे। बड़ी मुश्किल से वे कुछ पुस्तकें, अपनी प्यारी पत्नी, पक्षी और वफादार कुत्ते को बचा सके। उसी समय उन्हें एक व्यक्ति के चीखने चिल्लाने की आवाज सुनाई पड़ी। वह चौंक गए। उन्हें पता चला कि आग की लपटों में उसकी बकरी घिर गई है। शरत ने तुरंत जलते हुए घर में छलांग लगा दी और बकरी को लेकर आग से बाहर निकल आए। उनके बाहर निकलते ही वह मकान भरभरा कर धराशायी हो गया। इस दृश्य को देखकर लोग काँप उठे। काश! दो क्षण पहले यह घर दह जाता तो क्या होता? इस प्रकार शरत बाबू के जीवन की छोटी-छोटी बातों में जो बड़प्पन के भाव तैर रहे हैं उनको लेखक ने बड़े करीने से अपनी पुस्तक में सजाया है। एक बार उन्होंने किसी मित्र के घर पर भोजन करते समय बाहर सड़क पर भूखे कुत्तों को खड़े देखा। उनसे कुत्तों की दयनीय दृष्टि देखी न जा सकी। उन्होंने अपना भोजन कुत्तों को खिला दिया। इस पर उनके मित्र नाराज हो गए। पर शरत बाबू ने इसकी चिंता नहीं की। इस प्रकार शरत बाबू दया और धर्म की जीती-जागती मूर्ति थे। उनके प्रत्येक कार्य में दया, सहानुभूति, परोपकार आदि के भाव भरे रहते थे।

2. सामाजिक पृष्ठभूमि का परिपूर्ण आकलन—प्रभाकर जी की रचनाओं में वातावरण और परिस्थितियों का पूर्ण रूप से आकलन हुआ है। उन्होंने सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों का सच्चा विश्लेषण किया है। शरत बाबू ने जिन परिस्थितियों का सामना करते हुए अपना जीवन काटा उनका मूल्यांकन प्रभाकरजी ने यथार्थ के धरातल पर किया है। शरत बाबू घोष परिवार के मकान की उत्तर दिशा में गंगा जी के निकट रहते थे। उनका घर अंधकार में डूबा रहता था क्योंकि मकान के आसपास नीम, करौंदों, आदि के वृक्ष अपनी घनी छाया करते रहते थे। उस स्थान पर तरह-तरह की लताएँ फैली रहती थीं जिनमें से होकर भीतर जाना एक प्रकार से कठिन था। शायद ही कोई विचारक सोच सकता कि इस झुरमुट के पीछे किसी साहित्यकार का मकान है। शरत बाबू बड़ी सावधानी से लताओं को हटाकर मकान के भीतर प्रवेश पा जाते थे। भीतर सूर्य की किरणें जैसे-तैसे प्रवेश पा जाती थीं। इस प्रकार शरत का निवास स्थान बड़े विचित्र वातावरण के बीच था। प्रभाकरजी ने इस सुखद वातावरण का चित्रण बड़े सुंदर शब्दों में किया है। जैसे—

“नाना लताओं ने उस स्थान को ऐसे घेर रखा था कि मनुष्य का उसमें प्रवेश करना कठिन था। बड़ी सावधानी से एक स्थान की लताओं को हटाकर शरत उसके भीतर गया। वहाँ थोड़ी-सी साफ-सुथरी जगह थी। हरी-भरी लताओं के भीतर सूर्य की उज्ज्वल किरणें छन-छनकर आ रही थीं और उनके कारण स्निग्ध हरित प्रकाश फैल गया था। देखकर आँखें जुड़ने लगीं और मन गदगद होकर मानो स्वप्नलोक में पहुँच गया।”

प्रभाकरजी ने उस समय के सामाजिक वातावरण का चित्रण इन शब्दों में किया है—

“देवानंदपुर बंगाल का एक साधारण सा गाँव है। हरा-भरा, ताल-तलैयाँ, नारियल और केले के वृक्षों से पूर्ण। मलेरिया की प्रचुरता भी कम नहीं है। नवाबी शासन में यह फारसी भाषा की शिक्षा का केंद्र था। इसी गाँव में 15 सितंबर 1876 ई० शुक्रवार की संध्या को शरत का जन्म हुआ था। यहीं उसका बाल्यकाल अत्यंत अभाव में आरंभ हुआ। माँ न जाने कैसे गृहस्थी चलाती थी। जानती थी पति कैसे हैं? उनसे शिकवा-शिकायत व्यर्थ है। सार्थक यही है कि घर की शोभा बनी रहे। उन्होंने कभी न गहनों की माँग की, न कीमती पोशाक की ही। आत्मोत्सर्ग ही मानों उनका नाम था। जब भागलपुर में वे रहती थी तब चाचाओं के इतने बड़े परिवार में उन्हीं का अधिकार था कि सब माँओं के बच्चों को अपनी छाती में छिपाकर उनकी देखरेख करें। कौन कब आएगा? कौन कब जाएगा? किसको क्या और कब खाना है? ऐसे असंख्य प्रश्नों को सुलझाने में उन्हें साँस लेने की फुरसत नहीं मिलती थी।”

एक उदाहरण यह भी दृष्टव्य है, “जिस समय शरतचंद्र का जन्म हुआ वह चहुँमुखी जागृति और प्रगति का काल था। 1857 ई० के स्वाधीनता संग्राम की असफलता और सरकार के तीव्र दमन के कारण कुछ दिन शिथिलता अवश्य दिखाई दी थी परंतु वह तूफान के पूर्व की शांति जैसी थी। शीघ्र ही क्रांति का स्वर फूटने लगा। साहित्य में इस स्वर

की सबसे पहले अभिव्यक्ति हुई बंकिमचंद्र के ‘आनंदमठ’ में। इसी उपन्यास ने आधुनिक बंगाल को जन्म दिया जो कालांतर में सारे देश की प्रेरणा बन गया।”

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. ‘आवारा मसीहा’ को लिखने में प्रभाकर जी ने कितने वर्ष व्यतीत किए?

(क) चौदह	(ख) सौलह
(ग) बारह	(घ) इनमें से कोई नहीं।
5. लेखक के व्यक्तिगत जीवन के बारे में कुछ भी पूछना किसके समान है?

(क) कोरे पन्ने	(ख) कोरी किताब
(ग) कोरे कागज	(घ) इनमें से कोई नहीं।
6. शरतचंद्र की पत्नी कौन-सी बीमारी के प्रकोप से चल बसी?

(क) कैंसर	(ख) प्लेग
(ग) ताऊन	(घ) इनमें से कोई नहीं।

3. वास्तविकता का विशिष्ट ध्यान—लेखक को निष्पक्ष रूप से चरित नायक के विषय में लिखना चाहिए। इसमें वह अपने विचारों को भी पाठकों के सामने रखता हुआ चलता है। लेकिन ये विचार परिपक्व होने चाहिए। ‘आवारा मसीहा’ में श्री विष्णु प्रभाकर पाठकों को अपने उदात्त विचारों के दर्शन कराते हुए आगे बढ़ते हैं। लेखक ने इस विशिष्टता की ओर ध्यान देते हुए अपने विचार इन शब्दों में रखे हैं, “बंगला साहित्य में निश्चय ही उनकी अनेक प्रामाणिक जीवनियाँ प्रकाशित हुई होंगी। लेख, संस्मरण तो न जाने कितने लिखे गए होंगे। वहीं से सामग्री लेकर यही छोटी-सी जीवनी लिखी जा सकेगी। लेकिन खोज करने पर पता चला कि प्रामाणिक तो क्या, सही अर्थों में उसे जीवनी कह सकें, वैसी पुस्तक बंगला भाषा में कोई नहीं है।” ऐसी दशा में एक अनोखे किंतु महत्वपूर्ण व्यक्ति की जीवनी लिखना हँसी-खेल नहीं है। जब लेखक को सामग्री नहीं मिल पाती और वह कुछ लिखकर आगे बढ़ने की चेष्टा करता है तो वह सोचता है कि मैं यह कार्य पूर्ण कर भी पाऊँगा या नहीं। इसी बात को प्रभाकर जी ने अपने शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया है, “जीवनी लिखना निःसंदेह कठिन काम है। यूँ देखने में लगता है कि वह कुछ अद्भुत असाधारण घटनाओं और कुछ क्रांतिकारी विचारों का समुच्चय है। किसी के जीवन को समझने के लिए कुछ महत्वपूर्ण घटनाएँ आवश्यक अवश्य हैं, पर अनिवार्य नहीं। अनिवार्य है उन घटनाओं और विचारों के पीछे रहने वाले प्रेरणा स्रोत। जो दिखाई देता है, वह सत्य नहीं होता। सत्य को पाने के लिए गहरे उतरना होता है और उस उतरने में जहाँ आस्था का प्रकाशन है, वहीं तटस्थता का उससे भी अधिक है। यह सर्वोपरि अनिवार्यता है।”

श्री प्रभाकर ने वास्तविकता को जानने के लिए शरत बाबू के निवास स्थान की यात्रा की। उनसे संबंधित व्यक्तियों से बहुत-सी बातों को पूछा। इस प्रकार वास्तविकता का पता लगाने के लिए उन्होंने दूरी को भी निकट ही समझा। उन्होंने लिखा है कि शरत बाबू मदिरा पान करने में बहुत दक्ष थे। “वह देशी शराब से लेकर विदेशी शराब तक पीने में विशेष रुचि लेते थे। कभी-कभी तो सीधे बोतल में मुँह लगा लेते थे। वह शैंपेन में चावल डालकर खा लेते थे।” सचमुच शरत बाबू एक विलक्षण व्यक्ति थे। लेकिन वह कभी सार्वजनिक रूप से शराब या अफीम नहीं लेते थे। इसी वास्तविकता को श्री प्रभाकर जी ने अपने शब्दों में इस प्रकार लिखा है, “इस बात के हमारे सामने प्रमाण है कि शरत शराब पीते थे, लेकिन जैसा कि उनके बारे में प्रचलित हो गया था, वैसे पियक्कड़ वे कभी नहीं थे।” इतनी प्रामाणिकता के साथ जीवन के सूत्रों को जोड़ना प्रभाकर जी के ही बूते की बात थी।

4. प्रामाणिक सृजन—जीवनी लेखक का यह कर्तव्य है कि वह जोड़-तोड़ के द्वारा जीवनी साहित्य का सृजन न करे। हम जानते हैं कि सत्य कटुवा होता है और बहुत से जीवनी लेखक प्रसिद्ध नायक के चरित्र का निर्माण करते

नोट

समय उसे छिपाने की चेष्टा करते हैं परंतु प्रभाकर जी ने कड़ुवे सच को भी जीवनी में लिखा है। उन्होंने पाठकों के सामने चरित्र नायक की प्रामाणिक बातें ही प्रदर्शित की हैं। जीवनी लिखना उतना ही कठिन है जितना बिना दाढ़ वाले व्यक्ति के लिए कड़े चने चबाना क्योंकि जीवनी का कार्य जीवन की सही छाया होती है। उसमें सत्य और यथार्थ के ताने-बाने होते हैं। लेखक चरित्र नायक के चरित्र को इस ढंग से रखना चाहता है जिससे उसकी न तो प्रामाणिकता नष्ट हो और न ही उसकी ऐतिहासिकता पर आँच आए। इसके लिए लेखक को जीवनी से संबंधित सामग्री इकट्ठी करने के लिए कई यात्राएँ भी करनी पड़ती हैं। श्री विष्णु प्रभाकर जी ने 'आवारा मसीहा' से संबंधित सत्य का पता लगाने के लिए संदर्भित ग्रंथों से बहुत कुछ लिया है। इसकी प्रामाणिकता हेतु उन्होंने संदर्भ ग्रंथों की सूची हाशिए में दे दी है। इससे उनकी प्रामाणिकता पर संदेह नहीं किया जा सकता। कुछ बातों को उन्होंने पत्रों और डायरी के द्वारा प्राप्त किया है।

एक बार शरत बाबू ने प्रेमनाथ को 'चरित्रहीन' उपन्यास की पाण्डुलिपि भेजते हुए लिखा—“तुमने जो कुछ लिखा है वह तुम्हारी दृष्टि में सत्य हो सकता है पर जो आदमी मेस की दासी को आरंभ में ही ला खड़ा करने का साहस करता है वह जान-बूझकर ही करता है। तुम उसका अंत न जानकर उसको अर्थात् सावित्री को मेस की दासी करके देखते हो। प्रमथ, हीरे को काँच कहकर भूल करते हो। काउंट ताल्सताय का 'रेजेक्शन' पढ़ा है? उनकी यह पुस्तक एक साधारण वेश्या को लेकर है। हमारे देश में अभी तक उस कला को समझने का समय नहीं आया है। मैं अनावृत्त कहकर आर्ट से घृणा नहीं कर सकूँगा। लेकिन जिसमें यह ठीक अर्थों में नैतिक हो ऐसा उपसंहार करूँगा। इससे पहले यदि कोई इस विषय में जरा भी सतर्क कर देता यानि कहता कि दासी को लेकर शुरू करना ठीक नहीं है तो हो सकता है, मैं दूसरे रास्ते पर जाने की चेष्टा करता। अब बहुत देर हो चुकी है।

सचमुच इससे अधिक प्रामाणिक बात और क्या हो सकती है? लेखक ने यथार्थता का दिग्दर्शन कराने के लिए एक स्थान पर लिखा है, “मेरे बारे में जानना चाहते हो। संक्षेप में इस प्रकार है कि मैंने पढ़ा काफी है, पर लिखा क्या है, कुछ भी नहीं...जो पक गया है उसको बाँधे रखना दूसरों के लिए देखने में अच्छा लग सकता है, लेकिन जिस आदमी के शरीर में घाव है उसको कोई सुविधा नहीं होती। केवल सौंदर्य-सृष्टि के अतिरिक्त उपन्यास लेखक का और एक महत्वपूर्ण काम है। वह काम यदि घाव को देखना है तो वैसा करना ही होगा।”

इस प्रकार लेखक ने यही प्रमाणित किया है कि शरत बाबू ने हृदय से अपने साहित्यकार को प्राप्त कर लिया था।



टास्क शरतचंद्र के निवास का चित्रण प्रभाकर जी ने किस प्रकार किया है?

5. रोचकभाषा और शैली—कोई भी साहित्यिक रचना भाषा के ढाँचे पर खड़ी की जाती है। भाषा एक ऐसा तत्त्व है जिसके बिना रचना का कार्य आगे कभी नहीं बढ़ सकता। परंतु भाषा ऐसी होनी चाहिए जो रोचक, भावपूर्ण, हृदयग्राही, सुगठित, मँजी-धुली, जन साधारण की समझ में आने वाली तथा सार्थक हो। इसलिए जीवनी साहित्य की भाषा जीवन को बुनते हुए चलती है—ऐसा विद्वानों का मत है। जीवनी चरित्र में जो धारा प्रवाह, गतिशीलता, विश्लेषण सूक्ष्मता और संश्लिष्टता होती है वह भाषा के द्वारा खुलकर सामने आती है। इसलिए जीवनी में लेखक को कहीं तो सामान्य चलताऊ शब्दों का प्रयोग करना पड़ता है और कहीं अलंकृत और मुहावरेदार भाषा शैली को लिखना पड़ता है। बिना ऐसा किए जीवनी का मतलब स्पष्ट नहीं हो पाता।

'आवारा मसीहा' की भाषा-शैली में ऊपर लिखे गुण मौजूद हैं। प्रभाकर जी की भाषा सामान्य पाठक की समझ में आने वाली है। उसमें मुहावरे, सूक्तियाँ और अलंकार हैं। भाषा को बोधगम्य और सहज बनाने के लिए प्रभाकर जी ने कहीं-कहीं लंबे वाक्यों का सृजन किया है। इस दृष्टि से भाषा ऐसी भी है कि जिसके विषय में पाठक कुछ क्षण तक सोचता रह जाता है। भावात्मक और समीक्षात्मक भाषा शैली भी कुछ स्थानों पर देखने को मिलती है।

नोट

6. **कल्पना का सृजनात्मक प्रयोग**—जीवनी लेखक को इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि चरित नायक जीवित है या स्वर्गवासी। यदि वह गोलोकवासी हो चुका है तो उसके चरित्र को कल्पना का मिश्रण देते हुए इस ढंग से लिखना पड़ता है जिससे पता चले कि वह जो कुछ कहना चाहता है वह सामने ही घटित हो रहा है। अतः कभी-कभी लेखक को घटनाओं को नाटकीय रूप देने के लिए सुनी-सुनाई बातों को भी नमक-मिर्च मिलाकर लिखना पड़ जाता है। प्रभाकर जी ने ‘आवारा मसीहा’ में संवादों का उल्लेख करते समय अनेक स्थानों पर कल्पना को आगे रख दिया है। एक उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाएगी—

और यह कहते-कहते उसके आँचल में से मूड़ी खोलकर खाने लगा। वह खाता रहा और धीरू पण्डित जी की बात सुनती रही। अचानक वह बोला, “पानी लाई हो?”

धीरू ने कहा, “पानी तो नहीं लाई।”

शरत बिगड़ कर बोला—“तो अब लाओ जाकर।”

धीरू को यह अच्छा नहीं लगा, कहा, “अब मैं नहीं जा सकती। तुम पी आओ।”

“मैं यहाँ से नहीं जा सकता। तुम्हीं जाकर ले आओ।”

धीरू नहीं उठी। शरत ने गुस्सा होकर कहा, “जाओ, मैं कह रहा हूँ ना।”

धीरू अब भी चुप रही। तब शरत ने उसकी पीठ एक घूँसा मारा। कहा, “जाएगी की नहीं?”

धीरू रो पड़ी। एक दम उठते हुए बोली, “मैं अभी जाकर तुम्हारी माँ से सब कुछ कह दूँगी। यह भी कहूँगी कि तुम हुक्का पी रहे हो।”

“कह दे, जा मरा।”

इस प्रकार लेखक ने जीवनी के प्रत्येक भाग में कल्पना का थोड़ा बहुत सहारा अवश्य लिया है। इसके साथ ही अन्य लेखकों के समान प्रभाकर जी की भी मान्यता है कि शरत बाबू ने ‘श्रीकांत’, ‘देवदास’ आदि उपन्यास अपने जीवन को ही आधारित मानकर लिखे हैं। लेकिन वास्तविकता क्या है, यह बात आज भी रहस्य के गर्भ में छिपी है क्योंकि साहित्यकारों के पास इसका कोई प्रमाण नहीं है कि ऐसा वास्तव में ही है। कुछ भी सत्य हो लेकिन प्रभाकर जी ने सत्य के साथ कल्पना का जो पुट दिया है वह सत्य-सा ही लगता है।

एक स्थान पर प्रफुल्लचंद्र राय और शरतचन्द्र के विषय में लेखक ने कल्पना का सहारा लेते हुए घटना को यों मोड़ दिया है—“सुनते ही प्रफुल्लचंद्र राय ने चश्मे के ऊपर से शरतचन्द्र को एक बार अच्छी तरह देखा। फिर उठकर तुरंत द्वार पर आए और अपने प्रिय शिष्यों के नाम ले-लेकर पुकारने लगे। क्षण भर में वहाँ एक छोटी-सी भीड़ जमा हो गई। उनको लेकर सेनापति की तरह वह आगे-आगे घर में घुसे। शरत बाबू की ओर उँगली से दिखाकर बोले, “देखते हो, उधर कौन बैठा है? ये हैं श्री शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय। उधर देखो उनकी सब पुस्तकें हैं और आज स्वयं भी आए हैं,” अच्छी तरह देखो। पैरों की धूल लो।”

उसके बाद शरतचन्द्र के पास आकर बैठ गए और एक अंतरंग मित्र की तरह बातें करने लगे। बोले, “आपकी पुस्तकें पढ़कर कितनी बार बातचीत करने की इच्छा हुई है। आज इतने दिन बाद वह पूरी हुई।”

उपर्युक्त कल्पना के द्वारा ‘आवारा मसीहा’ का जीवन चरित यथार्थ के साथ-साथ विकासोन्मुखी होता है। यदि विष्णु प्रभाकर निरे यथार्थ को लेकर जीवनी लिखने का कार्य करते तो भय था कि पुस्तक इतिहास बन जाती।

1.4 प्रभाकर जी के कृतित्व के आधार पर ‘आवारा मसीहा’ की समालोचना—

जीवनी लेखक को अन्य बहुत सी बातों पर भी ध्यान देना पड़ता है। जैसे, जीवनी लेखक को सूझ-बूझ वाला, तुरत-फुरत निर्णायक, कला को गहराई से समझने वाला तथा गंभीर को सरल बनाने वाला होना चाहिए। ये बातें ऐसी

नोट

हैं जो जीवनीकार के लिए अलग से मानी जाती हैं क्योंकि बिना इनके जीवनी के अनेक तत्व खुल नहीं पाते हैं और अधूरी बात पूर्ण नहीं हो पाती है। उदाहरण के लिए यदि कोई जीवनीकार किसी ऐसे जीवन चरित की रचना करना चाहता है जिसका नायक एक दार्शनिक रहा है किंतु वह रूढ़िवादी और अशिक्षित लोगों के बीच रहता था, तब बाद में ऐसे लोगों से जीवनी के सूत्र प्राप्त करना अत्यधिक कठिन कार्य होगा। परंतु यदि जीवनीकार अनपढ़ व्यक्तियों के मन को मोड़ना जानता है तो वह उनको अपना बनाकर सारे रहस्य हासिल कर सकता है। प्रभाकर जी को 'आवारा मसीहा' लिखते समय ऐसे ही कुछ लोगों से पाला पड़ा, किंतु वे जरा भी नहीं घबराए और उन्होंने अतिरिक्त विशेषताओं को अमल में लाकर जीवनी संबंधी अनेक बातें पता लगा ली। प्रभाकर जी ने चरित नायक की बहुत सी बातों को विशेष रूप से लिखा है जिनका यहाँ पर उल्लेख करना उचित होगा—

1. सामाजिक जीवन का वास्तविक दृष्टिकोण,
2. उन्नत विचारों का यथार्थ चित्रण,
3. वर्णन कुशलता की सजीवता,
4. वास्तविक नर-नारियों का वर्णन,
5. असफल प्रेम की पीड़ा का वर्णन।

1. सामाजिक जीवन का वास्तविक दृष्टिकोण—लेखक ने अपनी कृति 'आवारा मसीहा' में बंगाली समाज का वास्तविक चित्रण इस रूप में किया है जैसे सारी बातें हमारे सामने ही चलचित्र के समान घटित होती हुई चल रही हैं। उन्होंने लिखा है कि जो व्यक्ति समाज को उठाना चाहता था उसको बुरी दृष्टि से देखा जाता था। स्त्रियों का समाज में परंपरागत स्थान था। वे कदम-कदम पर अपमानित की जाती थीं। उनको घर से बाहर कहीं भी जाने की आज्ञा नहीं थी। यदि धोखे से उनके ऊपर पुरुष की छाया पड़ जाती या वे पर पुरुष से बातें करते हुए देख ली जातीं तो उनके चरित्र पर कलंक का दाग लग जाता था। कुलीन स्त्रियों के लिए ही समाज में 'कुछ' समझा जाता था। यदि स्त्री अकुलीन स्वीकार कर ली जाती तो वह पापिष्ठा थी, चरित्रहीन थी, दुराचारिणी थी। ऐसी बहुत-सी लड़कियाँ थीं जिनका विवाह धनाभाव के कारण नहीं हो पाता था, इस प्रकार धर्म के मुद्दों ने जिंदों को मुर्दा बना दिया था। ऐसे समाज का असली खेवनहारा कौन था? इसे कोई नहीं जानता था। प्रभाकर जी ने ऐसे समाज का चित्रण अपने दृष्टिकोण से सत्य और यथार्थ की छलनी से छानकर पाठकों के सामने रखा है।

इतना ही नहीं जो बंगाल गाने-बजाने, नृत्य आदि में कभी सारे भारत का गुरु था उसी बंगाल के समाज में नाचना-गाना क्लब या पार्टी में सम्मिलित होना सबकुछ बुरा समझा जाता था। जो स्त्री-पुरुष परंपरागत मर्यादा को भंग करते थे उन्हें समाज से बहिष्कृत करके प्रायश्चित्त करने के लिए छोड़ दिया जाता था। इसी डर के कारण लोग समुद्री यात्रा पर जाने से भी डरते थे क्योंकि समुद्री यात्रा करने वाले को भ्रष्ट समझा जाता था।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. जीवनी लिखना उतना ही कठिन है जितना बिना दाढ़ वाले व्यक्ति का कढ़े चने चबाना।
8. शरतचंद्र ने अपनी प्रेमिका धीरू का नाम हिरण्यमयी रख दिया।
9. शरत जीवनभर असफल प्रेम की पीड़ा से तड़पते रहे।

2. उन्नत विचारों का यथार्थ चित्रण—प्रभाकर जी ने शरत की जीवनी को उन्नत विचारों से सजाया है। शरत चंद्र एक कुलीन पुरुष थे। उन्होंने विज्ञान की अनेक शाखाओं का अध्ययन किया था। इसलिए उनकी जीवनी में इस प्रकार के विचारों में संबंधित संकेतों का आना स्वाभाविक ही था। शरत के संबंध में उन्होंने लिखा है, “यह व्यंग्य भी हो सकता है और निपट सत्य भी, लेकिन इस बात के प्रमाण उपलब्ध हैं कि बचपन और यौवन में जिस प्रकार का

जीवन उन्हें जीना पड़ा था, उससे वे संतुष्ट नहीं थे। वे निचली गहराइयों से होकर ऊपर उठे। प्रारंभिक जीवन में जिस अभाव, अपमान और उपेक्षा में से गुजरना पड़ा उससे उनके कलाकार को तो बल मिला पर उनका जीवन टूट गया। जीवन संध्या में उन्हें सचमुच इस बात का दुख था कि उन्होंने आवारगी का जीवन बिताया। नाना प्रकार के वास्तविक और अवास्तविक प्रेम-प्रपंच किए?”

3. वर्णन कुशलता की सजीवता—प्रभाकर जी जीवनी के वर्णन विषय को रखने में भी सफल हुए हैं। उन्होंने बड़ी कुशलता के साथ सजीव चित्रण किया है। पात्रों के संवाद, उनके संबंध में विषय वर्णन आदि बड़ा आत्मिक और सजीव है। पढ़कर लगता है जैसे सबकुछ आँखों के सामने हो रहा है। एक उदाहरण से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है—

वहाँ एक संन्यासी रहते थे। इन्हें निस्संग उन्होंने स्वयं ही चिता निर्मित की और इस प्रकार शांति देवी का दाह संस्कार संपन्न हुआ।

शरत के शोक की कोई सीमा नहीं है। केशोर्य के उस असफल प्रेम के समान इस सदमें का भी उसके जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा। छूट गया अध्ययन, छूट गया लिखना और चित्रांकन, बस बावलों की तरह इधर-इधर घूमता रहा। इसी बीच में शिशु भी महामारी का शिकार बन गया था। वर्षों बाद अपने मित्र के युवा पुत्र की मृत्यु पर उसकी माँ से उसने दार्शनिक उपेक्षा से कहा था, “दीदी, तुम तो इतने दिन तक पुत्र-सुख देख चुकीं, मैं तो एक वर्ष भी उस सुख को नहीं भोग सका था।” पर उस दिन उसकी व्यथा का अंत नहीं था। सब कुछ लुटाकर एक बार फिर वह अकेला रह गया।

4. वास्तविक नर-नारियों का वर्णन—प्रभाकर जी ने ‘आवारा मसीहा’ में शरत के अतिरिक्त अन्य जितने भी नर-नारियों का वर्णन किया है सभी वास्तविक हैं उनके विचार, भाव, रूप आदि मनुष्यता के रस में पगे हुए हैं। एक उदाहरण से इस कथन को स्पष्ट किया जा सकता है—

तब एक दिन कृष्णदास ने कहा, “यदि आप मोक्षदा से विवाह नहीं करना चाहते तो मुझे कुछ धन दीजिए, जिससे मैं देश लौटकर इसका विवाह कर सकूँ।”

एक दिन लौटकर शरत ने मोक्षदा से कहा, “आज मैंने तुम्हारे लिए एक वर ढूँढ़ लिया है।”

मोक्षदा हठात शरत की ओर देखती रह गई। फिर उसकी आँखें भर आईं। बोली, “इस तरह की बातें करते हुए आपको अच्छा लगता है?”

शरत ने कहा, “ना-ना, मैं परिहास नहीं कर रहा और तुम्हें बुरा भी नहीं मानना चाहिए। आखिर तुम्हें विवाह तो करना ही है। जो व्यक्ति मैंने तुम्हारे लिए ढूँढ़ा है, वह तुम्हारा आदर करता है और तुम्हारे प्रति सदय भी है।”

मोक्षदा और भी विस्मित हो उठी। अटक-अटक कर उसने कहा, “मैं इस बारे में कुछ नहीं जानती। वह व्यक्ति कौन है? बिना जाने उसके बारे में क्या कह सकती हूँ?”

शरत ने शरारत से मुस्कराते हुए कहा—“तुमने उसे देखा है।”

“क्या?”

“हाँ, बहुत बार देखा है।”

उसने मोक्षदा से कहा, “आज से तुम हिरण्यमयी हुई। तुम खरे सोने के समान हो। उस पर कभी भी किसी प्रकार का मैल नहीं जम सकता। तुम्हारे अंतर के उज्ज्वल रूप को मैंने देखा लिया है। वह मेरी शक्ति बनेगा।”



टास्क शरत बाबू की असफल प्रेम-पीड़ा का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।

नोट

5. असफल प्रेम की पीड़ा का वर्णन—प्रभाकर जी ने शरत बाबू की जीवनी में इस तथ्य को भी नहीं छिपाया है कि शरत बाबू प्रेम के मामले में असफल रहे और वे जीवन भर उसी की पीड़ा को ढोते रहे। यद्यपि वे बचपन से ही एक प्रेमी जीव थे। खेल-खेल में उनका प्रेम एक कन्या से हुआ। परंतु वे धीरू नामक उस कन्या का प्रेम युवावस्था में न पा सके। शरत ने अपनी प्रेमिका की चर्चा नहीं की है परंतु उनके उपन्यासों में प्रेम की जो पीड़ा पात्रों के द्वारा उभरकर आई है उससे सीधा-सादा अनुमान लगाया जा सकता है कि शरत जीवन भर असफल प्रेम की पीड़ा से तड़पते रहे। इस कसक और इस पीड़ा को श्री प्रभाकर जी ने बड़े मार्मिक शब्दों में व्यक्त किया है—

“सृजन के इन दिनों वह आकंट प्रेम में डूबा हुआ था। इस आयु में हर युवक की आत्मा प्रेम के लिए तड़पती है। विचारों और भावनाओं का जो तूफान उस समय उसके मन और मस्तिष्क को आलोकित करता रहता है, उसकी कल्पना करना अत्यंत दुष्कर कार्य है। कितनी विभिन्नता, कैसा विरोधाभास। न सही हाड़-माँस की प्रेमिका, काल्पनिक प्रेमिका से तो यह भूमिका निभाई जा सकती है।”

“कुछ लोगों ने यह भी कहा कि शरत एक यहूदी लड़की से प्रेम करता है। कुछ लोगों ने उसे भिन्न-भिन्न लड़कियों से एकांत में बात करते या बाँसुरी बजाते भी देखा था, लेकिन आश्चर्य इस बात का था कि कोई दूसरे को इस स्थिति में नहीं दिखा सका।”

एक उदाहरण और—

“नीरदा कभी कल्पना लोक के एकांत में उसके पास ऐसे आती जैसे नींद में चल रही हो। उसे लिखते देखती रहती, बोलती नहीं शरत को यह मौन असह्य हो उठता, तब नीरदा एकाएक पास आ बैठती, कहती, सुनाओ क्या लिखा है?”

“शरत सुनाने लगता, उसकी श्वास जोर-जोर से चलने लगती। नीरदा मुस्कराती हुई अपना मस्तक उस अभागे के कंधे पर रख देती और फिर उसे होश न रहता। उसी बेहोशी में बाँसुरी बजाकर वह उसे मुग्ध कर देता। कभी उससे लड़ पड़ता और उसे छोड़कर चल देता। फिर नीरदा उसकी तलाश में निकल पड़ती, उसे ढूँढ़ लाती, अपने घर ले जाकर सबसे अच्छी शैय्या पर उसे सुलाती। उसके लिए हुक्का तैयार करती, अपने हाथों से संदेशा बना कर खिलाती।”

कभी-कभी वह उससे कहती, “तुम्हारा मेरा कोई संबंध नहीं है। तुम कुछ भी तो नहीं करते।”

“मैं...मैं कृतिकार हूँ एक दिन...”

“कृतिकार!” वह हँस पड़ती, “कृतिकार भूखे मरते हैं। आवारा, चरित्रहीन, भला तुमसे मेरी शादी कैसे हो सकती है? कुल-मर्यादा का विचार भी तो...”

“कुल-मर्यादा? मैं कुल-मर्यादा में विश्वास नहीं करता। इस लोक-दिखाऊ मर्यादा के ऊपर निर्भर करके तुम्हें दो प्राणों का नाश नहीं करना चाहिए।”

इस प्रकार नीरदा के साथ मान-मनोबल का यह कार्यक्रम चलता रहा, लेकिन कब और कहाँ, यह कोई नहीं जानता था।

सारांश—सारांश रूप में यह कहा जा सकता है कि श्री प्रभाकर जी का जीवनी लेखन का कार्य बड़ा तर्क संगत, बड़ा सजीव, बड़ा चित्रमय, बड़ा यथार्थ और बड़ा कौशलमय है। लेखक की कला की यह उत्कृष्टता और यथार्थता पाठक को कुछ सोचने-समझने के लिए विवश कर देती है।

1.5 सारांश (Summary)

- ‘आवारा मसीहा’ श्री विष्णुप्रभाकर द्वारा लिखित बंगाल के प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री शरतचन्द्र की प्रमाणिक

जीवनी है। इसमें प्रभाकर जी ने उस महान व्यक्ति के जीवन चरित का वर्णन किया है जो कुछ लोगों की दृष्टि में महामानव, मसीहा, देवता आदि था।

- जिस विशेष व्यक्ति का ‘जीवन चरित’ लिखना होता है उसे केंद्र में रखा जाता है। उससे संबंधित अन्य चरित आसपास घूमते हुए से दिखाई देते हैं।
- लेखक को चरित नायक के जीवन से संबंधित सभी जोड़-घटाओं को वास्तविक रूप में रखने का प्रयास करना चाहिए ताकि नायक के जीवन चरित को लोग निरी कपोल कल्पना न समझने लगें।
- जीवनी लेखक को सदैव सरल, सुबोध और रुचिकर भाषा-शैली का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि इससे जीवनी जन साधारण के लिए भी पठनीय हो जाती है। जीवनी का यह एक सशक्त पक्ष है।
- जीवनी का नायक एक प्रकार से जीवित व्यक्ति होता है जो अपने जन्मकाल से लेकर मृत्यु पर्यंत तक ऐसे विशिष्ट कार्य करता है जो उसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति बना देते हैं। इसलिए लेखक उसका चरित्र-चित्रण नायक की तरह करता है न की देवलोक के देवता की तरह।
- शरत बाबू का जीवन भी बड़ी अनोखी घटनाओं से भरा हुआ है। वह एक ऐसे पिता की संतान थे जो नदी की धार की तरह इधर से उधर घूमता ही रहा। उनकी माता का जीवन पेट के लिए चून जुटाने, तन ढकने के लिए वस्त्र जुटाने और शरत बाबू के लिए फीस जुटाने में कटता था।
- जिस मकान में वे अपनी पत्नी के साथ रहते थे, उसमें अचानक आग लग गई। उन्होंने बड़े मनोयोग से ‘चरित्रहीन’ नामक उपन्यास लिखा था, वह आग में जल कर स्वाहा हो गया। लेकिन सचमुच वे बड़े जीवट के व्यक्ति थे। उन्होंने बड़े धैर्य से इस विषय को पी लिया।
- शरतचन्द्र पढ़ने और लिखने दोनों कार्यों में रुचि लेते थे। यही कारण था कि उन्होंने एक विदेशी व्यक्ति से सैंकड़ों पुस्तकें थोड़े से रुपयों के बदले ले ली थीं फिर उन पुस्तकों को बड़े करीने से घर की अलमारियों में सजाया था।
- प्रभाकर जी की रचनाओं में वातावरण और परिस्थितियों का पूर्ण रूप से आकलन हुआ है। उन्होंने सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक परिस्थितियों का सच्चा विश्लेषण किया है।
- लेखक चरित नायक के चरित्र को इस ढंग से रखना चाहता है जिससे उसकी न तो प्रामाणिकता नष्ट हो और न ही उसकी ऐतिहासिकता पर आँच आए। इसके लिए लेखक को जीवनी से संबंधित सामग्री इकट्ठी करने के लिए कई यात्राएँ भी करनी पड़ती हैं।
- लेखक ने अपनी कृति ‘आवारा मसीहा’ में बंगाली समाज का वास्तविक चित्रण इस रूप में किया है जैसे सारी बातें हमारे सामने ही चलचित्र के समान घटित होती हुई चल रही हैं।
- आज से तुम हिरण्यमयी हुई। तुम खरे सोने के समान हो। उस पर कभी भी किसी प्रकार का मैल नहीं जम सकता। तुम्हारे अंतर के उज्ज्वल रूप को मैंने देखा लिया है। वह मेरी शक्ति बनेगा।
- श्री प्रभाकर जी का जीवनी लेखन का कार्य बड़ा तर्क संगत, बड़ा सजीव, बड़ा चित्रमय, बड़ा यथार्थ और बड़ा कौशलमय है। यह उत्कृष्टता और यथार्थता पाठक को कुछ सोचने-समझने के लिए विवश कर देती है।

1.6 शब्दकोश (Keywords)

- | | |
|--------------------------|----------------------------|
| 1. जगत – संसार | 2. मंजूषा – पिटारी, पिंजरा |
| 3. अतीत – बीता हुआ कल | 4. स्मरण – याद |
| 5. कंठ – गला | 6. तमाम – सारे |
| 7. किवंदंतियाँ – कहावतें | 8. जिज्ञासु – उत्सुक |
| 9. अवतरित – पैदा | 10. अधर – होंठ |

नोट

11. तरूणी – जवान युवती

12. स्वाहा – खाक

13. मनोयोग – लगन।

1.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. प्रमुख तत्त्वों के आधार पर जीवनी कला की समीक्षा कीजिए।
2. 'शरत बाबू दया और धर्म की जीती-जागती मूर्ति थे।' इस कथन पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।
3. 'आवारा मसीहा' की समालोचना अपने शब्दों में कीजिए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

- | | | | |
|-----------|---------|-------------|----------|
| 1. मंजूषा | 2. जन्म | 3. निर्धारण | 4. (क) |
| 5. (ग) | 6. (ख) | 7. सत्य | 8. असत्य |
| 9. सत्य। | | | |

1.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)



पुस्तकें आवारा मसीहा—विष्णु प्रभाकर, राजकमल एंड संस, दिल्ली।

नोट

इकाई-2: ‘आवारा मसीहा’: कथावस्तु एवं उद्देश्य

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

- 2.1 ‘आवारा मसीहा’ का कथानक
- 2.2 ‘आवारा मसीहा’ का साहित्यिक उद्देश्य
- 2.3 ‘आवारा मसीहा’ के नामकरण की सार्थकता
- 2.4 सारांश (Summary)
- 2.5 शब्दकोश (Keywords)
- 2.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
- 2.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- ‘आवारा मसीहा’ के कथासार को समझने में;
- ‘आवारा मसीहा’ के साहित्यिक उद्देश्य पर प्रकाश डालने में;
- साहित्यिक उद्देश्य के रूपों की जानकारी प्राप्त करने में;
- ‘आवारा मसीहा’ के नामकरण की सार्थकता को जानने में।

प्रस्तावना (Introduction)

‘आवारा मसीहा’ नामक कृति बंगला साहित्य के लेखक श्री शरतचंद्र चट्टोपाध्याय के जीवन पर आधारित है। यह जीवनी श्री विष्णु प्रभाकर जी ने तीन पर्वों में विभाजित की है। पहला पर्व ‘दिशाहारा’ के नाम से लिखा गया है। इस पर्व में शरत बाबू के बचपन की घटनाओं को एक सूत्र में पिरोया गया है। इस काल में शरत बाबू की इच्छाएँ उनको कभी एक स्थान पर ठहरने ही नहीं देती हैं। वे जीवन को स्थायी बनाने के लिए इधर-उधर भटकते रहते हैं। दूसरे पर्व का नाम ‘दिशा की खोज’ है। इसमें शरत बाबू के साहित्यिक जीवन का दर्शन तथा जीविका की खोज में देश-विदेश में भटकने की बातों का वर्णन किया गया है। तीसरे और अंतिम पर्व का नाम ‘दिशांत’ है। इस पर्व में लेखक ने दर्शाया है कि कैसे वह उपन्यासकार के रूप में प्रतिष्ठित होते हैं और साथ ही सामाजिक क्षेत्र में क्या-क्या क्रिया-कलाप करते हैं इसी पर्व में शरत बाबू के स्वर्गवास की घटनाओं को भी सजाया गया है।

2.1 ‘आवारा मसीहा’ का कथानक

प्रभाकर जी ने ‘आवारा मसीहा’ को निम्न तीन पर्वों में विभाजित किया है— दिशाहारा, दिशा की खोज एवं दिशान्त। तीनों पर्वों के आधार पर जीवनी का कथानक प्रस्तुत किया जा रहा है—

नोट

दिशाहारा: एक जीवन बाल्यकाल—इस पर्व में श्री विष्णु प्रभाकर ने शरतचंद्र के बाल्यकाल का चित्रण बड़े मार्मिक शब्दों में किया है। उनके पिता का नाम मोतीलाल चट्टोपाध्याय था। वे जनपद 'चौबीस परगना' के कांचड़ा पाड़ा के निकट मामूदपुर के निवासी थे। मोतीलाल जी बड़े निर्भीक और स्वच्छंद स्वभाव के व्यक्ति थे। उनका विवाह भागलपुर के केदारनाथ गंगोपाध्याय की दूसरी पुत्री भुवनमोहिनी से हुआ था। भुवनमोहिनी साधारण रूप-रंग की महिला थी। परंतु वे एक सच्चे हृदय की बात को स्वीकार करती थी। यही कारण था कि स्वतंत्र प्रकृति के साथ वे अपनी पटरी बैठाए रही। उनके पुत्र का जन्म 15 सितंबर 1876 ई. तदनुसार 31 भाद्र 1283 बंगाब्द अश्विन कृष्ण द्वादशी, सम्वत् 1933 के दिन शुक्रवार की शाम को हुआ था। माता-पिता ने इनका नाम 'शरतचंद्र' रखा। शरत का बचपन देवानन्दपुर में व्यतीत हुआ। बचपन में उनको बहुत से कष्ट उठाने पड़े। घर में खाने-पीने की चीजों की कमी रहती थी। पिता एक स्थान पर ठहर कर जीवन यापन के लिए कोई व्यापार या धंधा नहीं करते थे। उनको इधर-उधर भ्रमण करने में विशेष आनंद आता था। कभी एक कार्य को उन्होंने मन लगा कर नहीं किया। यदि कहीं किसी नौकरी में लग भी गए तो अधिक दिनों तक वे उसमें रहे ही नहीं। जरा-सा मन उचाट खाया कि नौकरी छोड़कर भाग खड़े हुए। इसलिए उनका अधिकांश समय ससुराल में ही व्यतीत हुआ। ऐसी स्थिति में शरत को भी इधर से उधर भटकना पड़ता था।

शरत को पाँच वर्ष की आयु में पाठशाला में भर्ती कराया गया। चूँकि शरत बचपन से ही नटखट स्वभाव का था इसलिए वह स्कूल में भी कोई न कोई शरारत करता रहता था। कभी वह पंडित जी की चिलम में तंबाकू की जगह पत्थर भर देता तो कभी हुक्के में पानी की जगह कुछ और भर देता। उसकी इन हरकतों से पंडित जी प्रायः उससे नाराज रहते थे। एक बार उसने ऐसी ही शरारत की। पंडित जी ने शरारती का नाम पूछा तो एक लड़के ने मार के डर से शरत का नाम बता दिया। शरत को मालूम पड़ा कि उसे दंड मिलेगा तो वह कक्षा से भाग खड़ा हुआ। इस बात को पंडित जी ने उसके पिता से कहा। नाना ने उसकी पिटाई की। इस प्रकार शरत का बचपन तरह-तरह की शरारतें करने में बीतता था। इतने पर भी शरत पढ़ने-लिखने में अन्य विद्यार्थियों की तुलना में तेज था। इसलिए अध्यापकगण उसकी बहुत सी शैतानियों को अनदेखा कर देते थे।

उसका एक परम मित्र था—पंडित का बेटा काशीनाथ। दोनों बालक जब तब सड़क पर घूमते हुए दिखाई दे जाते थे। पास के जंगल या झाड़ियों में तरह-तरह की शैतानियाँ करते हुए गाँव-कस्बे आदि के लोग उनको देखते रहते थे। शरत की कक्षा में एक लड़की पढ़ती थी। शरत उसके साथ भी शरारतें करता हुआ घूमता था। प्रायः दोनों जरा-जरा सी बात पर लड़-झगड़ पड़ते थे। दोनों बालक नदी या तालाब के किनारे मछली पकड़ते और पानी में गिट्टियाँ फेंकते हुए दिखाई देते थे। कभी नाव लेकर नदी में सैर करने निकल जाते थे और कभी बागों से फल चुराते थे। पतंगबाजी के भी ये शौकीन थे। इन सब कर्मों में बालिका भी शरत का साथ देती थी। उस लड़की का नाम धीरू था। धीरू एक प्रकार से शरत के सुख-दुःख की साथिन हो गई थी। एक दिन की बात है, शरत ने एक लड़के को ईंट मार दी। इसके बाद वह भाग कर एक स्थान पर छिप गया। इस बात का पता धीरू को था। अतः वह खोजती हुई उसके पास जा पहुँची। उसने देखा कि शरत हुक्का गुड़गुड़ा रहा है। धीरू ने धमकी दी कि वह इस बात को उसकी माता से कह देगी। यह सुनकर शरत क्रुद्ध हो उठा। उसने धीरू की पीठ पर एक धौल जमा दी। धीरू रोती हुई घर चली गई। शरत की माँ को पता चला तो उसने शरत की पिटाई कर दी। इतना सबकुछ होने के बाद भी दोनों की मित्रता ज्यों की त्यों बनी रही।

धीरे-धीरे दिन और रात बीतते जा रहे थे। लेकिन दोनों बालक-बालिका के घूमने-फिरने में कोई अंतर नहीं आया। वे दोनों सारा दिन धूप में इधर-उधर घूमने और बातें करने में बिता दिया करते थे। शाम को जब वे अपने-अपने घर लौटते तो उनकी पीठ पूजा होती थी। इसके बावजूद भी मछली मारने और नाव में बैठ कर सैर करने का काम कभी बंद नहीं होता था। शरत का कंठ मीठा था अतः वह अपनी मित्र मंडली तथा चेलों के बीच गाना भी गा लिया करता था। एक बार शरत ने एक नाव पकड़ी और वह उसे खेता हुआ कृष्णपुर गाँव तक चला गया। यह गाँव गंगा नदी के किनारे से लगभग तीन-चार मील दूर था। वह गाँव में पहुँच कर कीर्तन मंडली में सम्मिलित हो गया। रात

हो जाने के कारण उसका लौटना नहीं हो सका। दूसरे दिन उसके पिता ढूँढते-ढूँढते कृष्णपुर पहुँचे और उसे घर लिवाकर ले आए। इसी मध्य उसके पिता को एक नौकरी मिल गई। शरत अपने पिता के साथ देवानन्दपुर आ गया। यहाँ शरत ने मछली पकड़ने का कार्य तेजी से शुरू कर दिया।

साहस और निडरता का प्रतीक—शरत बहुत साहसी और निडर बालक था। एक बार मुहल्ले का एक व्यक्ति नयन बागदी उसकी दादी के पास आया। वह एक अच्छी सी गाय खरीदना चाहता था। अतः वह दादी से पाँच रुपए माँगने लगा। वह गाय बसंतपुर से लाने का इच्छुक था। शरत की दादी दयालु स्त्री थी। अतः उसने पाँच रुपए नयन बागदी को दे दिए। शरत से किसी ने कहा कि बसंतपुर में मछली पकड़ने की छपि बनाने के लिए अच्छे बाँस मिलते हैं। शरत ने सोचा कि बाँस लेना चाहिए। अतः वह चुपके से बिना किसी से पूछे कहे नयन बागदी के पीछे-पीछे चल दिया। एक मील चलने के उपरांत नयन बागदी ने देखा कि उसके पीछे-पीछे शरत चला आ रहा है तो वह ताज्जुब में पड़ गया। उसने शरत से कहा कि उसे लौट जाना चाहिए क्योंकि रास्ते बहुत खराब हैं। परंतु शरत पर बागदी के समझाने का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वह आगे जाना चाहता था। अब नयन बागदी लौट पड़ा और घर तक छोड़ने आया। दादी ने शरत को न जाने के लिए कहा, परंतु शरत नहीं माना। वह दादी से झूठ बोलकर कि पोखर में नहाने जा रहा है, घर से निकल पड़ा। इसके बाद वह नदी के किनारे-किनारे आम और कटहल के बागों को पार करता हुआ दो-ढाई मील तक दौड़ता हुआ चला गया। वह एक चौराहे पर जाकर खड़ा हो गया। कुछ देर के बाद नयन बागदी भी वहाँ आ पहुँचा। विवश होकर वह शरत को अपने साथ ले चलने के लिए राजी हो गया। इस प्रकार शरत निडरता और साहस का प्रतीक था।

व्यक्तित्व का निखार—शरत ऐसा नहीं था जिसे सुंदर कहा जा सकता। हाँ उसकी आँखें अवश्य सुंदर थीं। लेकिन उसमें परोपकारिता के गुण विद्यमान थे। साहस के कार्यों में वह सब से पहले कूद कर आगे आ जाता था। वह प्रायः आधी रात को घर से निकल जाता और गंगा किनारे या किसी ताल से मछलियाँ पकड़ने का कार्य बखूबी करता था। वह पढ़ने से घबराता तो नहीं था परंतु भीतर से जाने क्यों उसका हृदय बुझा हुआ था।

यद्यपि वह नाना-नानी के पास रहता था लेकिन तरह-तरह की शरारतों से अपने को नहीं बचा पाता था। एक दिन की बात है—शरत कुछ लड़कों और लड़कियों के साथ खेल रहा था। अचानक उसके सामने नाना आकर खड़े हो गए। उन्होंने उससे पूछा, क्या उसने पाठ याद किया? इस पर उसने पंडित जी की बीमारी का बहाना बनाया। यह सुनकर नाना जी पंडित जी को देखने पहुँचे। शरत ने सोचा कि मुसीबत टल गई। अतः वह सब के साथ पुनः खेलने लगा। इस प्रकार उसे एक अच्छा खिलाड़ी कहा जा सकता है। परंतु उसका स्वभाव बड़ा विचित्र था क्योंकि वह जीती हुई वस्तुएँ अपने पास नहीं रखता था। दिनभर में जितनी गोलियाँ और लट्टू वह जीतता, शाम को वह सबकुछ अपने संगी-साथियों में बाँट देता। इस तरह उसे बाँटने में विशेष आनंद आता था। लेकिन इस देने में उसे अभिमान छू तक नहीं गया था।

वह प्रायः नदी के किनारे एकांत में बैठ जाता और तरह-तरह की बातें सोचता रहता। वह मन ही मन कहता कि मैं जीवनभर सौंदर्य की उपासना करूँगा। मैं जीवनभर अन्याय के विरुद्ध लड़ूँगा। मैं सदैव यश के काम की ओर कदम बढ़ाऊँगा। सब जानते थे कि पढ़ने-लिखने से वह जी चुराता है परंतु वह कुशाग्र बुद्धि का बालक था। जब वह छोटा ही था तो उसने अपने स्कूल के वाचनालय की वे सारी पुस्तकें पढ़ डाली थीं जिन्हें महान् लेखकों ने लिखा था।

एक दिन उसके अध्यापक अघोरनाथ गंगा स्नान के लिए जा रहे थे। शरत उनके पीछे-पीछे चल रहा था। इसी समय उसके कान में किसी स्त्री के रोने का स्वर सुनाई दिया। वह समझ गया कि कौन रो रहा है? मास्टर साहब ने पूछा कि कौन हो सकता है? शरत ने तुरंत उत्तर दिया कि इस स्त्री का स्वामी चक्षुहीन है। यह स्त्री कुछ लोगों के घरों में बरतन माँजती है तथा अन्य काम करती है और उसके बदले में उसे जो कुछ मिलता है उससे अपना और अपने पति का पेट पालती है। कल रात उसके अंधे पति का स्वर्गवास हो गया। इस कारण यह रो रही है। दुखी लोग बड़ों को दिखाने के लिए जोर-जोर से नहीं रोते। उनका रोना दुख से विदीर्ण प्राणों का क्रन्दन होता है।



मास्टर मुशाई शरत के शब्द सुनकर चकित रह गए। क्या वास्तव में ऐसा ही है जैसा शरत कह रहा है? वे सोच भी नहीं सकते थे कि शरत इतने पते की बात बता सकता है। सचमुच छोटी सी आयु में ही शरत ने रोने का इतना सूक्ष्म विश्लेषण किया था। मुशाई ने अपने मित्र से कहा तो मित्र ने उत्तर दिया कि, “जो रूदन के विभिन्न रूपों को पहचानता है, वह साधारण बालक नहीं है। बड़ा होकर वह निश्चय ही मनस्तत्त्व के व्यापार में प्रसिद्ध होगा।” लेकिन देखा जाए तो शरत की प्रतिभा को समझने वाले लोग कम थे। शरत तो शुरू से ही बंकिमचंद्र और गुरु रवीन्द्रनाथ टैगोर से प्रभावित थे। जब वे बड़े हुए तो उन्होंने कहा, “मैं पुश्किन से बहुत कुछ सीख सकता हूँ। वह मेरे पिता हैं। परंतु रवीन्द्रनाथ मेरे गुरु हैं।”

शरत बाबू अपने नाना जी के घर अधिक समय तक नहीं रह सके। चूँकि उनके पिता जी किसी एक स्थान पर ठहर कर कार्य नहीं करते थे। इसलिए शरत के सामने भी विवशता मुँह बाकर खड़ी हो जाती थी। असल में बात यह थी कि शरत के पिता स्वाभिमानी और स्वतंत्र विचारों के व्यक्ति थे। अतः वे ससुराल की रोटी तोड़ना बुरा समझते थे। इस कारण उन्होंने शरत सहित भागलपुर छोड़ दिया और देवानन्दपुर आ गए। इस तरह बार-बार इधर से उधर जाने के कारण शरत की पढ़ाई-लिखाई ठीक प्रकार से नहीं हो सकी। जब बालक को पढ़ने-लिखने में व्यस्त नहीं रखा जाता है तो वह कुसंगत में पड़ जाता है या आवारा हो जाता है। शरत ने भी आवारा जीवन को जैसे अपना-सा लिया। इस जीवन में रहकर वे जीवन से संबंधित अनुभवों को अर्जित करने लगे। कहानी-किस्से सुनाने में उन्हें विशेष आनंद आने लगा। वह किसी भी सुनी-सुनाई बात को गढ़कर इस ढंग से रखते थे कि लोग उसे सच मान लेते थे। इसके साथ ही किसी बात की तह तक पहुँचने की उनमें अपूर्व क्षमता थी। वह एक चीज एक बार देख लेते तो उसकी खोज में तुरंत जुट जाते और जब तक उसके विषय में सारी बातें जान नहीं लेते तब तक चैन से नहीं बैठते थे।

पिता जी का मन देवानन्दपुर में नहीं लगा तो वे पुनः भागलपुर आ गए। बेचारे शरत को भी उनके साथ आना पड़ा। यहाँ आकर उन्हें पुनः स्कूल को जाना पड़ा। भागलपुर के इस स्कूल में शरत के बहुत से नये मित्रों में राजू नामक बालक अंतरंग मित्र हो गया। अब दोनों मिलकर एक ओर तरह-तरह की शरारतें करते तो दूसरी ओर परोपकार के कार्यों में भी थोड़ा-बहुत समय देते। एक बार माघ मास में बंगला पाठशाला के पंडित जी की पत्नी की मृत्यु हो गई। पंडित जी स्वयं भी बीमार रहा करते थे। उनकी पत्नी एक छोटे बच्चे को छोड़कर मरी थी। पंडित जी के सामने यह बड़ी भारी समस्या आकर खड़ी हो गई। पत्नी का दाह-संस्कार कैसे किया जाए? स्कूल के प्रधानाध्यापक को पता चला तो वे पंडित जी की पत्नी के दाह-संस्कार का प्रबंध करने लगे। शरत और राजू इस कार्य के लिए आगे आ गए। उस दिन अमावस्या की रात थी। आकाश में काले-काले बादल मँडरा रहे थे। शमशान भी दूर था। सब लोग पंडित जी की पत्नी की अर्थी लेकर चले तो पानी बरसने लगा। धीरे-धीरे वर्षा तेज हो गई। उस जमाने में लालटेनों का आविष्कार नहीं हुआ था। अतः छेदों वाली हांडी में दीपक रखकर काम चलाया जाता था। थोड़ी दूर और जाने पर वर्षा बहुत तेज हो गई। देखते-देखते चारों ओर पानी ही पानी दिखाई देने लगा। रास्ते और घाट पानी से भर गए। लाश भी भीगने के कारण भारी हो गई। ऐसी दशा में क्या किया जाए? सब यही एक बात सोचने लगे। अंत में लाश को एक इमली के पेड़ के नीचे रख दिया गया। इसी समय ओलों ने भी अपनी माया को दर्शाना शुरू कर दिया।

चारों ओर जल ही जल दिखाई दे रहा था। राजू ने कहा कि आप सब लोग यहाँ से चले जाएँ क्योंकि पानी ने सैलाब का रूप धारण कर लिया तो यहाँ से निकलना कठिन हो जाएगा। मैं शव की देखभाल कर रहा हूँ। सब लोग किसी सुरक्षित स्थान पर चले गए। जब वर्षा रुकी तो वे लोग वापस आ गए। उन्होंने देखा कि शव पेड़ के नीचे रखा हुआ है लेकिन राजू का कहीं पता नहीं है। इसी समय उन लोगों ने देखा कि लाश हिल रही है। सब लोग डर के मारे

नोट

काँपने लगे। तभी राजू जो लाश के पास लेट गया था और ओलों से अपनी रक्षा कर रहा था, यकायक उठकर खड़ा हो गया। राजू के इस साहस को देखकर सब लोग चकित रह गए।

शरत बाबू के समय में गाँवों में चोरी-डकैती आए दिन होती रहती थी। इसलिए लोग जान-माल की रक्षा के लिए साथ में बंदूक लेकर सोते थे। एक रात की बात है, शरत अपने मामा के कमरे में खिड़की के मार्ग से घुस गए। खटपट हुई तो मामा ने अपनी बंदूक उठा ली। वे बंदूक चलाना चाहते थे कि शरत ने कहा गोली मत चलाना मैं हूँ शरत। तुम्हें डराने के लिए मैं खिड़की के रास्ते से भीतर घुस आया था। मामा के चेहरे पर हँसी और भय के मिले-जुले भाव तैर गए।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. शरतचन्द्र के पिता का नाम चट्टोपाध्याय था।
2. शरत का जन्म की शाम को हुआ था।
3. पंडित का बेटा शरतचन्द्र का परम मित्र था।

शरत बाबू वास्तव में बड़े साहसी बालक थे। अँधेरी रात में वे कहीं भी आ-जा सकते थे। उन्हें साँप और बिच्छू से बिल्कुल डर नहीं लगता था। इसके साथ-साथ वे उपन्यास और कहानी भी लिखते रहते थे। लेकिन स्वभाव से लजालु होने के कारण वह किसी से भी नहीं कहते थे कि मैं लिखता भी हूँ। उनकी माता बड़ी दयालु प्रकृति की थी। वे उधार माँग कर उनकी फीस जुटाती थी ताकि शरत अपनी पढ़ाई कर सके। पहले साल विज्ञान की परीक्षा होने वाली थी। शरत अपने मामा के बच्चों को पढ़ाते थे। इसके बदले में मामा कभी-कभी उनकी फीस भर दिया करते थे। उस रात शरत ने मामा के बच्चों को बुलाकर कहा कि कल मेरी परीक्षा है। तुम लोग मुझे रात को डिस्टर्ब मत करना। मैं रात भर पढ़ाई करूँगा और सचमुच वे लालटेन के प्रकाश में अपनी पढ़ाई करने लगे। दूसरे दिन विद्यार्थीगण उनके कमरे में पहुँच गए और देखा कि लालटेल जल रहा है शरत अध्ययन में डूबे हुए हैं। लड़कों को देखकर शरत यकायक बिगड़ पड़े, मैंने कहा था कि मुझे परेशान मत करना, कल मेरी परीक्षा है लेकिन तुम लोग फिर भी आ गए। बालक बोले, यह बात तो कल की थी। आज तो इस समय सवेरा हो गया है। शरत आश्चर्य में डूबकर उठे। उन्होंने खिड़की खोली, देखा कि सचमुच सवेरा हो गया है और धूप कमरे में आ गई है।

इसके बाद शरत ने विज्ञान की परीक्षा दी। उनके उत्तर देखकर अध्यापकगण चकित रह गए क्योंकि उन्होंने सोचा था कि शरत सही उत्तर नहीं दे पाएँगे। ये जो उत्तर आए हैं ये शायद नकल द्वारा दिए गए हैं। अतः उन्होंने फिर एक नया प्रश्न-पत्र बनाया और कहा, प्रश्नों के उत्तर दो। इस बार शरत ने प्रश्नों को एक बार पढ़ा और मौखिक रूप से उनके उत्तर दे दिए। उनकी असाधारण स्मरण शक्ति को देखकर अध्यापकों को बड़ी प्रसन्नता हुई। पढ़ने-लिखने के साथ-साथ शरत का जीवन राजू के साथ बैठकों में भी बीतता था। इसी समय शरत की माता की मृत्यु हो गई। शरत को इसका बहुत दुख हुआ क्योंकि शरत ने अभी तक जितनी भी शिक्षा ग्रहण की थी वह अपनी माता के प्रयास के कारण ही की थी। अब उनको पिता के साथ रहना था। इसलिए वे समझ गए कि कदाचित् आगे वे कालेज की शिक्षा ग्रहण नहीं कर सकेंगे। इस बार उन्हें भागलपुर का पानी फिर पीना पड़ा। उनके नाना के घर का वातावरण बंगाली समाज के नियमों के अंतर्गत बँधा हुआ था। परंतु शरत थे उच्छृंखल प्रवृत्ति के। इसलिए वे घरेलू नियमों के अनुसार नहीं चल सकते थे। इसलिए वे दुखी रहने लगे। किसी कारणवश वे परीक्षा में भी नहीं बैठ सके।

माता की मृत्यु हो चुकी थी। पिता के पास इतना पैसा नहीं था कि उनकी पढ़ाई हो सकती। इस कारण उनकी पढ़ाई-लिखाई बंद हो गई। अब वे साहित्य लेखन में जुट गए। साथ ही वे नाटक मंडली में भी जाते और गाने-बजाने में भी रुचि लेते थे। कई बार उन्होंने अपने मधुर कंठ से गाने भी सुनाए थे। एक बार वह अपने मित्र के साथ गाना गाने के लिए गए। गाने का कार्यक्रम किसी जमींदार के घर पर था। रात भर लोग शराब पीकर झूमते रहे। फिर सब वहीं सो गए। सुबह को शरत के मित्र ने कहा कि मेरे पास जमींदार के तीन हजार रुपए थे। इस समय नहीं मिल

रहे हैं। इतना कह कर मित्र बुरी तरह रोने लगा। इसी समय वह स्त्री आई जिसने रात में नाच गाना किया था। वह डाँटती हुई बोली कि तुम्हें रात को इतने रुपए लेकर नहीं आना चाहिए था। कई गुण्डे तुम्हारे रुपए छीनने की ताक में थे। इसलिए मैंने तुम्हारे पैसे निकाल लिए थे। मुझे रात भर इसी चिंता के कारण नींद नहीं आई। इतना कहकर उसने सारा धन शरत के मित्र को वापस कर दिया। यह देखकर शरत आश्चर्यचकित रह गए। वे सोचने लगे कि लोग वेश्याओं को कुलटा, पापिन, दुष्टा, दुराचारिणी और न जाने क्या-क्या समझते हैं पर वे भी ईमानदार और चरित्रवान् हो सकती हैं। इस घटना ने शरत के जीवन पर स्थायी प्रभाव डाला और अब उनके हृदय में नारी के प्रति दूसरे विचार उत्पन्न होने लगे। वे सोचने लगे, नारी श्रद्धा की पात्र है, नारी कलंक का पिटारा नहीं है, नारी का सम्मान किया जाना चाहिए। यदि नारी के गुणों को समझा जाए तो वह मनुष्य को कुछ का कुछ बना सकती है। आगे चलकर 'देवदास' उपन्यास में चंद्रमुखी जैसी वेश्या का चरित्र-चित्रण इसी अनुभूति का एक नमूना है।

शरत के पिता जी संचाल परगना में सैटलमेंट के काम में नौकरी करते थे। वहाँ स्थायी मकानों का अभाव था अतः शिविरों में रहना पड़ता था। यहाँ शरत बाबू गढ़-गढ़कर कहानी सुनाते और अपने मधुर कंठ से गाने भी गाते थे। एक दिन वहाँ के राजकुमार ने एक गोष्ठी सजाई और शरत से आग्रह किया कि वह गाना सुनाए। शरत ने इतना सुंदर और मीठा गाना गाया कि सब लोग उनकी प्रशंसा करने लगे। गाने के साथ-साथ शरत बाबू साहित्यिक गोष्ठियों में भी हिस्सा लेते थे। इन गोष्ठियों में उनके मामा सुरेंद्रनाथ, सौरिन्द्र कुमार और निरुपमा देवी होती थी। गोष्ठी का कार्यक्रम बड़े अच्छे ढंग से चलता था। साहित्यकार एक दूसरे को अपनी-अपनी कहानियाँ सुनाते थे। नाना जी को शरत की बातें पसंद नहीं थीं अतः शरत बाबू अपने साथियों के साथ किसी खण्डहर या एकांत में जाकर यह कार्य संपन्न करते थे। कभी-कभी गंगा किनारे और शमशान में भी 'जमात' जम जाती थी। वहाँ शरत, उनका साथी राजू और दो-चार अन्य लड़के तंबाकू पीते और साहित्य की चर्चा करते थे। ऐसी बहुत सी बातें हैं जो जीवन से संबंधित तो हैं लेकिन उनके बारे में इन लड़कों को कुछ पता था और न लेखक ही इनकी गहराई में पहुँच पाया है। कुछ बातें जरूर ऐसी थीं जिन्हें जानबूझकर ये लोग इधर-उधर अफवाह के रूप में जीवन का आनंद लूटने के लिए फैलाते रहते थे। शरत कभी अपने मामा से कहते कि एक लड़की को चाहता हूँ। लेकिन मामा जब इसका पता लगाते तो पता चलता कि शरत झूठ बोल रहे हैं क्योंकि उन्होंने शरत को प्रेमिका सहित कभी नहीं देखा। इतना पता चला है कि शरत अपने मित्र सौरिन्द्र की विधवा बहिन के प्रति आकर्षित हुए थे। लेकिन उससे विवाह आदि की चर्चा कभी नहीं चली। सौरिन्द्र की बहिन निरुपमा कवियत्री थी। निरुपमा शरत की कहानियाँ पढ़कर उनकी प्रशंसा करती थी और शरत निरुपमा की कविताओं को बड़े मन से पढ़ते थे।

शरत का सांसारिक रिश्ता—शरत के पिता को कीमती पत्थर संग्रह करने का शौक था। वे उन पत्थरों को प्राण-ठिकाने रखते थे। एक दिन शरत को कुछ रुपयों की जरूरत थी। अतः उन्होंने उन पत्थरों में से कुछ लेकर बेच दिए। पूछने पर उन्होंने जैसी बात थी सच-सच बता दी। यह सुनकर उनके पिता जी आग बबूला हो गए और उन्होंने शरत को खूब डाँटा। शरत को यह बात लग गई और वे उसी समय घर छोड़कर चले गए। लेकिन गहराई से देखने पर पता चलता है कि शरत ने घर अन्य कारणों से भी छोड़ा था। मामा के घर में एक दाय-माँ थी जिसे बच्चों की बाल-सुलभ शरारतें जरा भी नहीं भाती थीं। वह बालकों को बात-बात पर डाँटती रहती थी। पिता जी को जब पता चलता कि दाय-माँ ने शरत को खूब डाँटा-फटकारा है तो उससे कुछ न कहकर शरत के विरुद्ध ही बोलते थे। पिता के इस व्यवहार से शरत का हृदय टूट गया और वह सोचने लगे, जिस परिवार में सच की हार है, सम्मान का भाव नहीं है, उस घर को छोड़ देना चाहिए। घर से निकलकर वह घूमते-घामते एक आम के बाग में आए। वहाँ उन्होंने कुछ संयासियों को देखा और उनसे प्रार्थना की कि उन्हें भी चरणों में स्थान दे दिया जाए। पहले तो संयासियों ने उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया। लेकिन काफी अनुनय-विनय करने के पश्चात् संयासियों ने उन्हें रहने की आज्ञा दे दी। शरत ने गले में रुद्राक्ष की माला डाल ली और संयासी बाबा के शिष्य बन गए। लेकिन इस स्थान पर भी अधिक दिन तक उनका मन नहीं लगा। दूसरे, संयासियों की मंडली में उन्होंने बहुत सी कमजोरियाँ भी देखीं। अतः एक दिन वह वहाँ से चल दिए। मार्ग में एक श्रद्धालु परिवार के साथ लग गए। अचानक शरत बाबू का शरीर बुखार

से तपने लगा। वे लोग शरत को वहीं छोड़कर आगे चले गए। एक बिहारी व्यक्ति ने उन्हें देखकर दया की। वे उन्हें स्टेशन पर ले आए। एक बंगाली ने उन्हें कुछ दवाएँ तथा दूध पीने को दिया।

धीरे-धीरे शरत बाबू स्वस्थ हो गए। अब उन्होंने अपने घर एक पत्र डाला। एक संयासी को पत्र लिखते देखकर सब समझ गए कि शरत पढ़े-लिखे हैं। उन्होंने लोगों से अपनी जाति छिपाई और कहा कि मैं बिहार का रहने वाला हूँ। लेकिन लोग उनकी बातचीत से पहचान गए कि बंगाली हैं। शरत बाबू इन लोगों के बीच रहकर गीत भी गाते थे। वे कहानी भी सुना दिया करते थे। इन सब बातों के कारण बहुत से लोग शरत बाबू के मित्र बन गए। अब वे पुनः बहुत से नये-नये मित्रों की गोष्ठी में आ गए। इस नई गोष्ठी में एक धनी साहू भी था। शरत साहू के घर पर रहने लगे। साहू उन्हें वेश्याओं के कोठे पर ले जाता और उन्हें मंदिर भी पिलाता। गृहस्वामी शरत के इन कार्यों से नाराज हो गया। लेकिन शरत पर इसका कोई प्रभाव नहीं हुआ। कुछ दिनों बाद शरत को पिता की मृत्यु का समाचार मिला। अब शरत को भागलपुर जाना पड़ा। भागलपुर में पहुँचने पर काफी देर हो गई। इसलिए शरत बाबू को पिता के अंतिम दर्शन नहीं हो सके। उनके पिता का दाह संस्कार उनके मामा मणीन्द्रनाथ ने किया। अब शरत के सामने नई समस्या आकर खड़ी हो गई। उनके ऊपर तीन छोटे भाइयों और एक बहिन का दायित्व आ गया। सब से छोटी बहन का नाम सुशीला था। उसे मकान मालकिन ने अपने पास रख लिया क्योंकि वह उसे अपनी बेटी की तरह प्यार करती थी। छोटे भाई का नाम प्रभास था और वह 11-12 वर्ष की आयु का साधारण सा दीखने वाला लड़का था। शरत बाबू उसे अपने साथ आसनसोल ले गए। वहाँ अपने एक मित्र के पास रेलवे से संबंधित काम सीखने के लिए छोड़ दिया। अब उनके पास प्रकाश था। उसे शरत ने अपने नाना-नानी के पास छोड़ दिया। उन लोगों ने प्रकाश को पढ़ाने-लिखाने का भार अपने ऊपर ले लिया।



टास्क शरत बाबू ने संसार के साथ कैसा रिश्ता निभाया?

समय बड़ी तेजी से बीतता चला जा रहा था। शरत बाबू नाना-नानी के घर अधिक समय तक न रहकर अपनी बड़ी विवाहित बहिन के घर चले गए। लेकिन शरत ने अपनी पुरानी आदतों पर लगाम नहीं लगाई थी। वह शराब भी पीते थे और इधर-उधर सैर-सपाटे के लिए भी निकल जाते थे। इसलिए बहन ने एक दिन उनसे कह दिया, शरत यदि तुम अपनी आदतों को बदलना नहीं चाहते तो हमारा घर छोड़ दो। शरत ने मन ही मन विचार बनाया कि मुझे बर्मा (ब्रह्मा) चला जाना चाहिए। इसी बीच उन्होंने अपना ‘चरित्रहीन’ उपन्यास पूरा कर लिया था। एक दिन एक मित्र ने उनसे कहा कि ‘कुन्तलीन’ पुरस्कार के लिए तुम्हें एक अच्छी सी कहानी लिखनी चाहिए। यदि तुम्हारी कहानी प्रथम आई तो तुम्हें 25 रुपए इनाम मिलेगा। अन्य मित्रों ने भी उनसे कहानी लिखने का अनुरोध किया। अंत में शरत ने कहानी लिखना स्वीकार कर लिया। उन्होंने ‘मंदिर’ नामक कहानी लिखी। प्रकाशक ने उस कहानी को ले लिया। कहानी पर अपना नाम न लिखकर उन्होंने अपने मामा सुरेंद्रनाथ का नाम दिया। प्रतियोगिता का फल कुछ दिनों बाद प्रकाशित हुआ। शरत बाबू की कहानी प्रथम आई। इनाम के रूप में उनको 25 रुपयों का पुरस्कार मिला। सब लोग सुरेंद्रनाथ को बधाई पत्र भेजने लगे। लेकिन सुरेंद्रनाथ ने लोगों को जवाब दिया कि बधाई का असली अधिकारी शरत है क्योंकि यह कहानी उन्होंने ही मेरे नाम से लिखी है। शरत इस समय रंगून जाने की तैयारी कर रहे थे। उनके पास इतने पैसे नहीं थे कि वे किराया दे सकें। एक सज्जन से उधार पैसे लेकर वह सुबह चार बजे भवानीपुर स्टेशन पहुँचे। इस प्रकार शरत बाबू एक नई दिशा की खोज में बर्मा की ओर चले गए। सचमुच शरत बाबू का शुरू का जीवन अनेक कठिनाइयों, उतार-चढ़ाव और कष्टों से भरा हुआ था। लेकिन वे बड़े साहसी थे। उनकी तुलना अब्राहम लिंकन से की जाती है क्योंकि अध्ययन, मनन, प्रेम की कथा, विनोदप्रियता, लेखन कला आदि की दृष्टि से वह वास्तव में दूसरे लिंकन थे।

रंगून का साहित्यिक जीवन—उस जमाने में जहाज की यात्रा द्वारा बर्मा पहुँचा जा सकता था। अतः चार दिन की

नोट

यात्रा के बाद शरत बाबू बर्मा पहुँचे। इस बीच उनका जहाज एक तूफान में फँस गया था और वह बड़ी कठिनाई में से गुजरकर निकल सके थे। मार्ग में उनको अन्य कठिनाइयों का भी सामना करना पड़ा। यह सब दूसरी कहानी है। खैर, किसी प्रकार शरत बाबू के पाँव बर्मा में पड़े। बर्मा की सरकार प्लेग के भय से तरह-तरह की व्यवस्था करती रहती थी क्योंकि उन दिनों बर्मा में प्लेग का रोग बड़ी जल्दी फैल जाता था। शहर से लगभग आठ मील दूर रेत में कुछ झोपड़ियाँ बना दी गई थीं। बाहर से आने वाले यात्रियों को आठ-दस दिन तक इन्हीं झोपड़ियों में रहना पड़ता था जिससे उनकी शारीरिक परीक्षा की जा सके। शरत बाबू ने वे आठ-दस दिन रो-रोकर काटे। फिर वह अपने एक मौसा अघोरनाथ चटर्जी के घर पहुँचे। उस समय शरत की हालत बहुत खराब हो रही थी, लगता था जैसे वह एक भिखारी है। उनकी माता ने काफी देर बाद उन्हें पहचाना। शरत बाबू ने उन्हें सारी घटनाएँ बताईं।

बाबू अघोरनाथ रंगून के एक प्रसिद्ध वकील थे। उनके पास धन की कमी नहीं थी। उनके मौसा ने उनसे कहा कि तुम चाहो तो बर्मी भाषा सीखकर कानून की परीक्षा पास कर सकते हो। इस बीच मैं तुम्हें कहीं न कहीं नौकरी भी दिला दूँगा। शरत मन ही मन बड़े खुश हुए। उन्होंने अपने मौसा के चरण छूकर उन्हें आश्वासन दिया कि जैसा वे कहेंगे वह वैसा ही करेंगे। लेकिन भविष्य के गर्भ में तो कुछ और ही छिपा हुआ था। लगभग तीन मास बाद उनके मौसा को निमोनिया का प्रकोप हो गया। शरत ने रात-रात भर जागकर उनकी तीमारदारी की। लेकिन उनके मौसा बच नहीं सके। अब शरत बाबू पुनः निराश्रित हो गए। इसी समय उनको गुप्त रोग लग गया। मौसा ने उनको अपने घर में रखने से मना कर दिया। ऐसी दशा में शरत बाबू दर-दर की ठोकें खाने वाले बन गए। जैसे-तैसे कुछ लोगों की सहायता से उनका जीवन कटने लगा। कुछ दिनों के उपरांत मणीन्द्रनाथ मित्र के सहयोग से उनको एक्जीक्यूटिव इंजीनियर के कार्यालय में एक नौकरी मिल गई। धीरे-धीरे मणीन्द्रनाथ के प्रयास से उनको एक आफिस में स्थायी रूप से, एक दूसरी नौकरी का अवसर मिला। वहाँ उस समय शरत बाबू को पचास रुपए मासिक वेतन मिलता था। तीन माह बाद उनका वेतन पैंसठ रुपए कर दिया गया। अब उनकी नाव रेत में न चलकर पानी में चलने लगी।

शरत ने रंगून में एक साहित्यिक सभा में जाना आरंभ कर दिया था। उस सभा में लोग बड़े आराम से गाते-बजाते थे। शरत से भी गाना गाने का आग्रह किया गया किंतु शरत कभी भी भीड़-भाड़ के सामने नहीं गा सके जब कभी उन्हें गाना पड़ा तो परदे के पीछे से गाते थे। अनेक बार लोगों की इच्छा हुई कि कम से कम उस गायक के दर्शन तो कर लिए जाएँ जो इतने मधुर कंठ से गाता है परंतु जब शरत को इस भेद का ज्ञान होता तो वे नंगे पाँव ही वहाँ से रफूचक्कर हो जाते थे। उन दिनों रंगून में प्लेग की महामारी ने भयंकर रूप धारण कर लिया था। शरत के संगी-साथियों ने शहर छोड़ दिया और वे किसी सुरक्षित स्थान पर जाकर रहने लगे थे, किंतु शरत महामारी के भय से जरा भी नहीं घबराये। वह अन्य बाबुओं के मेस में ठिकाना खोज कर आराम से रहने लगे। वहाँ अन्य लोग भी उनकी सहायता पाने के लिए आ जाते थे। शरत सदैव नीची श्रेणी के लोगों के साथ रहने में विशेष आनंद का अनुभव करते थे और जब कभी उन लोगों को दुखी देखते तो तुरंत उनका दुख बाँटने के लिए आ जाते थे।

जब कभी उन्हें लोगों के दुख बंटाने से अवकाश मिलता तो वे पुस्तकें लिखने में जुट जाते। उन्होंने अवकाश क्षणों का सदुपयोग विदेशी पुस्तकों को पढ़ने में भी किया। अनेक असहाय और पतित स्त्रियों की सहायता के लिए भी उन्होंने बहुत से कार्य किए। एक बार उनका साक्षात्कार ऐसे व्यक्ति से हुआ जो अच्छा मिस्त्री था। उसकी एक युवती कन्या थी। उसने एक बूढ़े से कुछ धन उधार ले लिया था। किंतु वह उधार का धन चुकाने में असमर्थ था। अंत में वह उस बूढ़े के साथ अपनी पुत्री का विवाह करने के लिए तैयार हो गया। शरत ने उसे धन देने का वचन दिया। इसके बावजूद भी मिस्त्री अपनी कन्या के विवाह के लिए चिंतित दीख रहा था। शरत बड़े दयालु थे। अतः वे उससे बोले—“मैं तुम्हारी बेटी से विवाह करने के लिए तैयार हूँ।” शरत ने उस कन्या से विवाह किया। वह लड़की शरत बाबू के पास ही रहने लगी। एक वर्ष के बाद उस युवती से एक लड़का हुआ। इस प्रकार शरत लगभग दो वर्ष तक अपनी पत्नी के साथ सुखपूर्वक रहे। लेकिन भगवान् की मर्जी तो दूसरी थी। उसी समय बर्मा में दुबारा प्लेग फैला और उनकी पत्नी मौत के मुँह में चली गई। शरत को बहुत दुःख हुआ। उनके दुःख की कोई सीमा नहीं थी। वे बालकों के समान रुदन करने लगे। दुःख ने उनके मन और हृदय में घर कर लिया। अतः उनकी पढ़ाई-लिखाई का कार्य रुक गया। वे सोचने लगे कि भगवान् ने उनके लिए किसी संगिनी को गढ़ा ही नहीं है क्या? कुछ दिनों शांत

नोट

रहने के पश्चात् वे चित्रकला में अपना समय बिताने लगे। इसी समय बंगाल वासियों को उनकी सुध आई। वे उनके साहित्य की चर्चा करने लगे। रवींद्रनाथ तथा अन्य साहित्यकारों की इच्छा थी कि शरत बाबू रंगून छोड़कर अपनी भूमि बंगाल में आ जाएँ क्योंकि वे लोग ऐसा सोचने लगे थे कि शरत बाबू बंगाल के लिए बेजोड़ साहित्य का सृजन कर सकते हैं। इस धारा के बलवती होने के कारण शरत के मित्र सौरिन्द्र नाथ ने उनसे आज्ञा लिए बगैर उनकी कुछ रचनाएँ छपवा दीं। जब शरत बाबू को इस बात का पता चला तो वे मन ही मन क्रुद्ध हुए लेकिन प्रकट रूप में उन्होंने किसी से कुछ नहीं कहा।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

4. शरतचन्द्र का जन्म कब हुआ था?

(क) 13 जून 1875	(ख) 14 नवम्बर 1877
(ग) 15 सितंबर 1876	(घ) इनमें से कोई नहीं।
5. प्रभाकर जी ने शरतचन्द्र की जीवनी को कितने पर्वों में विभाजित किया है?

(क) चार	(ख) तीन
(ग) दो	(घ) इनमें से कोई नहीं।
6. शरतचन्द्र की माता का क्या नाम था?

(क) भुवनमोहिनी	(ख) दयामोहिनी
(ग) जगमोहिनी	(घ) इनमें से कोई नहीं।

साहित्यिक जीवन का श्रेष्ठ बिन्दु—एक दिन एक मित्र ने उनसे अधिकारी नामक एक सज्जन व्यक्ति की पुत्री से विवाह करने के लिए कहा परंतु शरत इसके लिए तैयार नहीं हुए। इसी समय उनको ज्वर हो गया। अधिकारी की सयानी बेटी मोक्षदा ने उनकी खूब सेवा की। धीरे-धीरे शरत का ज्वर शांत हुआ। तब शरत ने अचानक एक दिन देखा कि मोक्षदा उनके सिरहाने बैठी है। मोक्षदा के पिता कृष्णदास बोले, यदि तुम्हारी इच्छा मेरी बेटी से विवाह करने की नहीं है तो मुझे कुछ रुपए दे दो ताकि मैं अपने देश वापस चला जाऊँ और वहाँ जाकर अपनी पुत्री का विवाह कर सकूँ। शरत के पास धनाभाव था। अतः वे कृष्णदास को रुपए नहीं दे सके। ऐसी दशा में अधिकारी महोदय अपनी कन्या को शरत के पास छोड़कर चुपचाप कलकत्ता चले गए। शरत को मोक्षदा को विवशतः आश्रय देना पड़ा। मोक्षदा जीवनभर शरत बाबू के साथ रही। वह शरत की गृहस्थी को बड़े अच्छे ढंग से चलाती थी।

शरत बाबू ‘चरित्रहीन’ नामक उपन्यास लगभग पूरा कर चुके थे। ‘नारी इतिहास’ प्रबंध पूरा करने में जुटे हुए थे कि अचानक एक संध्या को उनके घर को आग ने भक्षण करना शुरू कर दिया। इस आग में शरत बाबू की महीनों की मेहनत स्वाहा हो गई। दोनों पाण्डुलिपियों के जल जाने के कारण शरत को बहुत दुख हुआ। इसी समय वे अनुभव करने लगे कि हृदय रोग ने उनको घेर लिया है। लेकिन उन्होंने इस तरफ ध्यान नहीं दिया। एक बार उन्होंने चाय का एक स्टाल भी लगाया परंतु उसमें सफलता नहीं मिली।

थोड़े दिनों के बाद शरत बाबू कलकत्ता लौट आए और कहानियाँ लिखकर छपवाने लगे। उनकी कहानियाँ प्रायः ‘यमुना’ नामक पत्रिका में प्रकाशित होती थीं। यहाँ कलकत्ता के लोगों ने शरत बाबू का हृदय से स्वागत किया। कलकत्ता में शरत एक किराए के मकान में रहते थे। उन्होंने अपने भाई-बहनों की भी सुधि ली। वे चाहते थे कि सारा परिवार एक स्थान पर संगठित होकर रहे। उनकी इस भावना से ज्ञात होता है कि वे संयुक्त परिवार के पक्षपाती हो गए थे। इसीलिए उन्होंने अपने पितृ परिवार को संगठित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी।

कुछ ही समय में बुरे दिन छँट गए और अच्छे दिन आ गए। उनकी कृतियाँ लोगों की जुबान पर चढ़ने लगीं। ‘श्रीकांत’

(प्रथम पर्व), 'देवदास', 'चरित्रहीन', 'काशीनाथ' आदि पुस्तकों के प्रकाशित होते ही शरत बाबू उच्च कोटि के लेखक माने जाने लगे। पत्र-पत्रिकाओं में भी उनकी कहानियाँ छपती रहीं। 'श्रीकांत' (द्वितीयपर्व), 'स्वामी', 'दत्ता', 'गृहदाह', 'आमार आशय' आदि रचनाओं ने बंग समाज में धूम मचा दी। लोग उनकी रचनाओं की प्रशंसा करने लगे। इसी समय शरत के जीवन में एक नई विचारधारा ने जन्म लिया। देश में राजनीतिक उथल-पुथल होने लगी। शरत बाबू के जीवन में भी एक नयी लहर उत्पन्न हुई। वे सोचने लगे कि राजनीति की इस क्रांति में मुझे भी भाग लेना चाहिए। अतः वह देश में गरम दल की ओर झुक गए। वे लोकमान्य तिलक को सच्चे हृदय से स्वीकार करते थे। वे कहते थे कि यदि सभी देशवासी मिलकर अंग्रेजों के विरुद्ध हो जाएँ तो अंग्रेजों को चौबीस घंटे में देश छोड़ देना पड़ेगा। शरत बाबू को चरखा चलाने में विशेष आनंद आता था। वह काफी महीन सूत कातना जानते थे। परंतु उनकी धारणा थी कि चरखा चलाने से 'स्वराज्य' कभी नहीं मिल सकता। स्वराज्य पाने के लिए लोगों को त्याग करना पड़ेगा। वे रवींद्रनाथ ठाकुर की भी प्रशंसा करते थे। परंतु उन्हें इस बात का दुख था कि रवींद्रनाथ ने मजदूरों के हित में असहयोग आन्दोलन का साथ नहीं दिया। इस कारण उन्होंने रवींद्रनाथ के प्रति कुछ नाराजगी भी दिखाई। वैसे शरत बाबू ने सक्रिय राजनीति में कभी भाग नहीं लिया क्योंकि उनका मन एक स्थान पर लगता ही नहीं था। वे सत्याग्रह के पक्षपाती भी नहीं थे क्योंकि कारागार में रहकर उनकी स्वतंत्रता का हरण हो सकता था। दूसरे जेल में तंबाकू खाने की व्यवस्था भी नहीं हो सकती थी। इस प्रकार शरत बाबू अपनी कहानियों में ही राजनीति की बातें लिख दिया करते थे जिसका सीधा प्रभाव जनता पर पड़ता भी था।

शरत बाबू चाहते थे कि देश से जमींदारी प्रथा समाप्त हो क्योंकि जमींदार कृषकों का शोषण करते थे जिसे देखकर शरत बाबू का हृदय रो उठता था। उन्होंने जमींदार प्रथा के विरोध में आवाज उठाई थी और कहा था कि एक दिन यह प्रथा अवश्य समाप्त होगी। उनकी भविष्यवाणी सत्य निकली। भारत जब स्वतंत्र हुआ तो कांग्रेस सरकार ने सबसे पहले जमींदारी प्रथा को समाप्त किया। उन्होंने 'पाथेर दाबी' नामक उपन्यास लिखा जिसमें उन्होंने क्रांतिकारियों के लिए नये संदेश देने की बात कही। वे क्रांतिकारियों के विचारों का आदर करते थे। उनका कहना था भारत में स्वराज्य की प्राप्ति क्रांति ही ला सकती है, अहिंसा नहीं। यद्यपि वे गाँधी जी के विचारों के विरोधी नहीं थे, तथापि उन्हें क्रांतिकारी विचारों से एक प्रकार का आनंद प्राप्त होता था। वे गुप्त रूप से क्रांतिकारियों की सहायता भी करते थे। एक दिन उन्हें देशबंधु के देहावसान का समाचार मिला। इस समाचार ने उनको बहुत दुःख पहुँचाया। लेकिन अब उनका मन राजनीति से उचाट खाने लगा। उधर अंग्रेज सरकार के पास 'पाथेर दाबी' पुस्तक की सूचना पहुँची तो उसने इनकी पुस्तक को जब्त कर लिया। लेकिन इस समय तक 'पाथेर दाबी' बंगाल के घर-घर में पहुँच चुकी थी। जब पुलिस उनके घर में तलाशी के लिए आई तो उसे 'पाथेर दाबी' की एक प्रति भी नहीं मिली। इससे सिद्ध होता है कि उनके विचारों को लोग सुनना चाहते थे।

शरत बाबू पशु-पक्षियों से बहुत प्रेम करते थे। उनके पास एक कुत्ता था जिसे वह बहुत प्यार करते थे। पक्षियों को वे प्रायः दाना डाल दिया करते थे और जब तरह-तरह के पक्षी दानों पर चोंच मारते थे तो उन्हें बड़ा आनंद आता था। साहित्य के क्षेत्र में उनकी कहानियाँ 'यमुना' नामक पत्रिका में छपती रहती थीं। अवकाश के क्षणों का सदुपयोग करके वे उपन्यास भी लिखते रहते थे। उन्होंने अपनी पुस्तकों की पाण्डुलिपियाँ अपने मित्रों को दे दीं। मित्रों ने उन्हें प्रकाशित करवाया। प्रकाशकों ने पारिश्रमिक के रूप में उनको काफी पैसा दिया लेकिन वे उस धन से दूसरों की सहायता कर देते थे। इस तरह उनकी जेब सदा खाली रहती थी।

बुढ़ापे में उनको कैंसर हो गया था परंतु वे अपने रोगों की कभी चिंता नहीं करते थे और कैंसर के कारण भी उन्होंने अपने मन को छोटा नहीं किया। जब कभी लोग बीमारी के बारे में पूछते तो कह देते कि रोग अपना काम करता है और मुझे अपना काम करना चाहिए। शरीर है तो बीमारी भी आएगी ही। डाक्टरों ने उनसे तंबाकू छोड़ने के लिए आग्रह किया लेकिन वे अंतिम समय तक तंबाकू खाते रहे। कुछ लोगों की इच्छा थी कि वह कैंसर का ऑपरेशन करा लें। परंतु उनके पास धनाभाव था। फिर भी कुछ मित्रों ने उनको एक अस्पताल में भर्ती करा दिया।

2.2 ‘आवारा मसीहा’ का साहित्यिक उद्देश्य

नोट

प्रत्येक साहित्यिक रचना के पीछे कोई न कोई उद्देश्य अवश्य रहता है। यह उद्देश्य प्रत्यक्ष भी हो सकता है और अप्रत्यक्ष भी। प्रत्यक्ष उद्देश्य से साहित्य का ‘कला पक्ष’ प्रबल होता है जबकि अप्रत्यक्ष उद्देश्य से साहित्य को एक ‘विकसित धारा’ मिलती है। यह हम भली-भाँति जानते हैं कि जब किसी रचना का निर्माण किसी उद्देश्य से किया जाता है तो उसकी स्वाभाविक आत्मा मर जाती है, उसमें सजीवता के भाव देखने को नहीं मिल पाते हैं। ऐसा लगता है जैसे रचना का शरीर दिखावटी शब्द-वस्त्रों से ढक दिया गया है। सच में सोचा जाए तो ‘अपनेपन’ और ‘सजीवता’ के विचार तभी आते हैं जब रचना का ढाँचा स्वतंत्र रूप से खड़ा किया जाता है। इसके साथ ही यदि उसमें उद्देश्य के छिंटे भी बीच-बीच में लग जाएँ तो रचना की आत्मा की शक्ति घटती नहीं है। श्री प्रभाकर जी ने साहित्य-समुद्र की गहराई को छाना है। उन्होंने साहित्य की अनेक विधाओं पर अपनी पैनी लेखनी से वार किया है। इसलिए इनकी रचना ‘आवारा मसीहा’ में व्यक्ति और समाज की वास्तविक धारा के साथ झरने-सी शैली और मनचली शब्द सुन्दरता का सृजन हुआ है। साथ ही लेखक ने समाज के प्रत्येक अंग को छूने का प्रयास भी किया है।

‘आवारा मसीहा’ बंगला भाषा के विश्व प्रसिद्ध साहित्यकार शरतचन्द्र की जीवनी है। इसे अध्ययन कर पाठक इस परिणाम पर पहुँचता है कि एक लुप्त जीवन चरित को बुनने में प्रभाकर जी ने कोई कसर नहीं उठा रखी है। जीवन चरित्र को इतने उदात्त स्थल पर शायद ही कोई लेखक पहुँचा सकता था, जितना प्रभाकर जी ने पहुँचाया है। मेरी दृष्टि में यह चाटुकारिता न होकर वास्तविकता है। इस प्रकार प्रभाकर जी ने अलभ्य, असंतुलित, लुप्त और अप्रकाशित घटनाओं को एक सूत्र में बाँध कर उन्हें प्रकाशित किया है। इसी का मूल्यांकन करना लेखक का मुख्य उद्देश्य है। लेखक ने शरत बाबू के जीवन से संबंधित ऐसी घटनाओं का वर्णन किया है जिनके विषय में किसी को भी कुछ बोध नहीं था। इन घटनाओं के द्वारा उन्होंने तत्कालीन समाज की स्थितियों, संबंधित राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक समस्याओं आदि पर भी विचार किया है। यद्यपि लेखक द्वारा इन बातों को समझाने का उद्देश्य गौण है तथापि जीवन चरित में इनकी भी परमावश्यकता है। उन्होंने स्वयं कहा है कि मैंने शरतचन्द्र जी की जीवनी को अधिक से अधिक प्रामाणिक बनाने के लिए अनेकानेक विवरणों का उपयोग किया है। उन्होंने श्री उमाप्रसाद मुकर्जी को हृदय से धन्यवाद दिया क्योंकि उनके द्वारा लेखक को शरत बाबू के जीवन की अनेक बातें प्राप्त हुई हैं। इस प्रकार ‘आवारा मसीहा’ का अध्ययन करके यह बात स्पष्ट हो जाती है कि शरत बाबू के जीवन चरित को लिखने का उद्देश्य एक ‘प्रामाणिक ग्रंथ’ की रचना करना था।



टास्क ‘आवारा मसीहा’ के उद्देश्य पर अपने विचार प्रस्तुत कीजिए।

शरतचन्द्र का पर्यटनशील जीवन—शरत बाबू ने अपने जीवन का अधिकांश समय इधर-उधर भ्रमण करने में ही बिताया। इसी कारण उन्होंने जो कुछ लिखा उसमें उनकी पर्यटनशीलता देखने को मिलती है। लेखक ने उनके घुमक्कड़ जीवन की घटनाओं को एकत्र कर जिस ग्रंथ की रचना की उसका सार्थक नाम ‘आवारा मसीहा’ रखा। संभवतः लेखक ने उनके निरुद्देश्य पर्यटन के कारण इस नाम में कुछ अच्छाई ढूँढ़ी हो। शरत बाबू ने वस्तुतः अपना समय आवारा व्यक्ति के समान ही व्यतीत किया और जो दुख देखा, उसके निवारणार्थ अनेक कष्ट सहन किए, उसके पीछे जीवन के उद्देश्य को पाने की संभावना ही झलकती है। लेखक का जिन लोगों से साक्षात्कार हुआ, प्रायः सभी ने यही कहा कि शरत बाबू स्वच्छ रहने में विश्वास रखते थे। इसी कारण उनके जीवन से किसी ने न तो कोई प्रेरणा ली और न उसे प्रतिदर्श माना।

बहुत से लोगों ने शरत बाबू को एक साहित्यकार स्वीकार नहीं किया क्योंकि उन लोगों ने उनमें एक साहित्यकार के गुणों का अभाव ही देखा। प्रभाकर जी ने पुस्तक की भूमिका में लिखा है, “छोड़ा भी, क्या था उसके जीवन

में जो तुम पाठकों को देना चाहोगे। नितान्त स्वच्छंद व्यक्ति का जीवन क्या किसी के लिए अनुकरणीय हो सकता है?” अर्थात् लेखक के कथनानुसार कोई भी उनके विषय में कुछ नहीं बताना चाहता था क्योंकि शायद उनका जीवन अनुकरणीय नहीं था। रंगून में वे शायद एक स्त्री के साथ रहकर जीवन व्यतीत करते थे और शराब पीने के आदी थे। लोग उनको अच्छा व्यक्ति न समझकर एक नीच व्यक्ति समझते थे। हो सकता है उनके समाज के विरुद्ध आचरणों को देखकर लोगों ने यह धारणा बना ली हो। लेकिन प्रभाकर जी ने उनके आवारापन में भी बहुत-सी अच्छाइयों को ढूँढ़ना चाहा—“शायद कमल कीचड़ में खिलता है और देखने वालों का मन मोह लेता है।”

शरत बाबू ने बचपन से ही आवारापन में अपना समय व्यतीत किया। उनकी शिक्षा-दीक्षा भी बंगाल के किसी एक नगर में नहीं हो सकी। पिता को एक स्थान पर टिककर रहने की आदत नहीं थी या फिर समाज ने उनको एक जगह टिकने ही नहीं दिया। इस कारण कभी तो शरत बाबू को नाना जी के घर रहना पड़ा तो कभी देवानंदपुर जाना पड़ा। इधर-उधर बार-बार आने-जाने के कारण उनकी पढ़ाई में बाधा पड़ती रही। उन्होंने एक मित्र मंडली बना ली थी जिसके साथ वे निर्जन स्थानों पर बड़े अटपटे खेल खेला करते थे। परंतु एकांत स्थानों पर अधिकांश समय बिताने के कारण शरत बाबू को प्रकृति को देखने-समझने का अच्छा अवसर प्राप्त हुआ। इस प्रकार जीवनभर वह अफीम, शराब और वेश्या आदि के संपर्क में रहें। लेकिन इन सबके पीछे इतने दीवाने कभी नहीं देखे गए कि उनका जीवन नारकीय हो जाता। उन्होंने अपने उपन्यासों में प्रकृति की सुंदरता का इतना सुंदर चित्रण किया कि कोई मद्यपी व्यक्ति कैसे कर सकता है? अतः यह कहा जा सकता है कि प्रकृति की सूक्ष्मता को समझने की उनकी दृष्टि अत्यधिक पैनी थी और इसी पैनेपन का इजहार उन्होंने अपने प्रत्येक उपन्यास में किया है। न जाने कितनी बार उन्होंने फूल और काँटों की वार्तालाप सुनी। न जाने कितनी बार उन्होंने गंगा के किनारे बैठकर ‘गंगा मैय्या’ की लहरों से ऐसे बातें की जैसे प्रायः बच्चे हरेक से बातें करते हुए दिखाई देते हैं। उन्होंने जैसे स्वयं से कहा—“मैं सूर्य, गंगा और हिमालय को साक्षी करके प्रतिज्ञा करता हूँ कि जीवनभर सौंदर्य की उपासना करूँगा। मैं जीवनभर अन्याय के विरुद्ध लड़ूँगा और मैं कभी छोटा काम नहीं करूँगा।” शायद इसी भ्रमणशील जीवन के फलस्वरूप उनके हृदय में घुमक्कड़पन के विचारों ने जन्म ले लिया हो। सचमुच बचपन से ही वे बंग समाज में व्याप्त अन्याय को देखकर काँप उठते थे। वे चाहते थे कि दुखी मानव जाति के कष्टों का निराकरण किया जाए तथा एक संघर्षशील जीवन को अपनाया जाए।

प्रभाकर जी ने लिखा है, “देवानंदपुर में रहते हुए एक बार लंबी यात्रा पर निकल पड़ा। इस बार उसका गन्तव्य स्थान था पुरी। यहाँ जाना अकारण और अनायास ही नहीं था।”

चलते-चलते उसका शरीर थक गया। न कहीं खाने की व्यवस्था, न ठहरने की सुख-सुविधा, परिणाम यह हुआ कि तीव्र ज्वर ने उसे जकड़ लिया। उसे एक पेड़ के नीचे आश्रय लेने को विवश होना पड़ा। उसी समय एक विधवा उधर से निकली। शायद उसने पानी माँगा था या वह कराहा था। वह तुरंत उसके पास गई। छूने पर उसका हाथ जैसे तपते तवे पर पड़ा हो। करुणा द्रवित वह बोल उठी—“राम! तुझे तो तेज बुखार है।”

वह उसे अपने घर ले गई। कई दिन की उसकी ममतापूर्ण सेवा-शुश्रूषा के बाद ही उसे ज्वर से मुक्ति मिल सकी। परंतु तभी एक ज्वर में वह फँस गया। उस विधवा का एक देवर था और एक था बहनोई। देवर चाहता था, वह उसकी होकर रहे। बहनोई मानता था कि उस पर उसका अधिकार है। लेकिन वह किसी के पास नहीं रहना चाहती थी। एक दिन दुखी होकर उसने शरत से कहा, “तुम अब ठीक हो गए हो, चलो मैं भी तुम्हारे साथ चलती हूँ।”

“और कहीं जाने को वह चुपचाप उसके साथ निकल पड़ी। इस निकल पड़ने के पीछे मात्र मुक्ति की चाह थी, लेकिन वह अभी कुछ ही दूर जा पाए थे कि उस विधवा के दोनों प्रेमी वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने किसी से कुछ नहीं पूछा। जी-भर कर शरत को पीटा और चीखती-चिल्लाती विधवा को वापस ले गए। वह पुरी के मार्ग पर आगे बढ़ा फिर गाँव-गाँव में आतिथ्य लाभ कर जब वह घर लौटा तो उसका चेहरा इतना विकृत था कि पहचाना तक न जाता था।”

“शरत फिर देवानंदपुर नहीं लौटा। यहाँ उसका जीवन घोर दारिद्र्य और अभाव में बीता। माँ और दादी के रक्त और आँसुओं से इस गाँव के पथ-घाट भीगे हुए हैं।”

नोट

इस प्रकार का जीवन था शरत बाबू का। वह दुखी प्राणी का दुख दूर करने के लिए तुरंत तैयार हो जाते थे। उसके लिए उन्हें चाहे कितने ही कष्टों का सामना क्यों न करना पड़े? उनका जीवन अभावों और कष्टों में बीता था। इसलिए वह दूसरों के दुख-दर्द को तत्काल अपनी ओर मोड़कर अपना जैसा समझने लग जाते थे। मानवता के प्रति उनमें अपार सहानुभूति थी और वह उसको समझने के लिए तड़प-तड़प उठते थे।

एक बार रंगून में प्लेग फैला। शरत बाबू उस समय रंगून में ही थे। उन्होंने अपने जीवन की चिंता किए बिना रोगी स्त्री-पुरुषों की जी-जान से सेवा की। प्रभाकरनी ने लिखा है, “प्लेग का यह आक्रमण इतना भयानक था कि हर व्यक्ति किसी दूसरे की चिंता किए बिना भाग खड़ा हुआ। रोगी अकेले तड़प-तड़पकर समाप्त होने लगे। शरत असहाय लोगों की सहायता करने में सदा आगे रहता आया था। यहाँ भी आगे रहा। जहाँ ‘प्लेग’ शब्द सुनकर बड़े से बड़ा साहसी भी अपने प्रिय से प्रियजन को छोड़ देता था, वहीं शरत एक अजनबी के पास भी पहुँच जाता था। बर्फ और औषधि खरीद देने तक में उसे संकोच नहीं होता था। राजू की पाठशाला में मानवीय करुणा का जो पाठ उसने पढ़ा था, उसे वह कभी नहीं भूल सका।”

एक दृश्य और, “कुछ देर बाद डॉक्टर के साथ वह वहाँ पहुँचे तो पाया, लकड़ी के तख्त पर चादर से मुँह ढके रोगिणी अचेतन अवस्था में छटपटा रही है। प्राण कंठ में आ गए हैं। एक बुढ़िया उसके सिरहाने बैठी पंखा झल रही है। डॉक्टर तुरंत समझ गए कि प्लेग है और बचने की कोई आशा नहीं है। दो क्षण उसे देखकर वह बाहर आ गए। शरत और भी कातर हो उठा। विकल-विह्वल वह शांति की प्राण-रक्षा के लिए बार-बार डॉक्टर से अनुरोध करने लगा। लेकिन वे क्या कर सकते थे? सान्त्वना देकर तथा उपचार बताकर वहाँ से चले गए। शरत फिर रोगिणी की शय्या के पास आ गया।”

“कुछ क्षणों के लिए शांति की संज्ञा लौटी। क्षीणकंठ से धीरे-धीरे उसने कहा, मेरे कारण आपको बहुत दुख पहुँचा है। उस सब के लिए क्षमा कर दो।”

शरत आर्द्र स्वर में बोल उठा—“ऐसी बात मत कहो। मुझे डर लगता है।”

शांति ने कहा—“छी! डर किस बात का? लाओ, जरा मुझे अपने पैरों की धूलि तो दो। आशीर्वाद भी दो।”

“शरत समझ गया कि अब आशीर्वाद देने को कुछ नहीं बचा है। सारे प्रयत्न व्यर्थ हो गए हैं। शांति संसार के दुख कष्टों को तुच्छ करके परलोक चली गई। वह अपलक दृष्टि से स्त्री की मृत्यु से विवर्ण मुख को देखता हुआ रो उठा।”

इस प्रकार शरत बाबू का दया-धर्म से पूर्ण हृदय दुखी प्राणी के दुख और कष्ट को देखकर रो उठता था। इस एक उदहारण से यह बात प्रमाणित हो जाती है कि जीवन के प्रति उनकी भावना और विचारधारा कितनी सजीव और करुणापूर्ण थी। वह वेश्याओं को भी समाज का अंग बताया करते थे। उनके दुख-दर्द को देखकर वह बर्फ की तरह पिघल जाते थे और उनकी सहायता करने के लिए तन-मन-धन से जुट जाते थे। वह वेश्याओं में भी गुणों को खोजते थे और उनसे कुछ शिक्षा ग्रहण करने की कामना करते थे। उनमें प्रेम, दया, करुणा और अपनत्व का इतना विशाल सागर तरंगित होता रहता था कि वह अपना भोजन तक सड़क पर घूमने वाले आवारा कुत्तों को दे देते थे और स्वयं भूखे रह जाते थे। वह मनुष्यों से प्रेम करने की बातें करते थे, घृणा करने की नहीं। उनकी दृष्टि में कोई भी मनुष्य बुरा नहीं था, भले ही वह चोर, डाकू या समाज को अपार कष्ट पहुँचाने वाला व्यक्ति क्यों न हो, वह कहते थे कि मनुष्य के अंतर में मानवता छिपी है, दानवता नहीं इसलिए हमें मनुष्यता को पहचानने का प्रयास करना चाहिए। यही कारण था कि जब कोई व्यक्ति उनके संपर्क में आता था तो वह श्रद्धा से अवनत हो जाता था और उनका आदर करने लगता था।

डॉ. धरणीधर ने शरत बाबू के संबंध में लिखा है, “शरतचन्द्र सचमुच एक प्रतिभाशाली लेखक थे। उन्होंने अपनी लेखनी से समाज की बड़ी सेवा की है।”

इन सब बातों के अतिरिक्त प्रभाकर जी ने शरत की जीवनी में समाज की वास्तविकताओं का भी चित्रण किया है।

नोट

इस विषय को स्पष्ट करने के लिए उन्होंने अनेकानेक प्रसंगों को प्रस्तुत किया है। इनका अध्ययन करके ऐसा लगता है कि प्रभाकर जी शरत बाबू से संबंधित सभी अंगों को स्पर्श करना चाहते थे। उनका उद्देश्य था कि समाज में घटने वाली घटनाओं का विवरण पाठकों के समक्ष रखा जाए ताकि वे भी उस काल के समाज की बारीकियों से अवगत हो सकें।



टास्क शरतचंद्र के पर्यटनशील जीवन पर टिप्पणी कीजिए।

प्रभाकर जी के साहित्यिक उद्देश्य को हम निम्नलिखित रूप में देख सकते हैं—

1. सामाजिक मान्यताओं का वर्णन
2. धार्मिक मान्यताओं का वर्णन
3. आर्थिक मान्यताओं का वर्णन
4. सांस्कृतिक मान्यताओं का वर्णन
5. राजनीतिक परिस्थितियों का वर्णन।

1. सामाजिक मान्यताओं का वर्णन—प्रभाकर जी ने ‘आवारा मसीहा’ में शरतकालीन समाज की मान्यताओं तथा परिस्थितियों का वर्णन बड़े ही स्वाभाविक रूप में किया है। इन मान्यताओं और परिस्थितियों के कारण ही शरत को लिखने की प्रेरणा मिली। इन्हीं मान्यताओं ने उनके हृदय में करुणा और दया का झरना बहाया और वे समाज की भलाई के लिए कुछ सोचने-समझने और कुछ करने के लिए पग-पग पर आगे बढ़ते हुए दिखाई दिए।

शरत जी के जन्म के समय के भारत में चारों ओर जागृति और प्रगति की लहर दौड़ रही थी। सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम का समय बीत चुका था और अंग्रेज भारत में दमन-चक्र चला रहे थे। लेकिन जिस बात को जितना दबाया जाता है, वह उतनी ही अधिक उछलती है। इस वैज्ञानिक सत्य के कारण देश में शांति के बीज पुनः प्रस्फुटित होने लगे थे। पादरी लोग ईसाई धर्म का प्रचार बढ़ी तेजी से कर रहे थे और भोले-भाले भारतीयों को तरह-तरह के प्रलोभन देकर उन्हें ईसाई बनाते जा रहे थे। इस कारण देश में पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति बढ़ी तीव्र गति से अपने पाँव जमाती जा रही थी। चूँकि अंग्रेज बंगाल में भली भाँति जम चुके थे, इसलिए पादरियों ने बंगाल को ईसाई धर्म प्रचार का एक बड़ा केंद्र बना लिया था। शुरू में भारत और विशेषकर बंगाल की जनता ने इन पादरियों को बुरा-भला कहा, लेकिन धीरे-धीरे जब जनता पादरियों के संपर्क में आती चली गई तो उनकी बातों और धर्म में भी रुचि लेने लगी। इस दृष्टि से देखा जाए तो बंगाल में सामाजिक जागृति फैलाने में पादरियों का बहुत बड़ा हाथ था।

पादरी वास्तव में भारतीयों का भला नहीं चाहते थे। वे तो समाज सुधार और शिक्षा के क्षेत्र में प्रचार के बहाने ईसाई धर्म फैलाना चाहते थे। वे कहते थे कि हिन्दू धर्म में अनेक कुरीतियाँ हैं। हिन्दू धर्म आडम्बरों और रूढ़ियों से भरा हुआ है। इसके विपरीत ईसाई धर्म सीधा-साधा है। इसलिए बंगालियों को ईसाई धर्म अपना लेना चाहिए। प्रचार की इस चमक-दमक को देखकर समझदार और विद्वान् लोगों में नये विचार उत्पन्न हुए और वे अपने धर्म में सुधार करने के लिए दौड़ पड़े। भारत में धर्म का भूत सर्वत्र मान्य रहा है। इसी ने व्यक्ति और समाज की मूलधारा को सदैव मोड़ दिया है। अतः राजा राममोहन राय जैसे समाज सुधारक ने धर्म सुधार की ओर विशेष ध्यान दिया। उन्होंने कहा—“हिन्दू धर्म विश्व का एक श्रेष्ठ धर्म है। इसमें सदैव से ही निराकार ब्रह्म की उपासना पर बल दिया गया है। हिन्दू धर्म में ईश्वर एक ही है, ऐसा हर ग्रंथ में समझाया गया है।” ऐसी बातें बंगाली जनता के सामने रखकर उन्होंने ‘आत्मीय सभा’ की स्थापना की थी। इस सभा में बंगाल के प्रसिद्ध विद्वान आकर जुड़ते थे। वे धर्म चर्चा के साथ-साथ जाति-पाँति की समस्या, बाल विवाह, बहु विवाह और सती प्रथा जैसी ज्वलंत सामाजिक कुप्रथाओं पर

भी विचार करते थे। देखा जाए तो बंगाल में समाज सुधार की यह पहली कड़ी थी जिसे आगे चलकर अनेकानेक विद्वानों ने बल दिया। सामाजिक सुधार का यह महत्वपूर्ण कार्य धीरे-धीरे संपूर्ण भारत में फैलाया गया। इसी वृक्ष की शाखाओं के रूप में प्रार्थना समाज, ब्रह्मसमाज, आर्यसमाज, थियोसोफीकल सोसाइटी आदि संस्थाओं की स्थापना की गई।

सुधार के इन कार्यों को बंगाली समाज में अच्छी निगाह से नहीं देखा जाता था। संभवतः इसके दो कारण थे—(1) अभी तक उच्च सामाजिक शिक्षा का प्रचार नहीं हो पाया था और (2) परंपरागत रूढ़िवादी मान्यताओं को तोड़ने से बहुत से ढोंगी लोगों की रोजी-रोटी पर सीधा आघात होता था। प्रभाकर जी ने लिखा है, “विधवा विवाह, जाति-विचार, कुलीनता, धर्माडम्बर के विषय में लोगों की भावनाएँ अत्यंत संकीर्ण दायरे में सीमित थीं, इसलिए नवजागरण के विश्वासी व्यक्तियों को बुरी दृष्टि से देखा जाता था।”

बिहार में भी बंगालियों के निवास स्थान थे। वे बंगालियों को भली निगाह से नहीं देखते थे। वे नहीं चाहते थे कि भद्र लोगों की बंगाली कन्याएँ पढ़ाई-लिखाई करें या अच्छी शिक्षा ग्रहण करने के लिए वे आगे बढ़ें। वे कहते थे कि बंगालियों की जाति शुद्ध नहीं है। वे माँस-मछली और भात खाते हैं और अपनी लड़कियों की पवित्रता पर कोई अंकुश नहीं लगाते हैं। ऐसी विषय परिस्थितियों में भी राजा राममोहन राय जैसे भद्र पुरुषों ने बंगाली समाज में सुधार करने का बीड़ा उठाया और वह अन्य विद्वानों को भी अपनी ओर आकर्षित करने में सफल हुए।

2. धार्मिक मान्यताओं का वर्णन—बंगाल में धर्म की प्राचीन मान्यताओं को तोड़-मरोड़ कर नया रूप दे दिया गया था। इसलिए धर्म के अंधविश्वासों के कारण समाज का अधःपतन हो रहा था। जनता किसी भी नई बात को मानने के लिए तैयार नहीं होती थी। इसी के साथ ही ईसाईयों के धर्म प्रचार के कारण सनातन धर्मी भारतीय (हिन्दू) धर्म की जड़ों को फिर से हरा-भरा बनाकर उसे नया रूप देने के लिए जुट गया था। एक ओर तो धार्मिक मान्यताओं की यह दशा थी और दूसरी ओर कुछ भद्र लोगों का कहना था कि धर्म की पुरानी मान्यताएँ समाज और व्यक्ति के विकास में बाधा उत्पन्न कर रही हैं। इसलिए उनको तोड़ देना चाहिए। इन सब बातों को ध्यान में रखकर ही प्रभाकर जी ने ‘आवारा मसीहा’ की रचना की। उन्होंने जीवन चरित में शरतकालीन धार्मिक विचारों को भी स्पष्ट किया है। अतः शरत जी के साहित्य में जो धार्मिक विचारधारा झरती है, उसके माध्यम से धार्मिक मान्यताओं का वर्णन भी किया गया है।

शरत बाबू ने भारतीय समाज की मूलभूत समस्याओं पर गंभीरतापूर्वक विचार किया है। सती प्रथा के प्रश्न ने भारतीय समाज में एक विचित्र-सी स्थिति उत्पन्न कर दी थी। अतः शरत बाबू ने सती प्रथा को घृणित बताते हुए बंग-भाषियों के सामने नये विचार रखे। उस काल में इस प्रकार के विचार रखना हँसी-खेल नहीं था क्योंकि यह समाज की भावनाओं पर सीधी चोट थी। लेकिन शरत बाबू ने इसकी तनिक-सी भी चिंता नहीं की। उनका कहना था कि यदि हमारे पुरुषों की भूल से कोई प्रथा गलत सिद्ध हो चुकी है तो उसमें सुधार करना हम सबका कर्तव्य है। पुरुष हो या स्त्री यदि वे गिर जाते हैं तो उनके उठने का मार्ग खुला रहना चाहिए। हिन्दुओं ने स्वयं अपने समाज को हानि पहुँचाई है क्योंकि सती प्रथा की घृणित काया के कारण ही हिन्दू समाज से हजारों-लाखों स्त्रियाँ निकल कर विधर्मी हो गई हैं। उनका कहना था, “किसी विशेष धर्म के संबंध में मैं न तो कभी कुछ कहता हूँ, न कहना चाहता हूँ, शायद मैं किसी धर्म में आस्था नहीं रखता, पर इतना तो कहूँगा, जिसे आप हिन्दू धर्म कहते हैं उसी पर हमें पंगु और जड़ बनाने की सबसे बड़ी जिम्मेदारी है। मेरे लिए जीवन ही सब-कुछ है। मरने के बाद जीवन है या नहीं, मैं नहीं जानता।”

शरत बाबू के उपन्यास साधारण जनता के लिए थे। अतः जब स्त्रियों ने समाज सुधार, धर्म और सती प्रथा आदि के संबंध में ऐसे विचार पढ़े तो वे शरत बाबू की विरोधी हो गईं। ब्रह्म समाज से जुड़ी अनेक स्त्रियों ने भी शरत बाबू को बुरा भला कहा। परंतु शरत बाबू जरा भी अपने मार्ग से नहीं हटे। उन्होंने सदैव यही कहा—“मानव को मानव समझने में ही समाज का भला है। यदि मैं मानव को पशु से ऊपर उठने की बात करता हूँ तो उसमें कुछ भी बुराई नहीं है।”

एक स्थान पर उनके दृढ़ शब्दों का रसास्वादन इस प्रकार लिया जा सकता है, “कोई धारणा या वस्तु बहुत प्राचीन काल से चली आई है इसी कारण वह सही नहीं है। कुछ भी हमेशा के लिए सही नहीं हो सकता। सतीत्व परिपूर्ण मनुष्यता का एक अंग है। वह मनुष्यता पर हावी नहीं हो सकता। कर्तव्य और अधिकार का संबंध ऐसी अविच्छिन्न है कि एक न रहे तो दूसरा निरर्थक हो जाता है। मैं शास्त्र का ज्ञाता होने का दावा नहीं करता, मेरा कोई धर्म ही नहीं है, पर जो कुछ देखता आ रहा हूँ इससे लगता है कि शास्त्रों में पुरुषों के लिए किसी कर्तव्य की चर्चा नहीं है। उनके अधिकार ही अधिकार बताए गए हैं। पुरुषों के लिए कुछ वर्जित नहीं पर किसी युवती का जरा सा पैर फिसल जाए तो फिर उसकी मुक्ति नहीं, ऐसा क्यों? उसके लिए समाज में फिर लौट कर सम्मान का स्थान प्राप्त करना क्यों बंद हो जाता है? क्या उसके प्राण नहीं? मैं तो कहता हूँ कि इसमें इतना बड़ा प्राण है जितना किसी गृहस्थ स्त्री में दुर्लभ है।”

3. आर्थिक मान्यताओं का वर्णन—श्री विष्णु शर्मा ने आर्थिक मान्यताओं एवं परिस्थितियों का वर्णन भी बड़ी सूझ-बूझ के साथ किया है। अर्थात् शरत बाबू के काल में तत्कालीन समाज में देश की आर्थिक दशा कैसी थी और शरत जी का जीवन उन आर्थिक परिस्थितियों के मध्य किस रूप में व्यतीत हुआ? इस प्रकार लेखक का एक उद्देश्य आर्थिक मान्यताओं का वर्णन करना भी हो जाता है। उन्होंने लिखा है कि शरत का बचपन कितनी गरीबी में बीता। उनकी माता उनके किए स्कूल की फीस भी नहीं भर पाती थीं। इसी कारण शरत बाबू की पढ़ाई भी ठीक प्रकार से नहीं हो सकी। अंत में शरत बाबू को रंगून में चाकरी के लिए जाना पड़ा। चूँकि शरत ने आरंभ से ही जीवन को नजदीक से जिया, इसलिए उनके हृदय में दया, सहानुभूति, मानवता आदि के गुण अंत तक बने रहे। उस समय बंगाल की आर्थिक स्थिति को दुष्ट और धूर्त अंग्रेजों ने बिगाड़ दिया था। अतः समाज में अनेक माता-पिता अपनी कन्याओं के विवाह तक नहीं कर पाते थे। समाज में विधवाओं के लिए पुनर्विवाह के द्वार बंद थे। विवश होकर विधवाएँ विधर्मियों के हाथ पड़ जाती थीं, या फिर वे जीवन भर नारकीय जिन्दगी जीने के लिए विवश रहती थीं। कदम-कदम पर स्त्रियों को दुख, कष्ट, अभाव आदि सहन करने पड़ते थे। उनको पर्दे में रहना पड़ता था क्योंकि यदि उन पर पराये पुरुष की छाया भी पड़ जाती है तो वे कलकिली मान ली जाती थीं। दूसरी ओर कुलीनता ने भी उनको कीचड़ में पड़ी रहने के लिए विवश कर दिया था। ऐसी बहुत-सी कन्याएँ थीं जिनके विवाह ही नहीं हो पाते थे। ऐसी कन्याओं को कुलीन रसोइए कुछ रुपयों के बदले पाटे पर बैठकर पार कर देते थे। ये कन्याएँ माँग में सिंदूर भरकर विधवाओं से भी बुरा जीवन जीती रहती थीं।

शरत बाबू ने दूसरा विवाह भी आर्थिक संकट को ‘जीवित देखकर’ ही कर लिया था। बाबू कृष्णदास कन्या के विवाह के लिए धन तथा दहेज इकट्ठा करने के लिए बंगाल से रंगून जा पहुँचे थे। वहीं उनका साक्षात्कार शरत बाबू से हुआ। शरत बाबू को देखकर उन्होंने अपनी कन्या उन्हें सौंपने के लिए प्रार्थना की। पर शरत बाबू इसके लिए तैयार नहीं हुए। अंत में उन्होंने शरत जी से कहा—“यदि आप मोक्षदा से विवाह नहीं करना चाहते तो मुझे कुछ धन दे दीजिए, जिससे मैं देश लौटकर लड़की का विवाह कर सकूँ।” शरत बाबू कृष्णदास को धन देने में असमर्थ थे। अंत में शरत बाबू को मोक्षदा को स्वीकार करना पड़ा।

इस प्रकार बंगाल के समाज में माता-पिता धनाभाव के कारण अपनी कन्याओं को कुपात्र या सुपात्र किसी को भी सौंपने के लिए तैयार हो जाते थे। वे इतने असहाय थे कि उनके सामने प्रेम और ममता भी अभिशाप नजर आते थे। बंग समाज इसी प्रकार के उदाहरणों से भरा पड़ा है, जिसे शरत बाबू ने यथास्थान अपने साहित्य में उतारा है। लेखक ने उसी से उद्धृत होकर सार्थक चित्रण किया है।

4. सांस्कृतिक मान्यताओं का वर्णन—लेखक ने तत्कालीन सांस्कृतिक मान्यताओं का भी वर्णन किया है। शरत बाबू की जीवनी में प्रभाकर जी ने यात्रा, लीला, मृत्यु भोज आदि का वर्णन किया है। इससे प्रकट होता है कि लेखक का एक उद्देश्य सांस्कृतिक परिस्थितियों व मान्यताओं को भी दर्शाना है। शरत बाबू की मान्यता है कि विश्व की सभी उन्नत कलाओं में ईश्वर की सत्ता विराजमान है। यदि व्यक्ति बुरी वस्तु को सुंदर दृष्टि से देखे तो उसे संसार में कुछ भी बुरा नहीं दिखाई देगा। वस्तु बुरी नहीं होती है, वरन हमारी दृष्टि की तुलनात्मक सूझ बुरी या अच्छी होती है।



टास्क शरतचंद्र का झुकाव कौनसे राजनीतिक दल की ओर था?

नोट

5. राजनीतिक परिस्थितियों का वर्णन—शरत बाबू अपने उपन्यासों के द्वारा प्रसिद्धि के शिखर पर पहुँच चुके थे। उस समय देश में स्वतंत्रता की लहर तेजी से दौड़ने लगी थी। जनता दुष्ट, धूर्त और मक्कार अंग्रेजों की गुलामी की जंजीरों को तोड़कर फेंक देना चाहती थी। इस समय देश में राजनीति की धरती नई चादर ओढ़ रही थी। इन सब परिस्थितियों से शरत बाबू का प्रभावित होना स्वाभाविक था। प्रभाकर जी ने शरत बाबू की जीवनी में तत्कालीन राजनीतिक विचारधाराओं और परिस्थितियों का भी वर्णन किया है। एक उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाती है—

“देशबंधु चित्तरंजन दास स्वयं मन-प्राण से इस आंदोलन में कूद पड़े थे। राष्ट्रीय कांग्रेस के अमृतसर अधिवेशन में उन्होंने सक्रिय भाग लिया। शरत बाबू का देशबंधु के साथ अत्यंत स्नेह था, इसलिए वे भी बड़ी तेजी के साथ उस ओर खिंच गए। जलियावाला बाग हत्याकाण्ड के प्रतिशोध में हावड़ा में जो विशाल सभा हुई, उसमें उन्होंने प्रत्यक्ष भाग लिया और इस प्रकार देशबंधु दास के साथ उनका जो संपर्क था उसे निरा साहित्यिक ही रहने दिया।”

शरत बाबू का राजनीतिक झुकाव सदा गरम दल की ओर रहा। लोकमान्य के प्रति उनकी सच्ची श्रद्धा थी। ‘हरिलक्ष्मणी’ में मंजली बहू शरमाते हुए, हँसते हुए कहती है, “तिलक महाराज की तस्वीर देख-देख कर बनाने की कोशिश की थी जीजी, पर कुछ बनी नहीं।” यह कहते हुए उसने उँगली उठाकर सामने की दीवार पर टंगे हुए भारत के कौस्तुभ लोकमान्य तिलक का चित्र दिखा दिया। उन्होंने तिलक का जब 31 जुलाई की आधी रात के बाद देहावसान हो गया तब व्याकुल मन शरतचंद्र ने लिखा, “तिलक केवल हमारे भाई ही नहीं थे, बंधु ही नहीं थे, नेता ही नहीं थे, वे हमारे बाइस करोड़ के मलिन ललाट थे, शुभ्र गौरवमय तिलक थे। वह तिलक आज मिट गया है। हम अनाथ हो गए हैं।”

पहला अवसर था जब गाँधी जी के आह्वान पर भारत की नारी सामूहिक रूप में पुरुष के कन्धे से कन्धा मिलाकर रणभूमि में उतरी भी। दोनों साथ-साथ रहेंगे तो क्या अप्रतीकर घटनाएँ घटेंगी? यह आशंका अनेक व्यक्तियों को परेशान कर रही थी। शरत बाबू ने इस अवसर पर स्पष्ट शब्दों में कहा, “मशाल के दीप्त प्रकाश से अंधकार नष्ट होता है, यही बात सब लोग जानते हैं लेकिन उससे उठने वाली किंचित बदबू की ओर क्या किसी का ध्यान जाता है? जलप्लावन से धरती उर्वर हो उठती है। यदि उस जल के साथ कुछ मैला भी आ जाए तो परेशान होने की क्या बात है?”

“आंदोलन का एक प्रमुख अंग था सरकारी स्कूलों और कॉलेजों का बहिष्कार। कांग्रेस ने छात्रों के अभिभावकों से अनुरोध किया कि वे अपने बच्चों को सरकारी स्कूलों और कॉलेजों से निकाल लें। इस प्रार्थना का अच्छा प्रभाव हुआ। देखते-देखते असंख्य छात्र स्कूलों और कॉलेजों से बाहर आ गए। देशबंधु दास ने बैलिंग्टन स्क्वायर की ‘फरवीज मेशन’ की विशाल अट्टालिका में ‘गौड़ीय सर्वविद्या आयतन’ नाम से राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना की और उसके परिचालन के लिए यहीं पर एक राष्ट्रीय विद्यालय ‘कलकत्ता विद्या मंदिर’ भी स्थापित किया गया। महात्मा गाँधी ने इसका उद्घाटन किया।”

“बंगाल में आंदोलन के संचालक देशबंधु दास थे। बाजारों में खादी बेचने के लिए जो स्वयं सेवक गए, उनमें उनके पुत्र भी थे। उन्हें बंदी बना लिया गया। उसके बाद उनकी पत्नी बासन्ती देवी और बहिन उर्मिला देवी ने नेतृत्व संभाला। युवराज उसी समय कलकत्ता पधारे। उस दिन हड़ताल का अनुरोध करने के कारण बासन्ती देवी को भी गिरफ्तार कर लिया गया। बंगाल में जैसे उत्साह का तूफान जाग उठा। शरच्चंद्र की उत्तेजना का कोई पार नहीं था। भारतवर्ष के संपादक जालंधर सेन उन्हें प्यार करते थे। बार-बार निराश होकर भी उनके पास लेख माँगने के लिए आना उन्होंने नहीं छोड़ा था।”

इस प्रकार लेखक ने शरत की जीवनी में तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों और मान्यताओं का वर्णन भी उद्देश्यपूर्ण किया है।

नोट

सारांश—उपर्युक्त विवेचन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि प्रभाकर जी का उद्देश्य किन मान्यताओं में निहित है और वह जीवन चरित्र के माध्यम से क्या कहना चाहते हैं? व्यक्ति के चरित्र का उद्घाटन करते हुए उन्होंने मानव अनुभूतियों का बड़ा सुंदर वर्णन किया है। इसी कारण उनके जीवन चरित्र का उद्देश्य राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और सांस्कृतिक भी है। इन सभी का वर्णन लेखक ने बड़े मनोयोग से किया है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

7. मोक्षदा जीवनभर शरतबाबू के साथ रही।
8. शरत कहते थे—‘मनुष्य के अंतर में दानवता छिपी है, मानवता नहीं।’
9. शरत के आवारापन ने ही उन्हें महान साहित्यकार बनाया।

2.3 ‘आवारा मसीहा’ के नामकरण की सार्थकता

मनुष्य के जीवन में नाम की बड़ी महत्ता है। नाम से वस्तु का संगठित रूप व्यक्ति के सामने आ जाता है। यही कारण है कि संसार की प्रत्येक वस्तु अपने नाम से ही जीवित है। नाम के बिना या तो वह वस्तु नष्ट हो जाती है या फिर लोग उसे भूल जाते हैं। जब कभी उन्हें उस वस्तु की पुनः याद आती है तो वे सर्वप्रथम उसका नाम ही याद करते हैं। साहित्यिक रचना के संबंध में भी यही बात है। लेखक सर्वप्रथम कृति का नामकरण करता है। तदुपरांत वह उसके शरीर को विस्तार देता है। यह नाम ही है जिसके कारण वह हजारों साहित्यिक रचनाओं में से पहचानी जाती है। यह नाम ही है जिसको पुकारते ही लेखक के यश और सम्मान का बखान भी साथ-साथ होने लगता है। इसलिए रचना चाहे वह कहानी, निबंध, उपन्यास, जीवनी आदि कुछ भी हो, उसके नाम का सामने आना एक प्रकार से अनिवार्य-सा है।

जीवनी लेखक अपनी कृति का नाम प्रायः चरित्र नायक की विशेषताओं को ध्यान में रखकर केन्द्रीय स्थिति के अनुरूप गढ़ता है। इसके बाद वह उसे सिद्ध करने के लिए नायक के रूप को विस्तार देता है। पाठक बिना नाम की पुस्तक को कभी ग्रहण नहीं करना चाहता। नाम के द्वारा ही उसके चरित्र नायक का सामान्य परिचय हो जाता है। इसलिए प्रत्येक लेखक इस बात का प्रयास करता है कि कृति का नाम संक्षिप्त, सार्थक और संपूर्ण रचना के भाव को स्पष्ट करने वाला होना चाहिए। हिन्दी साहित्य में अनेक रचनाकारों की जीवनियाँ मिलती हैं। प्रायः सभी का नामकरण रचनाकारों के गुणों के आधार पर ही रचा गया है। उदाहरण के लिए प्रेमचंद्र की जीवनी ‘कलम का सिपाही’, ‘पथ के साथी’ आदि नामों से लिखी गई है। उसी प्रकार अन्य विश्वविख्यात लेखकों की जीवनियाँ भी लगभग उनकी अपनी विशेषताओं के आसपास बुनी गई हैं।

‘आवारा मसीहा’ नामक कृति जो श्री विष्णु प्रभाकर द्वारा शरत बाबू के जीवन चरित्र पर लिखी गई है, इसी श्रेणी में आती है। पुस्तक के नाम को पढ़कर पाठक सोचने के लिए विवश हो जाता है कि विश्वविख्यात लेखक शरत क्या वास्तव में ‘आवारा मसीहा’ ही था। सचमुच शरत बाबू का जीवन एक आवारा व्यक्ति के समान इधर से उधर रहने और आने-जाने में ही व्यतीत हुआ। विरोधाभासों के बीच उभरा उनका घुमक्कड़ जीवन वास्तव में उनको ‘आवारा मसीहा’ सिद्ध कर देता है। नाम की इस सार्थकता को हम इस प्रकार समझने का प्रयास करेंगे।

श्री विष्णु प्रभाकर ने शरत बाबू के जीवन से संबंधित जो सामग्री इकट्ठी की उससे यही बात साबित होती है कि शरत बाबू पर्यटनशील व्यक्ति थे। कुछ तो अपने पिता की घुमक्कड़ प्रवृत्ति के कारण और कुछ शरत के एक स्थान पर न टिकने के कारण उनमें आवारापन के भाव आ गए थे। इसीलिए प्रभाकर जी ने ‘आवारा मसीहा’ के नाम से रचना की। शरत बाबू की इस प्रवृत्ति के कारण कुछ लोग उनको साहित्यकार मानते ही नहीं हैं वे कहते हैं कि शरत

नोट

अपना समय बुरी संगत के लोगों और वेश्याओं के बीच बिताया करते थे। परंतु असल में यह बात नहीं है। शरत बाबू पर्यटनशील होते हुए भी वेश्यागामी तथा चरित्रहीन नहीं थे। उन्होंने इस रहस्य को अपनी पुस्तकों में भी खोल दिया है क्योंकि वह वास्तविक जीवन की बातों को कभी नहीं छिपाते थे। लोगों ने उनकी आवारागर्दी को देखकर उनके विषय में झूठी-सच्ची बातें गढ़ ली हैं। वह अपने जीवनकाल में बंग समाज के व्यंग्यबाणों से दुखी रहते थे। इस दुख को समेटने के लिए ही उन्होंने साहित्य के माध्यम से सामाजिक कुरीतियों को निकालने की चेष्टा की। वह जीवनभर अन्याय के विरुद्ध लड़ते रहे। यह ठीक है कि वह शराब पीने लगे थे लेकिन शायद शराब पीने के पीछे भी उनके हृदय को अपूर्ण प्रेम द्वारा ठेस पहुँचाने की भावना थी। खोजों से पता चला है कि जीवन के आखिरी दिनों में उन्होंने शराब भी छोड़ दी थी।

असल में शरत बाबू ने बचपन से ही अनेक ऐसे कार्य करने आरंभ कर दिए थे जो एक मसीहा ही कर सकता है। वे प्लेग के रोगियों की सेवा निःस्वार्थ भाव से करते थे। दूसरों के दुखों को अपना दुख समझकर उसे दूर करने के लिए तन-मन-धन से जुट जाना जैसे उनकी आदत बन गई थी। वह अछूतों, दरिद्रों और कोढ़ियों की सेवा के लिए जुट जाते थे। यही कारण था कि उन्होंने एक बूढ़े का संस्कार भारी वर्षा की चिंता न करते हुए ही अपने मित्र राजू की सहायता से किया। वे दूसरों की सेवा के लिए स्वयं को जैसे होम कर देते थे। इतने पर भी यदि लोग उनको भ्रष्ट, आवारा और दुराचारी कहते थे तो वे इस बदनामी को भी अपने ऊपर ओढ़कर शांत रहते थे। ईसा मसीह ने यहूदियों के समाज में सुधार का बीड़ा उठाया था और उनके दुःखों को दूर करने के लिए सूली पर चढ़ गए। राबिया ने अरब के समाज की बुराइयों को दूर करने के लिए अपने को मिटा दिया। ये लोग वास्तव में गले-सड़े समाज में सुगंध फैलाना चाहते थे। शरत ने भी बंग समाज की कुरीतियों को दूर करने के लिए साहित्य का सहारा लिया।

शरत बाबू कहते थे कि हिन्दू धर्म मूर्खों की पूजा करता है, जिन्दों की नहीं। वह धर्म की झूठी और आडम्बरपूर्ण मर्यादाओं का खुलकर विरोध करते थे। यही कारण था कि वे मानव जाति को जितना प्रेम करते थे उतना ही पशु-पक्षियों को चाहते थे। पक्षी या पशु की मृत्यु हो जाने पर उनकी आँखें झर-झर आँसू की धारा बहाने लगती थीं। वे सोचने लगते थे। इनका कौन है सिवाय हमारे? भगवान ने इनको हमारे सहारे ही तो बनाया है। यदि हम इनकी सहायता नहीं करेंगे तो ये दुनिया से मिट जाएँगे। तब क्या यह सच नहीं है कि पशुओं की बहुत सी प्रजातियाँ मानव की देखभाल की कमी के कारण मिट गईं? जिस समय वे रंगून में थे तो अचानक उनके घर में आग लग गई। एक धोबी के रोने-धोने और चीखने-चिल्लाने से पता चला कि उसकी बकरी आग में फंस गई है। सुनते ही शरत बाबू उस भयानक आग में कूद पड़े और धोबी की बकरी को बाहर निकाल लाए। सोचने की बात है कि कोई साधारण व्यक्ति क्या ऐसा कार्य करने के लिए तत्पर हो जाएगा? घर में लगी आग में उनका वर्षों का परिश्रम जलकर खाक हो गया और वह चुपचाप उस गम को पी कर रह गए। अवश्य ही ऐसा कोई मसीहा ही कर सकता है। मसीहा दूसरों के दुख को दूर कर करने के लिए जीता-मरता है। उसे अपनी चिंता बिल्कुल नहीं होती है।

मसीहा एक ऐसा विशिष्ट व्यक्ति होता है जिसे पग-पग पर कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। जिसका विरोध छोटे-बड़े सभी करने के लिए तैयार हो जाते हैं। समाज में शरत बाबू को चरित्रहीन और नास्तिक व्यक्ति समझा जाता था परंतु क्या वह वास्तव में नास्तिक थे? असल में जो व्यक्ति धर्म भीरू होता है वही नास्तिक भी होता है। वह कहते थे कि भले ही मैं भगवान को न मानता हूँ लेकिन कम से कम मैं उस व्यक्ति को अवश्य प्यार करता हूँ जो ईश्वर की पूजा करता है। वे एक अशिक्षित और दरिद्र व्यक्ति की सच्ची भक्ति में देवत्व के दर्शन करते थे। यही बात रवीन्द्रनाथ ने भी गीतांजलि में कही है, “ईश्वर सड़क पर पत्थर कूटने वालों के पास है, हमारे पास नहीं, यदि ईश्वर के दर्शन करना है तो हमें दरिद्रों की झोंपड़ी में जाना चाहिए।” यही बात अरब की परम विदुषी राबिया ने कही थी कि हम बंदगी स्वार्थवश करते हैं इसलिए ऐसी बंदगी ईश्वर कभी कबूल नहीं कर सकता।

इस प्रकार शरत बाबू के संबंध में हजारों ऐसी बातें हैं जो केवल मसीहा के लिए ही सही साबित हो सकती हैं। समाज का निरंतर विरोध सहते हुए भी वह अपने मार्ग से पीछे नहीं हटे। जब उन्होंने ‘चरित्रहीन’ जैसी ऊँची कृति लिखी तो समाज में उनका पत्थर मार कर विरोध हुआ परंतु उन्होंने सबसे यही कहा कि इस रचना को भीतर से

नोट

झाँक कर देखो। तब शायद तुम लोगों को पता चलेगा कि हमारा समाज कैसा है? वह स्त्रियों को बहुत सम्मान करते थे। इसीलिए शायद रूढ़िवादी और अंधविश्वासी समाज ने उन पर यह आरोप लगाया था कि वह वेश्याओं को अच्छा समझते हैं परंतु उन्होंने इसकी चिंता नहीं की क्योंकि वह वेश्याओं में भी मानवता के गुण देख चुके थे। इस दृष्टि से शरत बाबू स्त्रियों को अँधेरी और दुर्गन्धयुक्त कोठरियों से बाहर निकाल कर प्रकाश में लाना चाहते थे।

उनके पिता ने एक स्थान पर बँधकर रहने में न तो अपना हित देखा और न कभी कोई बँधा हुआ रोजगार या नौकरी की। कभी वह अपनी ससुराल में रहे तो कभी किसी दूसरी जगह। ऐसे ही गुण बालक शरत में भी आ गए थे। नाना के घर के बंधनों ने उनको आवारा बनने के लिए प्रेरित किया। गंद को पानी में जितना डुबाया जाता है उतनी ही वह उछलती है। बछड़े को खूँटे से बाँध दो तो वह रस्सी तोड़कर भागने के लिए प्रयास करता रहता है। शरत बाबू के रक्त में स्वच्छंदता, एकांत भाव और भ्रमणशीलता घर कर गई थी। अतः वह समाज और परिवार के बंधनों को कैसे स्वीकार कर सकते थे? यही कारण था कि वह कभी शमशान को अपना बिछौना बनाते तो कभी खण्डहर को अपना ओढ़ना। जब वे बड़े हुए तो उनका मन बंगाल की श्यामला धरती से ऊब गया और वे रंगून चले गए। वहाँ भी वह हरी-भरी धरती का आश्रय ढूँढ़कर लुढ़क जाया करते थे। रंगून में मन नहीं लगा तो कलकत्ता वापस आ गए। कलकत्ता में आदमियों का जंगल और शोर-शराबा उन्हें पसंद नहीं आया और वह गाँव में घर बनाकर रहने लगे। घर भी उन्होंने कहाँ बनाया? नदी के किनारे, जहाँ प्रकृति की निकटता उनसे न छिने पाए।

इन सब बातों को देखकर क्या यह सत्य नहीं है कि उनके आवारापन ने उन्हें महान साहित्यकार बनाया, उन्हें मानवता की पूजा करना सिखाया। उनमें जीवन को नए सिरे से, नए कायदे से जीने के भाव आए। यद्यपि उन्होंने परंपरागत धिसे-पिटे संस्कारों और मान्यताओं को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। एक नजर से उनको हम आवारा ही कह सकते हैं क्योंकि वे जिस नगर, गाँव या मुहल्ले में रहने के लिए गए, वह सदैव निर्धनों, दुखियों, दरिद्रों, वेश्याओं और आवारा लोगों के मुहल्ले में रहे। उन्हें बड़े लोगों, कथित सभ्य लोगों और न्यायविदों के मुहल्लों में रहना पसंद नहीं था। वे कहते थे कि संभ्रान्त और कुलीनों का जीवन मर्यादा में बंधा हुआ होता है। वे स्वार्थी और अन्यायी होते हैं। इसके विपरीत दुखी और दरिद्र का जीवन सच्ची आत्मा के अत्यधिक निकट होता है। वे यदि झूठ बोलते हैं तो अपने पेट के लिए, दूसरों को धोखा देने के लिए झूठ कभी नहीं बोलते हैं। इसलिए उनसे कुछ सीखा जा सकता है, उनसे कुछ ग्रहण किया जा सकता है।



टास्क कौनसी घटना ने शरतचन्द्र को वेश्याओं का प्रशंसक बनने पर विवश कर दिया?

शरत बाबू कहते थे कि सच्ची नारी वेश्याओं के हृदय में छिपी है। यह दूसरी बात है कि समाज उनको अच्छी दृष्टि से नहीं देखता पर असल बात यही है कि समाज ने ही उनको वेश्या बनने के लिए विवश किया है। समाज ने उनके शरीर में काँटे भरे हैं। इसलिए वेश्याओं के पास वह स्नेहमयी दृष्टि और दया-धर्म से भरा हृदय देखा करते थे। वह शराब पीने और अफीम खाने के शौकीन थे। लेकिन इन दोनों कार्यों को करने के पश्चात उन्होंने कभी किसी को चोट नहीं पहुँचाई। वह शराब व्यक्तिगत कारणों से पीते थे। अफीम वह जीवन को समझने के लिए खाते थे। इस बात को उन्होंने इन शब्दों में व्यक्त किया है, “जीवन में मैंने छोटी-मोटी भूलें बहुत-सी की हैं परंतु अपनी मूर्खता को मैं उस सीमा तक खींचकर नहीं ले गया। शराब को मैंने नशे के रूप में ग्रहण नहीं किया। बराबर दवा के रूप में ग्रहण किया है, किसी शारीरिक रोग की दवा के रूप में नहीं, वरन अपने स्वभाव की एक कमी की पूर्ति के लिए। मैं स्वभाव से अंतर्मुखी हूँ और बुद्धि से सामाजिक जीवन को पूर्णतया अपनाने पर भी व्यावहारिक रूप से समाज और समूह से भागना चाहता हूँ। समाज के बीच बड़े असंतोष का अनुभव करने लगता हूँ। इसलिए बीच-बीच में कभी-कभी दवा की मात्रा में थोड़ी-सी मदिरा पी लेता हूँ और मैं समाज में सामाजिक प्राणियों के समान रहने लगता हूँ।”

नोट

इस तरह अपने जीवन को आवारा व्यक्ति के समान जीने के बाद भी वह किसी को कोई दुख नहीं देना चाहते थे। वह भीतर से अपने को बीमार समझते थे और उस बीमारी को दूर करने के लिए जैसे शराब को दवा मानते थे। वह शराब पीने के बाद भी दूसरों को न्याय दिलाने या दूसरों की रक्षा करने के लिए दौड़ पड़ते थे। उस समय उनकी आँखों में छाया लाली जैसे धुल-पुंछ जाती थी और वह लोगों से प्यार करने लगते थे। शराब के नशे में ही उन्होंने एक व्यक्ति का जीवन बचाया था। उनकी पुस्तकों को पढ़कर न जाने कितनी युवतियों का जीवन गलत मार्ग पर जाने से बच गया। वह जो कुछ भी लिखते थे उसके पीछे अपना कर्तव्य, एक उद्देश्य और एक न्याय की भावना को अवश्य सोच लिया करते थे। वह कहते थे कि ‘चरित्रहीन’ की किरणमयी से हजारों स्त्रियों का उद्धार होगा, समाज मेरी इस बात को स्वीकारे या नहीं, मुझे इसकी चिंता नहीं है। इसलिए आज यह बात सभी पाठक जानते हैं कि उनकी पुस्तकों से युवकों और युवतियों को लाभ ही हुआ है, हानि नहीं। वे कहते हैं, “सारा मनुष्यत्व सतीत्व से कहीं बड़ा है। इस बात को मैंने एक दिन कहा था और उसी को अभद्र और गंदा कह कर मुझे गाली देने में कुछ उठा नहीं रखा गया।”

उन्होंने दुराचारिणी कही जाने वाली स्त्रियों को सम्मान दिया है। यही कारण है कि जब पाठक उनके उपन्यास पढ़ता है तो यह सोचने के लिए विवश हो जाता है कि शरत बाबू कैसा समाज चाहते थे? वे स्त्रियों को सुधारने के लिए बहुत-कुछ करना चाहते थे, यह तथ्य उनके साहित्य को छानने से प्रकट होता है। इसी एक बात को लेकर वे जीवन भर लड़ते रहे कि नारी को समाज में वैसी ही प्रतिष्ठा मिलनी चाहिए जैसी कि वैदिक काल में नारियों को मिलती थी। इसी कारण बंगाल की स्त्रियों ने उनकी सत्तावनवीं जयन्ती के अवसर पर उनका अभिनन्दन किया था। उनके श्री मुख से निकला था, “पराधीन देश के अधिःपतित समाज की असहाया अंतःपुर चारिणियों के हृदय की मूक अंत वेदना को तुमने भाषा में मूर्त कर दिया है। उनके दुर्गतिपूर्ण जीवन के सुख-दुखों की सभी अनुभूतियों को निविड़ सहानुभूति में ढालकर तुमने साहित्य में सत्य करके प्रत्यक्ष करा दिया है। तुम्हारी अनाविष्ट दृष्टि, सूक्ष्म पर्यवेक्षण सामर्थ्य, सुगंधमयी उपलब्धि, शक्ति तथा विचित्र मानव चरित्र की अतलस्पर्शी अभिज्ञता ने निखिल नारी चरित्र की निगूढ़ प्रकृति का पता पा लिया है। हे नारी चरित्र के परम रहस्यज्ञाता, हम लोग तुम्हारी वंदना करते हैं।”

इन शब्दों को सुनकर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि शरतचंद्र नारियों के लिए देवता थे, मसीहा थे। सचमुच लेखक ने उनकी जीवनी का नाम ‘आवारा मसीहा’ रखकर पाठकों पर बड़ा उपकार किया है।

2.4 सारांश (Summary)

- ‘आवारा मसीहा’ नामक कृति बंगला साहित्य के लेखक श्री शरतचंद्र चट्टोपाध्याय के जीवन पर आधारित है। यह जीवनी श्री विष्णु प्रभाकर जी ने तीन पर्वों में विभाजित की है।
- शरत को पाँच वर्ष की आयु में पाठशाला में भर्ती कराया गया। चूँकि शरत बचपन से ही नटखट स्वभाव का था इसलिए वह स्कूल में भी कोई न कोई शरारत करता रहता था।
- शरत ऐसा नहीं था जिसे सुंदर कहा जा सकता। हाँ उसकी आँखें अवश्य सुंदर थीं। लेकिन उसमें परोपकारिता के गुण विद्यमान थे। साहस के कार्यों में वह सबसे पहले कूद कर आगे आ जाता था।
- शरत बाबू वास्तव में बड़े साहसी बालक थे। अँधेरी रात में वे कहीं भी आ-जा सकते थे। उन्हें साँप और बिच्छू से बिल्कुल डर नहीं लगता था। इसके साथ-साथ वे उपन्यास और कहानी भी लिखते रहते थे।
- शरत के पिता को कीमती पत्थर संग्रह करने का शौक था। एक दिन शरत को कुछ रुपयों की जरूरत थी। अतः उन्होंने उन पत्थरों में से कुछ लेकर बेच दिए।
- शरत ने अपनी पुरानी आदतों पर लगाम नहीं लगाई थी। वह शराब भी पीते थे और इधर-उधर सैर-सपाटे के लिए भी निकल जाते थे। इसलिए बहन ने एक दिन उनसे कह दिया, शरत यदि तुम अपनी आदतों को बदलना नहीं चाहते तो हमारा घर छोड़ दो।

नोट

- उस जमाने में जहाज की यात्रा द्वारा बर्मा पहुँचा जा सकता था। अतः चार दिन की यात्रा के बाद शरत बाबू बर्मा पहुँचे। इस बीच उनका जहाज एक तूफान में फँस गया था और वह बड़ी कठिनाई में से गुजरकर निकल सके थे।
- शरत बाबू 'चरित्रहीन' नामक उपन्यास लगभग पूरा कर चुके थे। 'नारी इतिहास' प्रबंध पूरा करने में जुटे हुए थे कि अचानक एक संध्या को उनके घर को आग ने भक्षण करना शुरू कर दिया। इस आग में शरत बाबू की महीनों की मेहनत स्वाहा हो गई।
- जब किसी रचना का निर्माण किसी उद्देश्य से किया जाता है तो उसकी स्वाभाविक आत्मा मर जाती है, उसमें सजीवता के भाव देखने को नहीं मिल पाते हैं। ऐसा लगता है जैसे रचना का शरीर दिखावटी शब्द-वस्त्रों से ढक दिया गया है।
- एक बार रंगून में प्लेग फैला। शरत बाबू उस समय रंगून में ही थे। उन्होंने अपने जीवन की चिंता किए बिना रोगी स्त्री-पुरुषों की जी-जान से सेवा की।
- बिहार में भी बंगालियों के निवास स्थान थे। वे बंगालियों को भली निगाह से नहीं देखते थे। वे नहीं चाहते थे कि भद्र लोगों की बंगाली कन्याएँ पढ़ाई-लिखाई करें या अच्छी शिक्षा ग्रहण करने के लिए वे आगे बढ़ें।
- शरत बाबू ने भारतीय समाज की मूलभूत समस्याओं पर गंभीरतापूर्वक विचार किया है। सती प्रथा के प्रश्न ने भारतीय समाज में एक विचित्र-सी स्थिति उत्पन्न कर दी थी। अतः शरत बाबू ने सती प्रथा को घृणित बताते हुए बंग-भाषियों के सामने नये विचार रखे।
- जीवनी लेखक अपनी कृति का नाम प्रायः चरित नायक की विशेषताओं को ध्यान में रखकर केन्द्रीय स्थिति के अनुरूप गढ़ता है। इसके बाद वह उसे सिद्ध करने के लिए नायक के रूप को विस्तार देता है। पाठक बिना नाम की पुस्तक को कभी ग्रहण नहीं करना चाहता।
- शरत बाबू कहते थे कि हिन्दू-धर्म मुर्दों की पूजा करता है, जिन्दों की नहीं। वह धर्म की झूठी और आडम्बरपूर्ण मर्यादाओं का खुलकर विरोध करते थे। यही कारण था कि वह मानव जाति को जितना प्रेम करते थे उतना ही पशु-पक्षियों को चाहते थे।
- शरत बाबू के संबंध में हजारों ऐसी बातें हैं जो केवल मसीहा के लिए ही सही साबित हो सकती हैं। समाज का निरंतर विरोध सहते हुए भी वह अपने मार्ग से पीछे नहीं हटे। जब उन्होंने 'चरित्रहीन' जैसी ऊँची कृति लिखी तो समाज में उनका पत्थर मारकर विरोध हुआ।
- शरत बाबू कहते थे कि सच्ची नारी वेश्याओं के हृदय में छिपी है। यह दूसरी बात है कि समाज उनको अच्छी दृष्टि से नहीं देखता पर असल बात यही है कि समाज ने ही उनको वेश्या बनने के लिए विवश किया है। समाज ने उनके शरीर में काँटे भरे हैं।
- उन्होंने दुराचारिणी कही जाने वाली स्त्रियों को सम्मान दिया है। वह स्त्रियों को सुधारने के लिए बहुत-कुछ करना चाहते थे, यह तथ्य उनके साहित्य को छानने से प्रकट होता है।

2.5 शब्दकोश (Keywords)

- | | |
|-----------------------|--------------------------|
| 1. निर्भीक – निडर | 2. नटखट – शरारती |
| 3. सम्मिलित – शामिल | 4. चक्षुहीन – आँखों रहित |
| 5. तीमारदारी – देखभाल | 6. बाकर – खोलकर |
| 7. सैलाब – बाढ़ | 8. लजालु – शर्मीला |
| 9. जमात – मंडली | 10. महीन – बारीक। |

2.6 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

नोट

1. शरतचन्द्र का बाल्यकाल किस प्रकार व्यतीत हुआ?
2. रंगून में शरत बाबू ने साहित्यिक जीवन किस प्रकार बिताया?
3. शरतचन्द्र के साहित्यिक जीवन का सर्वश्रेष्ठ बिंदु किसे कहा जा सकता है? अपने विचार व्यक्त कीजिए।
4. प्रभाकर जी के साहित्यिक उद्देश्य को हम किन रूपों में देख सकते हैं?
5. ‘आवारा मसीहा’ के नामकरण की सार्थकता पर एक लेख लिखिए।
6. शरत बाबू के पशु-पक्षी प्रेम को उदाहरण देकर समझाइए।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

- | | | | |
|------------|-------------|------------|----------|
| 1. मोतीलाल | 2. शुक्रवार | 3. काशीनाथ | 4. (ग) |
| 5. (ख) | 6. (क) | 7. सत्य | 8. असत्य |
| 9. सत्य। | | | |

2.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)



पुस्तकें आवारा मसीहा—विष्णु प्रभाकर, राजकमल एण्ड संस, दिल्ली।

नोट

इकाई-3: 'आवारा मसीहा' : प्रमुख गद्यांशों की व्याख्या

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

3.1 'आवारा मसीहा' के गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या

3.2 सारांश (Summary)

3.3 शब्दकोश (Keywords)

3.4 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

3.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- 'आवारा मसीहा' के प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या करने में;
- शरत बाबू के व्यक्तित्व एवं प्रकृति को जानने में;
- शरतचंद्र के मित्र राजू की जानकारी प्राप्त करने में;
- बंग-समाज में व्याप्त अंधविश्वास एवं पिछड़ेपन को समझने में।

प्रस्तावना (Introduction)

प्रभाकर जी ने शरतचन्द्र की जीवनी 'आवारा मसीहा' के प्रमुख गद्यांशों का विवरण बड़ी सूक्ष्मता के साथ किया है। इन गद्यांशों की व्याख्या को पढ़कर हमें शरत बाबू के व्यक्तित्व एवं प्रकृति के बारे में पता चलता है। उस समय बंग-समाज में कौनसी बुराईयाँ और अंधविश्वास फैले हुए थे, इसकी जानकारी भी प्राप्त होती है।

3.1 'आवारा मसीहा' के गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या

1

“सौन्दर्यबोध भी कम नहीं था। सुंदर कलम में नया निब लगाकर बढ़िया कागज पर मोती जैसे अक्षरों में रचना आरंभ करते, परंतु आरंभ जितना महत्त्वपूर्ण होता, अंत उतना ही महत्त्वहीन। अंत अनिवार्यता मानो उन्होंने कभी स्वीकार ही नहीं की। बीच में ही छोड़कर नई रचना आरंभ कर देते। शायद उनका आदर्श बहुत ऊँचा होता था या शायद अंत तक पहुँचने की क्षमता ही उनमें नहीं थी। वह कभी कोई रचना पूरी ही नहीं कर सके।” (पृष्ठ-7)

प्रसंग—शरत बाबू को नाना के घर रहते हुए लगभग तीन वर्ष व्यतीत हो चुके थे। वह काम की खोज में बार-बार इधर से उधर घूमते थे। यदि कभी नौकरी उन्हें मिल भी जाती तो उनका स्वच्छंद स्वभाव और शिल्पी मन उन्हें एक स्थान पर ठहरने ही नहीं देता था। उन्हें कहानी, उपन्यास, नाटक आदि लिखने का शौक था। परंतु एक जगह बंध

नोट

कर न रहने के कारण वह कुछ भी नहीं लिख पाते थे। उनके मन में देश, समाज, परिवार, स्त्री, पुरुष सभी से संबंधित विचार उठते रहते थे। परंतु वह मन न लगाने के कारण उन विचारों को साहित्य का रूप देने में असमर्थ रहते थे। यहाँ पर लेखक ने उनके मन की उसी गति का वर्णन किया है।

व्याख्या—शरत बाबू जन्म से यायावर स्वभाव के होने के कारण संसार की प्रत्येक वस्तु का अनुभव प्राप्त करना चाहते थे। वह सुन्दरता को समझने का गहरा ज्ञान रखते थे, परंतु कभी उन्होंने इस ओर ध्यान नहीं दिया था। वह समझते कि प्रकृति ने सुंदर वस्तुओं का निर्माण संसार को सुंदर बनाने के लिए किया है। इसी कारण वह सुंदरता का साधारण-सा आनंद लेकर दूसरी ओर मुड़ जाते थे। इस सुंदरता को साहित्य में भरने के लिए भी वह प्रयास करते रहते थे। परंतु उनका मन शीघ्र ही ऊब जाता था और वह एक बात को छोड़कर दूसरी बात की ओर उन्मुख हो जाते थे। जब कभी उनकी लिखने की इच्छा होती तो वह एक सुंदर-सी कलम में नयी निब लगाकर बढ़िया कागज पर मन के विचारों को उतारने के लिए बैठ जाया करते थे। उनका लेख बहुत सुंदर था। इसलिए वह मोती के समान अक्षरों में लिखना शुरू करते थे। परंतु आरंभ को वह बड़े मनोयोग से सजाते। लिखते-लिखते वह इतनी जल्दी ऊब जाते कि सब-कुछ छोड़कर अपना मन दूसरी तरफ दौड़ाने लग जाते थे। यही कारण था कि शुरू की बात अत्यधिक महत्वपूर्ण होने के बाद भी वह अधूरी रह जाती थी। इसी हेतु लेखक ने व्यक्त किया है कि कहानी या उपन्यास का अंत बड़ा महत्वहीन होता था। उनकी दृष्टि में अंत का शायद अधिक महत्व नहीं था। अर्थात् वह किसी भी कार्य को मन लगाकर पूर्ण करने के पक्ष में नहीं थे। कभी-कभी तो वह एक रचना को बीच में ही अधूरी छोड़कर दूसरी लिखना आरंभ कर देते थे। वह सोचते थे कि जो कुछ उनके मन में है वह कागज पर नहीं आ पाया है। या फिर उनका मेल मन के विश्वास से पूरा नहीं हो पाता था। इसी बात को लेखक ने नए रूप में व्यक्त किया है। लेखक का कथन है कि शरत बाबू किसी अत्यधिक ऊँचे आदर्श को प्रस्तुत करना चाहते थे। या फिर वह अपने को इस योग्य नहीं समझते थे कि वह किसी अच्छे उपसंहार का सृजन कर सकेंगे। ऐसी दशा में वह अपनी कोई भी रचना पूरी कर ही नहीं सके। कार्य को अधूरा छोड़ने में शायद वह एक प्रकार के आनंद का अनुभव करते थे।

विशिष्ट

1. लेखक ने उपर्युक्त पंक्तियों में साहित्यकार शरत की कमजोरियों का वर्णन किया है क्योंकि शरत बाबू सांसारिक सुंदरता को भली-भाँति आत्मसात करना जानते थे। परंतु उस सुंदरता को पूर्णरूपेण रचना के रूप में व्यक्त करने से घबराते थे। शायद वह किसी ऐसी बात को कहना चाहते थे जो आदर्शपूर्ण और विचित्र हो।
2. लेखक ने शरत बाबू के लेखकीय कौशल का चित्रण सौंदर्य-बोध के साथ किया है। शरत बाबू की लेखन कला अत्यधिक सुंदर थी। वह नई कलम और नए निब से बड़े सुंदर अक्षरों में लिखा करते थे। अन्य लोग भी उनके लेख की प्रशंसा किया करते थे। शायद उनको खराब लेख से घृणा थी। इसी कारण उन्होंने आरंभ से ही मोती जैसे अक्षरों में लिखने का अभ्यास कर लिया था। अच्छे लेख के कारण ही उनकी पाण्डुलिपियाँ प्रकाशकगण दौड़कर ले लेते थे। वैसे भी सुंदर लेख का महत्व है। लोग सुघड़ और सुडौल अक्षरों वाले लेख को बड़ी रुचि के साथ पढ़ते हैं और लेखक की प्रशंसा करते हैं।
3. इन पंक्तियों में लेखक ने दर्शाया है कि शरत बाबू बचपन से ही सौंदर्य को परखना जान गए थे। परंतु सौंदर्य की यह परख उनके लिए आंतरिक थी, न कि बाह्य।
4. गद्यांश सरल, सुबोध और गंभीर भाषा में लिखा गया है। विचारों को स्पष्ट करने के लिए कठिन शब्दों का प्रयोग भी किया गया है। पाठकगण गद्यांश की भाषा आसानी से समझ जाते हैं।
5. गद्यांश में मुहावरों और सूक्तियों का अभाव है।
6. शरत के मनोभावों का सामान्य चित्रण है।



टास्क किन घटनाओं से शरत की स्वच्छंद एवं शैतान प्रकृति का पता चलता है?

2

“इस अपराध का दंड पीठ पर चाबुक खाना ही नहीं था, अस्तबल में बंद होना भी था। परंतु शरत पर इन बातों का कोई असर नहीं होता था। यहाँ तक कि स्कूल में भी दुष्टता करने में वह नहीं चूकता था। अक्सर वहाँ की घड़ी समय से आगे चलने लगती। उसको ठीक करके चलाने का भार वैसे अक्षय पंडित पर था। लेकिन दो घंटे खूब जमकर काम करने के बाद तंबाकू खाने की इच्छा हो आना स्वाभाविक था। तब वह स्कूल के सेवक जगुआ की पानशाला में जा उपस्थित होते। इसी समय शरत की प्रेरणा से दूसरे छात्र उस घड़ी को दस मिनट आगे कर देते।” (पृष्ठ-8)

प्रसंग—शरत बचपन से ही शरारती स्वभाव के बालक थे। अपनी इस आदत को बल देने के लिए उन्होंने स्कूल में बहुत से बालकों को अपना मित्र बना लिया था। उनके बड़े मामा ठाकुर दास अन्य बच्चों के समान उनकी भी देखभाल करते थे। लेकिन शरत उनकी दृष्टि से बचकर इधर-उधर निकल जाते और अपनी टोली के साथ तरह-तरह की शरारतें करते हुए घूमते थे। पढ़ते समय भी वह शैतानियाँ करने से बाज नहीं आते थे। यद्यपि वे पढ़ने-लिखने में तेज थे परंतु पिता के एक स्थान पर स्थायी रूप से न रहने के कारण उनकी शिक्षा ठीक प्रकार से नहीं हो सकी। लेखक ने प्रस्तुत गद्यांश में शरत की स्वच्छंद प्रकृति और शैतानी का वर्णन किया है।

व्याख्या—नई-नई शैतानियों के कारण शरत को दंड भी मिलता था परंतु वह शैतानी किए बिना रह ही नहीं पाते। ज्यों ही उन्हें अवसर मिलता था। वह कुछ न कुछ नया कर ही डालते थे। एक दिन शरत के मामा बच्चों को देखते हुए गंगा के किनारे आ गए। उन्होंने शरत को कुछ बालकों सहित घूमते हुए देख लिया। वह उन पर बिगड़ उठे। घर आकर उन्होंने शरत को दंड दिया। उनकी पीठ पर चाबुक मारे। शरत ने चुपचाप सब-कुछ सहन कर लिया। और फिर उन्हें घुड़साल में बंद कर दिया गया। लेकिन शरत ऐसी मिट्टी के बने थे कि शांत रह ही नहीं सकते थे। एक शैतानी छोड़कर वह दूसरी शैतानी करने में जुट जाते थे। वह स्कूल में भी शैतानी करने से नहीं चूकते थे। स्कूल में वह अन्य प्रकार की शरारतें करते थे। प्रायः वह स्कूल की घड़ी की सुई आगे कर देते थे। इस कारण स्कूल की घड़ी समय से आगे चलती रहती थी। स्कूल में एक अक्षय पंडित थे। वह जब कभी देखते कि घड़ी अधिक समय बता रही है तो वह उसे मिलाकर ठीक कर देते थे। लेकिन अक्षय पंडित तंबाकू खाने के शौकीन थे। वह बिना तंबाकू खाए रह नहीं पाते थे। काम करते-करते जब दो घंटे निकल जाते तो उनकी इच्छा तंबाकू खाने की होती थी। तंबाकू तैयार करने में थोड़ा समय तो लगता ही था। अतः वह ऐसा न करके स्कूल के नौकर जगुआ की पान की दुकान पर तंबाकू खाने चले जाते थे। इसी समय शरत को अवसर प्राप्त हो जाता था। वह देखते कि अक्षय पंडित तंबाकू खाने गए हैं तो तुरंत कुछ लड़कों को इकट्ठा करके कहते कि घड़ी की सुई आगे बढ़ाने का यह अवसर अच्छा है। बस, शरत पंडित को देखने के लिए खड़े हो जाते और दूसरे लड़के घड़ी की सुई दस मिनट आगे कर देते थे। इस प्रकार शरत के पास शैतानियों का अक्षय भंडार था।

विशिष्ट

1. प्रस्तुत गद्यांश में शरत की शैतानियों का लेखा-जोखा मिलता है। घर तथा स्कूल में वह कैसी-कैसी शैतानियाँ करते थे, इस विषय को लेखक ने सहज रूप में समझाया है।
2. चूँकि शरत स्वभाव से ही स्वच्छंद विचारों के पोषक थे इसलिए शैतानियों के बाद उन पर दंड का भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। लेखक ने यह दर्शाया है कि शैतानियाँ जैसे उनकी दिनचर्या का एक भाग हो गई थीं।

नोट

3. प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने उल्लेख किया है कि शरत अन्य बालकों से कुछ हटकर थे। बचपन में उनके अंदर जिन प्रवृत्तियों का विकास हुआ था, आगे चलकर वह धीरे-धीरे छूट गईं। परंतु उनका स्वच्छंद स्वभाव नहीं बदल सका। इतना होने पर भी वह तीक्ष्ण बुद्धि के बालक थे।
4. गद्यांश की भाषा सरल किंतु प्रचलित शब्दों से पूर्ण हैं। भाषा में कृत्रिमता कहीं नहीं दिखाई देती है। इसलिए साधारण पाठक भी उसे आसानी से समझ सकता है।
5. शरत के बचपन का चरित्र-चित्रण सरल और सहज रूप में किया गया है।

3

“न जाने कितनी बार वह इस पवित्र मौन-एकांत में आकर बैठा होगा। दूर से आती बच्चों की शरारतों की आवाजें गंगा की कल-कल ध्वनि में मिलकर एक रहस्यमय वातावरण का निर्माण करती होंगी। प्रकृति का सौंदर्य जैसे उसके थके तन-मन को सहलाता होगा और तब उसने मन ही मन प्रतिज्ञा की होगी, ‘मैं सूर्य, गंगा और हिमालय को साक्षी करके प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं जीवन-भर सौंदर्य की उपासना करूँगा, कि जीवन-भर अन्याय के विरुद्ध लड़ूँगा, कि मैं कभी छोटा काम नहीं करूँगा।” (पृष्ठ-12)

प्रसंग—शरत एकान्तप्रिय व्यक्ति थे। बचपन में वह एकांत में जाकर बैठ जाते थे और घंटों न जाने क्या-क्या सोचते रहते थे। उनके बैठने के स्थान खंडहर, शमशान या फिर गंगा के किनारे के रेतीले स्थान होते थे। इन स्थानों में अपने को एक ओर सुरक्षित महसूस करते थे और दूसरी ओर उनको वह स्थान तपोवन के समान लगता था। उनके घर के पास ही गंगा बहती थी इसलिए वह गंगा की उज्ज्वल धाराओं में अपना भविष्य खोजते रहते थे। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने उनकी एकांत प्रियता का ही वर्णन किया है।

व्याख्या—शरत को प्रकृति के बीच रहना बहुत सुहाता था। इसी कारण लेखक ने उल्लेख किया है कि जब कभी उनका मन घर से ऊब जाता था तो वह किसी एकांत स्थान पर जाकर बैठ जाते थे। फिर वह घंटों कुछ सोचते रहते थे। ऐसी ही एक घटना का वर्णन लेखक ने किया है कि शरत न जाने कितनी बार गंगा नदी के पवित्र किनारे पर जाकर बैठा होगा। वह एकांत को प्रकृति से जोड़ता था क्योंकि प्रकृति चुपचाप अपना कार्य करती है और जो व्यक्ति प्रकृति के क्रिया-कलापों का आनंद लेना चाहता है उसे एकांत में जाकर अपने को पहचानने का प्रयास करना पड़ता है। एकांत में शरत सुनता रहता होगा कि दूर कहीं बच्चे खेल रहे हैं। उनकी शरारतों की आवाजें धीमे स्वर में आ रही हैं और गंगा जी की कल-कल आवाज में मिलकर एक पवित्र और भेदपूर्ण वातावरण की सृष्टि कर रही हैं। गंगा की आती-जाती तरंगों और शीतल, मंद वायु शरत के मन को अवश्य उस आसमान की ओर ले जाती होंगी जिसका ठाठ ही निराला है।

प्रकृति की सुंदरता को देखकर शरत का थका हुआ मन एकांत में डूब जाता होगा। थोड़ी देर के लिए वह सब-कुछ भूल जाता होगा। लेखक अत्यंत भावुक होकर लिखता है कि शरत प्रकृति के इस अनूठे और पवित्र सौंदर्य को देखकर मन ही मन यह प्रतिज्ञा करता होगा कि सच्चाई यहीं पर है। मैं सच्चाई को प्राप्त करने के लिए कभी गलत कार्य नहीं करूँगा। इसी दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर शरत ने सूर्य और हिमालय को साक्षी बनाया होगा। फिर मन में यह प्रण लिया होगा कि मैं आजीवन सुंदरता की पूजा करूँगा क्योंकि सुंदरता ही जीवन का मूल्य है। जीवनभर अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करने की चेतना भी शरत के मन में इसी विचार के साथ जागी होगी। साथ ही उसने यह भी शपथ खाई होगी कि कभी ऐसा कोई कार्य नहीं करूँगा जिससे समाज और देश की बदनामी हो।

विशिष्ट

1. इस गद्यांश में लेखक ने शरत के प्रकृति-प्रेम को दर्शाया है। वह एकांत में बैठकर प्रकृति का आनंद लेने के लिए सदैव तत्पर रहते थे। प्रकृति की सुंदरता में डूबकर वह अपने को भूल जाते थे। इसी कारण शायद उनके मन में यह विचार उठते होंगे कि मैं प्राकृतिक सौंदर्य की पूजा करने के लिए कोई कसर नहीं उठा रखूँगा

क्योंकि प्रकृति मनुष्य को परमात्मा से जोड़ती है। शरत बाबू ने बंग-समाज में अन्याय और आडम्बर भी देखा था। इसलिए वह इन दोनों के निराकरण के लिए भी जूझना चाहते थे।

2. इस गद्यांश की भाषा दार्शनिक भावों से पूर्ण है। लेखक ने सीधी-सादी बात को सहज रूप में दर्शाने की चेष्टा की है।

4

“पिता की स्वाधीन चेतना परंपरा को राजू ने चरम सीमा तक पहुँचा दिया था। पतंगबाजी के द्वंद्व युद्ध में शरत की तरह वह भी पारंगत था। इसलिए स्वाभाविक रूप से दोनों एक-दूसरे को हराने की कामना करते थे। राजू के पास पैसे का बल था पतंग का बढ़िया से बढ़िया सरंजाम जुटाने में जरा भी कठिनाई नहीं हुई। लेकिन शरत के पास पैसा कहाँ था? उसके दल ने बोतल के काँच को मैदा की तरह पीसकर और उसमें नाना प्रकार की वस्तुएँ मिलाकर माँझा तैयार किया। उस दिन शनिवार था। संध्या होते ही शरत की गुलाबी पतंग मनचाही दिशा में उड़ चली।”

(पृष्ठ-14)

प्रसंग—शरत का एक परम मित्र था, जिसका नाम राजू था। दोनों स्वच्छंद प्रकृति के थे। वे खेलने के लिए घर से निकल जाते और घंटों किसी मैदान में खेलते रहते थे। राजू श्यामवर्ण का साधारण बालक था। लेकिन जितना साहसी था उतनी ही शक्ति उसके शरीर में थी। वह शरत की प्रेरणा था क्योंकि शरत को अच्छे कार्यों को करने की प्रेरणा वही दिया करता था। शरत और राजू दोनों के परिवारों में मन-मुटाव था। लेकिन दोनों बालकों को इससे कुछ भी मतलब नहीं रहता था। वे अनुशासन के बंधनों को तोड़कर खंडहरों और वन्य-प्रान्तरों में घूमते फिरते थे। राजू के घर में पुरानी बातों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था। इसी कारण बंगाली समाज राजू के पिता को इस संबंध में कभी क्षमा नहीं कर सका। लेकिन अपने पिता की तरह शरत का यह मित्र भी आधुनिक विचारों को मानने वाला हो गया था। इसी कारण राजू और शरत की पटरी आपस में अच्छी तरह बैठ जाती थी।

व्याख्या—प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने शरत और उसके मित्र राजू की स्वाधीन चेतना का वर्णन किया है। राजू के पिता पुरातन पंथी समाज की बातों को नहीं मानते थे। इसका प्रभाव राजू पर भी पड़ा था। इसी कारण राजू अपने पिता से दो कदम आगे चलकर स्वतंत्रता का पक्षपाती हो गया था। वह पतंगबाजी करने में निपुण था और कभी-कभी शरत से पेंच लड़ाने की तैयारी करने लगता था। इस द्वंद्व-युद्ध में दोनों को विशेष आनंद आता था। इसलिए दोनों मित्र अपनी-अपनी पतंगे आकाश में उड़ाकर एक-दूसरे को हराने के लिए तत्पर हो जाते थे। राजू धनी पिता का पुत्र था इसलिए वह अच्छी-अच्छी पतंगे और तेजधार वाला माँझा आसानी से प्राप्त कर लेता था। इसके विपरीत शरत के पास सदैव पैसे का अभाव रहता था क्योंकि उसके पिता निर्धन थे। इतने पर भी शरत को बिल्कुल चिंता नहीं रहती थी। वह अच्छा माँझा तैयार करने के लिए अपने साथियों को एक काँच की बोतल दे देता था। उसके दल के साथी बोतल को तोड़ कर काँच को मैदा की तरह महीन पीस लेते थे। फिर इस पिसे हुए काँच को भात, माद आदि के साथ मिलाकर लुगदी तैयार कर लेते थे। इस लुगदी से माँझा सूँटा जाता था। इसके बाद पेंच लड़ाने का कार्य शुरू किया जाता था। उस दिन शनिवार था। शरत ने गुलाबी पतंग में सुतल बाँधी और स्वयं तैयार किए माँझे की सहायता से पतंग उड़ाने लगा। वायु के सहारे पतंग आकाश से बातें करने लगी। उसी समय राजू ने अपनी सफेद पतंग तैयार करके उड़ानी शुरू की। दोनों मित्र पतंग उड़ाने का आनंद लेने लगे।

विशिष्ट

1. प्रभाकरजी ने राजू और शरत के मध्य होने वाली पतंगबाजी का वर्णन बड़ी सरल भाषा में किया है। दोनों मित्रों को अन्य खेलों के साथ-साथ पतंग उड़ाने का भी शौक था। विशेष बात यह थी कि दोनों बालक पतंगबाजी में निपुण थे और आपस में पेंच लड़ाने का कार्य करते रहते थे। दोनों निःस्वार्थ भाव से पतंगबाजी का द्वंद्व-युद्ध करते थे। परंतु कभी परस्पर लड़ाई-झगड़ा नहीं करते थे। दोनों बालक सहज बुद्धि और सरल

स्वभाव के थे। बंग-समाज में पिछड़ापन अधिक था। परंतु दोनों बालक इस बात की चिंता न करके स्वाधीन चेतना के पक्षपाती थे।

2. गद्यांश की भाषा सरल, सुबोध और रोचक है। लेखक ने विषय को स्पष्ट करने के लिए भाषा की संप्रेषणीयता में वृद्धि की है।



टास्क शरत और राजू के बीच होने वाली पतंगबाजी का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।

5

“शरत सुंदर नहीं था। आँखों को छोड़कर उसमें कोई विशेषता नहीं थी। लेकिन आँखों की यह चमक ही सामने वाले को बाँध लेती थी। वर्ण श्यामता की ओर था और देह थी खूब रोगी, लेकिन पैर हिरन की तरह दौड़ने में मजबूत थे। बिल्ली की तरह पेड़ों पर चढ़ जाता था। बुद्धि भी तीक्ष्ण थी, लेकिन दिशाहीन कठोर अनुशासन के कारण उसका प्रयोग पथभ्रष्टता में ही अधिक होता था।” (पृष्ठ-20)

प्रसंग—इन पंक्तियों में लेखक ने प्रसंगानुकूल विषय को स्पष्ट किया है। शरत अपनी बुआ के यहाँ बसंतपुर पहुँच चुके थे। उनको देखकर बुआ ने उनकी अच्छी तरह खातिर की थी। परंतु शरत के मन में मार्ग में होने वाली एक घटना का भय बैठ गया था। इस कारण वह डरा-डरा सा रहता था। परंतु साहसी होने के कारण उसने इस ओर से ध्यान हटा लिया था। यहाँ लेखक ने शरत के व्यक्तित्व और रूप-रंग का वर्णन किया है, जो निम्नवत है—

व्याख्या—शरत देखने में सुंदर नहीं था क्योंकि न तो उसके नैन-नक्श तीखे थे और न चेहरे का रंग ही गोरा था। वैसे भी बंगाली लोग श्याम वर्ण होते हैं परंतु सामान्यतः उनके नैन-नक्श तीखे होते हैं। ईश्वर ने शरत को सुंदरता का वरदान नहीं दिया था। उनकी आँखें सुंदर थीं। इसलिए लेखक ने उल्लेख किया है कि “उसकी आँखों को छोड़कर उसमें और कोई विशेष बात नहीं थी” परंतु सुंदर आँखें होने के कारण उनका चेहरा आकर्षक हो गया था। यही कारण था कि जो व्यक्ति एक बार उनको देख लेता था वह उनकी ओर खिंचता चला जाता था। उनकी आँखों में विचित्र प्रकार की चमक थी जो आगन्तुक को आसानी से बाँध लेती थी। उनका रंग काला था लेकिन उनके शरीर में तरह-तरह के रोग भरे हुए थे। इतना होने पर भी वे बीमारियों की चिंता नहीं करते थे। वह तेज चलने में माहिर थे और हिरन के समान दौड़ लगाते थे। इस दृष्टि से उनके पाँवों में प्रकृति ने काफी शक्ति भरी थी। वह पेड़ों पर चढ़ने में भी निपुण थे और बड़ी तेजी से बिल्ली के समान पेड़ों पर चढ़ जाया करते थे। उनकी बुद्धि तेज थी। एक बात को सुनकर वह उसे बड़ी जल्दी याद कर लेते थे। परंतु प्रारंभ से ही स्वच्छंद विचार के होने के कारण वे दिशाहीन से हो गए थे। उनके नाना-नानी ने उनको सदैव कठोर अनुशासन में रखना चाहा लेकिन वह खुले बछड़े के समान विचरण करना चाहते थे। इसीलिए वह पथभ्रष्ट से हो गए थे और ऐसे जीवन में उनको विशेष आनंद आता था।

विशिष्ट

1. लेखक ने इन पंक्तियों में विश्व प्रसिद्ध साहित्यकार के रूप-रंग का वर्णन किया है। उसके कथनानुसार प्रकृति ने शरत को सुंदरता प्रदान नहीं की थी। परंतु उनकी आँखें मीन की तरह बड़ी-बड़ी और सुंदर थीं। यही कारण था कि लोग उनकी ओर आकर्षित हो जाते थे। परंतु शरत बाबू का जीवन दिशाहीन था क्योंकि वह शुरू से ही स्वच्छंद वातावरण में रहना पसंद करते थे। उन्हें कठोर अनुशासन में रहना बिल्कुल पसंद नहीं था।
2. लेखक ने शरत के रूप-रंग का वर्णन यथार्थ रूप में किया है। गद्यांश की भाषा सरल और छोटे-छोटे वाक्यों द्वारा बुनी गई है।

“सूक्ष्म पर्यवेक्षण की प्रवृत्ति उसमें बचपन से ही थी। जो कुछ भी देखता उसकी गहराई में जाने का प्रयत्न करता और यही अभिज्ञता उसकी प्रेरणा बन जाती। गाँव में एक ब्राह्मण की बेटी थी बाल विधवा, नाम था उसका नीरू। बत्तीस साल की उम्र तक कोई कलंक उसके चरित्र को छू भी नहीं पाया था। सुशीला, परोपकारिणी, धर्मशीला और कर्मठ होने के नाते वह प्रसिद्ध थी। गाँव में एक भी घर ऐसा नहीं था जिसने उससे किसी न किसी रूप में सहायता न पाई हो। शरत उसे दीदी कहकर पुकारता था।” (पृष्ठ-22)

प्रसंग—शरत बहुत बढ़िया कहानी लिखता था। धीरे-धीरे उसने मौलिक कहानी लिखने का अभ्यास डाल लिया था। परंतु इस बात को कोई नहीं जानता था कि शरत ने कब और कहाँ बैठकर लिखना सीखा था? सबसे पहली कहानी उसने ‘काशीनाथ’ नाम से लिखी थी। जिन लोगों ने उसकी यह कहानी पढ़ी उसी ने उसकी प्रशंसा की थी। इस कहानी के अतिरिक्त उसने कुछ और कहानियाँ भी लिखीं। इन सभी कहानियों में उसने नायक का चरित्र-चित्रण बड़ी सूझ-बूझ के साथ किया था क्योंकि किसी भी चीज की गहराई तक पहुँचने की उसमें अद्भुत शक्ति थी। इस सूक्ष्म निरीक्षण के कारण उसके मस्तिष्क में विचार उठे होंगे और उसने उन विचारों को शब्दों के रूप में व्यक्त करना शुरू कर दिया होगा।

व्याख्या—शरत बाबू की बुद्धि बचपन से ही तेज थी। इसलिए वह अपने पाठ को बड़ी जल्दी याद कर लिया करते थे। उनकी स्मरण-शक्ति देखकर स्कूल के अध्यापक उनकी बड़ी प्रशंसा करते थे। इन पंक्तियों में लेखक ने शरत की सूक्ष्म पर्यवेक्षण शक्ति का वर्णन किया है। कुछ बालक आरंभ से ही विलक्षण प्रतिभा और अनोखी स्मरण शक्ति वाले होते हैं। शरत ऐसी ही प्रतिभा के धनी थे। वह एक बार किसी बात को सुन लेते तो तुरंत उसे मन में भर लेते थे और काफी दिनों के बाद भी उस बात को याद करने में समर्थ हो जाते थे। इसके साथ ही किसी वस्तु या उपकरण को देखने के पश्चात् उसके विषय में सबकुछ जानने के लिए वह लालायित हो उठते थे। फिर उससे सम्बन्धित भाँति-भाँति के प्रश्न करते थे। जब उनको संतोष हो जाता कि बात ठीक है, तब कहीं वे उसका पीछा छोड़ते थे। गाँव में एक ब्राह्मण की पुत्री रहती थी। वह बचपन में ही विधवा हो गई थी। जिस बालिका का विवाह छोटी-सी आयु में हो जाता था और दैवयोग से उसका पति मर जाता था तो उस बालिका को ‘बाल विधवा’ कहा जाता था। ऐसी लड़की को समाज में स्त्री-पुरुष अच्छी दृष्टि से नहीं देखते थे। उस ब्राह्मण की बेटी का नाम नीरू था। यह लड़की शरत की प्रेरणा थी क्योंकि शरत उसको बहुत चाहते थे। नीरू बत्तीस वर्ष की आयु तक विधवा ही रही। वह बड़े अच्छे विचारों वाली लड़की थी। इसलिए उसके चरित्र के विरुद्ध कलंक मढ़ने का किसी को साहस नहीं हुआ था। नीरू गाँव में शील-स्वभाव की नरम, धर्मानुसार कार्य करने वाली और परिश्रमी स्त्री थी। इस बात को सब गाँव वाले जानते थे और उसकी प्रशंसा किया करते थे। वह गाँव के लोगों की सहायता करने के लिए हर समय तत्पर रहती थी। अतः गाँव की शायद ही कोई ऐसी स्त्री हो जिसने किसी न किसी रूप में उससे सहायता न ली हो। शरत बाबू ने उसे बहन का नाम दिया हुआ था। अतः वे उसे ‘दीदी’ कहकर पुकारते थे। नीरू भी शरत को प्राणों के समान प्यारा समझती थी।

विशिष्ट—लेखक ने शरत की तीक्ष्ण बुद्धि की सराहना की है। इस प्रकार की बुद्धि उनमें बचपन से ही थी। इसी कारण एक बार उन्होंने शास्त्री मोशाय को रोने के संबंध में बताया था कि असली रोना तो दरिद्रों का होता है क्योंकि वे दुख में डूबकर करुण रुदन करते हैं। दूसरी ओर धनी लोग स्वार्थवश दिखावे के लिए रोते हैं। एक छोटी आयु का बालक यदि रोने के विषय में इतना सूक्ष्म पर्यवेक्षण करता है तो वह अवश्य ही तीक्ष्णबुद्धि का बालक माना जाएगा। साथ ही लेखक ने गाँव की विधवाओं के विषय में भी अपने विचार प्रकट किए हैं क्योंकि बंग-समाज में विधवाओं को बड़ी हेय दृष्टि से देखा जाता था। यदि वे समाज की घिसी-पिटी मर्यादा को तोड़ने का साहस करती थीं तो उनको ‘कुल-कलंकनी’ की उपाधि दे दी जाती थी। शरत बाबू ऐसी स्त्रियों को जगाना चाहते थे। वे चाहते थे कि समाज में उनको भी मान मिले।

नोट



टास्क प्रभाकर जी ने राजू की असाधारण प्रतिभा का वर्णन किस प्रकार किया है?

7

“उसके बाद वह जैसे मुक्त हो गया। उसका अधिकतर समय राजू के साथ बीतने लगा। वह इन दिनों पढ़ना-लिखना छोड़कर लकड़ी के कारखाने में काम सीखता था। यदि वह मोती जैसे अक्षर लिख सकता था तो लकड़ी की सुंदर वस्तुएँ भी बना सकता था। अद्भुत चरित्र था उसका। एक साथ वीरता और बाँसुरी की विद्या में निष्णात। कंठ स्वर मधुर था। हारमोनियम, क्लेयर नेट खूब अच्छी तरह बजाता था। अभिनय करने की उसमें असाधारण-प्रतिभा थी। वह प्रतिभाशालियों के वंश में पैदा हुआ था। इसीलिए प्रतिभा ने उसका मुक्त होकर वर्णन किया था।” (पृष्ठ-26)

प्रसंग—शरत के समय में लोग बंगाल के खंजरपुर गाँव में लाला गुलजारी लाल से कर्ज लेने के लिए पहुँचा करते थे। गुलजारी उधार के धन पर काफी सूद लिया करते थे। शरत को भी उधार लेकर ही परीक्षा का शुल्क भरना पड़ता था। लेकिन शरत का एक मित्र था राजू जो समय पर शरत की हर प्रकार की सहायता करने के लिए तैयार रहता था। शरत को अपने इस मित्र से काफी आशाएँ रहती थीं। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने राजू के विचित्र आचरण का उल्लेख किया है।

व्याख्या—परीक्षा देने के पश्चात् शरत को मानो मुक्ति मिल गई। अब वह अपना अधिकांश समय अपने मित्र राजू के साथ व्यतीत करने लगा। राजू एक धनी बाप का बेटा था। लेकिन उसने पढ़ाई-लिखाई का कार्य छोड़ दिया था और एक लकड़ी के कारखाने में काम सीखने के लिए जाने लगा था। शायद उसके पिता को यह विश्वास हो गया था कि वह स्कूल में पढ़ता-लिखता नहीं है और दिनभर मटरगश्ती में समय गुजार देता है। इस दृष्टि से यदि वह कोई काम सीख जाएगा तो उसका जीवन सुधर जाएगा।

राजू का लेख बहुत सुंदर था। वह मोती के समान सुंदर-सुंदर अक्षर लिखा करता था। उसके लेख की सभी लोग प्रशंसा करते थे। कारखाने में कुछ समय तक काम सीखने के उपरांत उसने लकड़ी की कुछ वस्तुएँ बनाना भी सीख लिया था। इस प्रकार राजू एक अनोखे चरित्र वाला लड़का था। वह जितना साहसी और वीर था उतना ही बाँसुरी बजाने में भी निपुण था। जिस समय वह बाँसुरी की मीठी ध्वनि बजाता था उस समय लोग उसे सुनने के लिए उसके पास आकर इकट्ठे हो जाते थे। वह बड़ी तन्मयता के साथ बाँसुरी बजाता था। उसके गले से मीठा स्वर निकलता था। इस प्रकार वह गाना और बाँसुरी बजाना दोनों प्रकार की विधाएँ जानता था। बाँसुरी के अतिरिक्त वह हारमोनियम और क्लेयर नेट भी भली-भाँति बजा लेता था। उसे अनेक प्रकार के गीत बजाने का अभ्यास था। इस कला के कारण वह सारे गाँव में प्रसिद्ध था।

लेखक ने राजू के अद्भुत चरित्र का परिचय देते हुए लिखा है कि वह अभिनय करना भी जानता था। इस कला की उसमें अद्भुत प्रतिभा थी। शायद ये कलाएँ उसने इसलिए सीखी थीं क्योंकि वह एक ऐसे वंश में उत्पन्न हुआ था जो प्रतिभाशालियों का था। इसी कारण उसमें विभिन्न प्रकार की कलाएँ बड़ी सुरुचि के साथ आ गई थीं। वह कभी-कभी उनका सदुपयोग भी करता था।

विशिष्ट

1. प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने शरत के मित्र राजू के असाधारण चरित्र का वर्णन किया है। राजू एक ऐसा बालक था जो एक साथ बाँसुरी, हारमोनियम और क्लेयर नेट बजाना जानता था। वह बाँसुरी पर तरह-तरह की धुन निकालने में निपुण था। उसे गायन विद्या भी आती थी। उसमें अभिनय प्रतिभा थी। किसी एक बालक को

इतनी सारी कलाओं का ज्ञान होना वास्तव में विचित्र बात थी। इसीलिए लेखक की दृष्टि में राजू प्रतिभाशाली था।

2. इस गद्यांश की भाषा सरल किंतु संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ लिखी गई है। भाषा में जीवनी का प्रवाह न होकर औपन्यासिक भाषा का समावेश किया गया है। इस कारण भाषा में प्रसाद गुण आ गया है। इस भाषा से पाठकों को राजू के चरित्र के गुणों का परिचय सरलतापूर्वक मिल जाता है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. शरत बाबू सुंदरता को समझने का गहरा रखते थे।
2. शरत के पास शैतानियों का अक्षय था।
3. राजू शरतचंद्र का परम था।
4. गुलजारी उधार के धन पर काफी लिया करते थे।

8

बाहर आकर उसने बताया, “उस मोहल्ले के तारापद का बेटा अभी-अभी हैजे में मर गया है। बेचारा तीन साल का बच्चा अनेक प्रयत्न करने पर भी बच नहीं सका। माँ-बाप पागलों की तरह रो-पीट रहे हैं। लेकिन उस रोग के रोगी की लाश को अधिक देर तक नहीं रखना चाहिए। इसी दम शमशान पहुँचा देना चाहिए। मोहल्ले के सभी लोग यहाँ यात्रा देखने के लिए आ गए हैं। अब तू भी मेरे साथ चला।”

(पृष्ठ-33)

प्रसंग—राजू और शरत दोनों परम मित्र थे। दोनों एक-दूसरे के सुख-दुःख में भी साथ देने के लिए तैयार रहते थे। उन दिनों भारत में अंग्रेजों का शासन था। कुछ अंग्रेज भारतीयों को घृणा की दृष्टि से देखते थे। यही कारण था कि भोले-भाले भारतीयों का शोषण करने के लिए वे हर समय तैयार रहते थे। देश के प्रांतों, नगरों तथा गाँवों में जनता मलेरिया, प्लेग, कालरा आदि भयंकर बीमारियों से ग्रसित रहती थी। हजारों स्त्री-पुरुष और बच्चे दवा आदि के अभाव में असमय ही काल के गाल में समा जाते थे परंतु सरकार को इसकी बिल्कुल चिंता नहीं थी। राजू और शरत का हृदय यह सब देखकर करुणा से भर जाता था। लेकिन अभी वे बालक थे। उन्होंने जो कुछ देखा था उसी को कहने के लिए तैयार भी थे। जब कभी कोई घटना घट जाती या किसी की मृत्यु हो जाती तो टोले, मुहल्ले के लोग उसे देखने के लिए तो तैयार हो जाते थे परंतु उसके शव को उठाने के लिए कोई तैयार नहीं होता था। मानवीय करुणा की इस संवेदना को समेटने के लिए राजू और शरत हर समय तैयार रहते थे। प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने दोनों मित्रों की ऐसी ही संवेदना का उल्लेख किया है—

व्याख्या—उस समय शरत चुपचाप एक कोने में बैठा हुआ था। मुहल्ले-टोले के लोग धीरे-धीरे एक स्थान पर इकट्ठे हो रहे थे। कारण यह था कि मुहल्ले में तारापद नामक एक व्यक्ति रहते थे। इस समय मुहल्ले में हैजा फैला हुआ था। बाबू तारापद का पुत्र भी हैजे का शिकार हो गया था। लोग उस अभाग्य के शव को करुणामयी दृष्टि से देख रहे थे। तारापद का सारा परिवार रो रहा था। मृतक की आयु लगभग तीन साल की थी। दवा-दारू के अभाव में बालक की मृत्यु हुई थी। इस दृश्य को देखकर राजू शरत के पास आया। उसने कहा कि तारापद के पुत्र की मृत्यु देखकर सभी लोग दुखी हैं। माँ-बाप की हालत तो देखी नहीं जा रही है। उन्होंने अपने ज़िगर के टुकड़े को बचाने के लिए सभी तरह के उपाय किए परंतु वे उसे बचा नहीं सके क्योंकि ईश्वर को यही मंजूर था। इसलिए माँ-बाप पागलों के समान हाथ-पैर पीट-पीट कर रो रहे हैं। परंतु दुख की बात यह है कि हैजे में मरे बालक की लाश को कोई हाथ नहीं लगाना चाहता है। सब लोग सोच रहे हैं कि कहीं उन्हें भी यह रोग न लग जाए। इसी बीमारी से बस लोग बचना चाहते हैं। ऐसी स्थिति में शव को घर में अधिक देर तक नहीं रखा जा सकता। इसलिए हम दोनों

को मिलकर शव को इसी समय शमशान पहुँचा देना चाहिए। मुहल्ले के सभी लोग शव-यात्रा देखने के लिए आ गए हैं। इस प्रकार राजू शरत को शमशान तक चलने के लिए राजी कर लेता है।

नोट

विशिष्ट

1. प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने यह दिखाया है कि बंग-समाज कितना अंधविश्वासी और पिछड़ा हुआ था। इसी कारण वे लोग हैजे में मरे बालक को हाथ लगाने के लिए तैयार नहीं थे। शायद मन में बसी एक घिसी-पिटी और अशिक्षा से भरी विचारधारा उनको सहायता करने से विमुख कर रही थी। मानव समाज कितना पिछड़ा है, इस बात को लेखक ने बहुत सुंदर शब्दों में व्यक्त किया है। मुहल्ले-टोले में सभी प्रकार के लोग रहते हैं परंतु वे छूत-छात से डरते हैं। उनके हृदय में मानवीय संवेदना का अभाव है। इसी समय दो बालक आते हैं और हैजे से मृत्यु को प्राप्त हुए उस बालक को शमशान ले जाने के लिए तैयार हो जाते हैं। लेखक ने यथार्थ का चित्रण करते हुए यह दर्शाया है कि दोनों बालक असली जिन्दगी के कितने निकट हैं। उनमें साहस, मानवीय संवेदना, दया और करुणा के भाव हैं।
2. गद्यांश में रूढ़ियों और कुरीतियों का दृश्य बड़े मार्मिक ढंग से चित्रित किया गया है। बालक आपस में जो कुछ कहते हैं उसका तात्पर्य बड़ा गूढ़ और मर्मस्पर्शी है। राजू मृतक को देखकर वह कार्य करने के लिए तैयार हो जाता है, जिसे बड़े-बड़े करने से संकोच करते हैं। लेखक ने दिखाया है कि मानवता सभी व्यक्तियों में नहीं होती। इस मानवता को वही पहचान सकता है जो मानव के अति निकट होता है। ऐसे व्यक्ति का हृदय भावुक होता है और वह मानव जाति की सेवा करने के लिए एकदम उद्यत हो जाता है।
3. इन पंक्तियों की भाषा सरल और सुबोध है। इसी कारण राजू की सीधी-सादी बात बड़ी जल्दी समझ में आ जाती है।

9

“चूँकि साहित्य की चर्चा उन दिनों प्रत्यक्ष रूप से नहीं हो सकती थी, इसलिए उनकी यह गोष्ठी अभिभावकों की दृष्टि से बचाकर ही काम करती थी। सप्ताह में एक दिन किसी निर्जन स्थान पर वे इकट्ठे होते थे। कभी सरकारी स्कूल के पास बड़े नाले में पैर लटकाकर प्रबंध-पाठ और आलोचनाएँ करते, कभी मठ में पेड़ के नीचे या टीले पर चढ़कर ये तरुण बंधु अपना विद्रोह प्रकट करते। कब्रिस्तान में भी यह गोष्ठी होती थी। शरत के नेतृत्व में जाने कितनी अमानिशाएँ उस दल ने वहाँ काटी थीं और स्तब्ध होकर सुना था उसका संगीत।”

(पृष्ठ-37)

प्रसंग—शरत साहित्य-साधना में रत रहने लगा था। उसके चारों ओर मित्रों का एक दल इकट्ठा हो गया था। उन सबने मिलकर साहित्य-गोष्ठी का निर्माण किया था। ये सब लोग एक स्थान पर इकट्ठा होकर आपस में साहित्य चर्चा करते थे। शरत ने साहित्य के माध्यम से विभूति और निरूपमा के यहाँ आना-जाना भी शुरू कर दिया था। निरूपमा लिखने का कार्य करती थी लेकिन उसके लेखकीय कार्य को उसका भाई विभूति विचार गोष्ठियों में रखता था। ये दोनों बालक सबजज श्री नफरभट्ट की संतान थे। शरत ने निरूपमा की कविताओं का रसास्वादन लिया था और वह उसकी प्रशंसा भी करता था। निम्नांकित पंक्ति में लेखक ने शरत की साहित्यिक गोष्ठी का वर्णन सीधे-सादे शब्दों में किया है—

व्याख्या—बंगाल में साहित्यिक चर्चा को शायद अच्छा नहीं समझा जाता था। इसी कारण उन दिनों प्रत्यक्ष रूप से इस चर्चा में कोई भाग नहीं ले सकता था। समाज में भी इस कार्य को अच्छा नहीं समझा जाता था। लोग सोचते थे कि साहित्यिक चर्चा के बहाने युवक अपना समय नष्ट करते हैं। लेकिन शरत तथा उसके अन्य साथी साहित्य संबंधी बातचीत के लिए किसी एकांत स्थान को चुन लेते थे और वहाँ पहुँच कर वे माता-पिता तथा संरक्षकों की आँखों से छिपकर आपस में बातचीत करते थे। यह कार्य सप्ताह में एक दिन होता था क्योंकि प्रतिदिन एक स्थान

नोट

पर इकट्ठे होकर साहित्यिक चर्चा के माने थे अभिभावकों का कोप-भाजन बनना। इसलिए वे सोचे-समझे एकांत स्थान में इकट्ठे होकर अपनी-अपनी रचनाओं को सबके सामने सुनाते थे। साहित्यिक चर्चा के लिए उनका स्थान कभी तो किसी सरकारी स्कूल के पास बड़े नाले के किनारे होता था जहाँ वे नाले में अपने-अपने पाँव नीचे लटकाकर तैयार किया हुआ पाठ पढ़ते थे तथा उसकी आलोचना को प्रस्तुत करते थे, या फिर वे कभी किसी मठ में वृक्ष के नीचे टीले पर चढ़कर कार्य का संचालन करते थे। ये तरुण बालक अपने लेखों के द्वारा देश, समाज और मानव के प्रति अपना क्रोध प्रकट किया करते थे क्योंकि समाज में रूढ़िवादिता और कुरीतियों ने अपने पाँव फैला रखे थे और मानव अशिक्षित होने के कारण उन परंपराओं को छोड़ना नहीं चाहता था।

कभी-कभी ये साहित्यकार किसी कब्रिस्तान में भी जा पहुँचते थे और गोष्ठी करते थे। उस समय शरत इन तरुणों का नेतृत्व करता था। वह गोष्ठी का अध्यक्ष चुना जाता था। इस प्रकार न जाने कितनी अमावस की रातें इन लोगों ने एकांत स्थान में व्यतीत की थीं। इस गोष्ठी में शरत गीत भी गाता था। अतः उसके गीत-संगीत का भी आनंद लोगों ने लिया था।

विशिष्ट

1. प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने शरत तथा उसके दल के तरुणों की साहित्यिक गोष्ठी की चर्चा की है। ये गोष्ठियाँ प्रायः एकांत स्थान में हुआ करती थीं क्योंकि ये लोग कुछ विशेष कारणों से उनका आयोजन सार्वजनिक रूप से नहीं कर सकते थे। ये लोग सप्ताह में एक दिन प्रायः शमशान भूमि, कब्रिस्तान, नाले के निकट आदि स्थान में बैठकर करते थे। इन गोष्ठियों के विषय में ज्ञान प्राप्त कर यह विदित होता है कि बंग-समाज अत्यधिक पिछड़ा हुआ था। इसी कारण वे अपने बालकों को कोई भी सार्वजनिक कार्य करने की आज्ञा नहीं देते थे। इन पंक्तियों से पता चलता है कि शरत को साहित्यिक जीवन जीने के लिए कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था।
2. यह गद्यांश शरत की साहित्यिक गतिविधियों का परिचय देता है।
3. गद्यांश की भाषा सरल किंतु संस्कृतनिष्ठ है।



टास्क शरत किस प्रकार सौंदर्य देवी की उपासना में डूबे रहते थे?

10

“गृहस्थी से शरत का कभी लगाव नहीं रहा। संसार के इस कुत्सित रूप से मुँह मोड़कर वह काल्पनिक संसार में जीना चाहता था। इस दुर्दान्त निर्धनता में भी उसकी सौंदर्य भावना तनिक भी धूमिल नहीं हुई थी। वह जितना उच्छृंखल था उसका रहने का कमरा उतना ही व्यवस्थित था। लेकिन सौंदर्य-भावना पेट की आग नहीं बुझा सकती। गृहस्थी कल्पना के सहारे नहीं चलती, वह तो ठोस द्रव्य चाहती है और यहाँ उसका कोई संतोषजनक प्रबंध नहीं था। न उसे इसकी चिंता थी और न उसके पिता को। जो कुछ बेचने योग्य था वह सब बिक गया था। मित्र और रिश्तेदार कब तक सहायता कर सकते हैं?” (पृष्ठ-40)

प्रसंग-शरत आवारा प्रकृति का व्यक्ति था इसलिए उसे विवाह करके गृहस्थी जोड़ने में बिल्कुल रुचि नहीं थी। गृहस्थी को वह एक बंधन समझता था। इसी कारण उसने कभी सोचा ही नहीं कि किसी स्त्री से विवाह किया जाए। लेकिन नियति को कुछ और ही मंजूर था। कुछ समय बाद उसके हृदय में प्रेम के बीच अंकुरित हुए थे और उसने अपनी गृहस्थी सजाई थी। इन पंक्तियों में लेखक ने शरत की आन्तरिक भावना के संबंध में लिखा है—

नोट

व्याख्या—शरत को गृहस्थी से कभी प्रेम नहीं रहा। इसका मुख्य कारण यह था कि वह गृहस्थी को संसार का एक बुरा रूप समझता था। असल में वह साहित्यकार था इसलिए उसकी इच्छा कल्पना के विश्व में विचरण करने की रहती थी। वह स्वातंत्र्य के लिए प्रत्येक कार्य करता था। यह दूसरी बात थी कि वह साहित्यिक गोष्ठियों में भी जाता था। यद्यपि वह निर्धन था। फिर भी इस गरीबी में भी वह सौंदर्य देवी की उपासना में डूबा रहता था अर्थात् उसके हृदय में सुंदरता के विचार बराबर उठते रहते थे। लेखक के कथनानुसार वह स्वतंत्र विचारधारा में विचरण करता रहता था। लेकिन उसने अपने कमरे में प्रत्येक वस्तु को यथास्थान पर रखने का प्रयास किया था। अपने कमरे को सजाकर रखने में उसे सुख मिलता था। इसी कारण वह प्रत्येक वस्तु को ठीक ठिकाने से रखने के लिए परिश्रम करता रहता था। लेकिन सुंदरता की पूजा करने से रोजी का प्रश्न हल नहीं हो सकता था। इसके लिए कोई न कोई रोजगार करना जरूरी था। गृहस्थी को चलाने के लिए धन की आवश्यकता होती है और यह धन रोजगार या नौकरी के द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। इसलिए ऐसा कहा गया है कि साहित्यकार भूखे मरते हैं क्योंकि गृहस्थी को चलाने के लिए ठोस रूप में धन की आवश्यकता होती है। लेकिन शरत के पास नियमित रूप से ऐसा कोई धंधा नहीं था जिससे वह अपने घर-बार की व्यवस्था कर सकता। उसे धनोपार्जन की चिंता भी नहीं रहती थी क्योंकि वह इधर-उधर भ्रमण करने और साहित्य-सृजन में अपना समय व्यतीत कर दिया करता था। धनोपार्जन की चिंता उसके पिता को भी नहीं थी। इसी कारण उसके घर में सदैव धनाभाव रहता था। गृहस्थी धन से चलती है। इसलिए उसे चलाने के लिए घर में जो भी वस्तु बेचने लायक थी उसे बेचकर काम चला लिया गया था। इसके बाद मित्रों और सगे-संबंधियों से भी सहायता ली गई थी परंतु वे लोग कब तक सहायता कर सकते थे। ऐसी स्थिति में शरत को हर समय कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था।

विशेष

1. शरत किसी भी हालत में सौंदर्य भावना को छोड़ना नहीं चाहता था। लेकिन सौंदर्य भावना से साहित्यकार का पेट नहीं भर सकता। पेट भरने के लिए साहित्यकार को कोई न कोई रोजगार या किसी की नौकरी अवश्य करनी पड़ती है। परंतु शरत के पास धनोपार्जन के साधन नहीं थे। पिता की ओर से भी उसको धन संबंधी कोई सहायता प्राप्त नहीं थी। अतः शरत का जीवन अत्यधिक गरीबी में व्यतीत होता था। इतने पर भी शरत साहित्य सृजन के कार्य में लगा हुआ था। उसने अपनी पुस्तकों आदि को अलमारी में सजाकर रखा था।
2. इन पंक्तियों में लेखक ने शरत के साहित्यिक जीवन पर थोड़ा-सा प्रकाश डाला है। एक अच्छा साहित्यकार बनने के लिए अच्छी कल्पना और पेट पालने के लिए किसी न किसी धंधे की भी आवश्यकता पड़ती है क्योंकि साहित्यकार भी मानव है और मानव तभी जीवित रह सकता है जबकि उसे पेट भरने के लिए भोजन और तन ढकने के लिए वस्त्र मिलते रहें।

11

“इस घृणा और अपमान के कारण उसके दर्द की कोई सीमा नहीं थी। अक्सर सोचता था कि दूसरे के घर पर रहकर अपमान पाने से तो सड़क, जंगल, रेगिस्तान कहीं भी रह जाना अच्छा है। उसकी बड़ी बहन कलकत्ता के पास गोविन्दपुर गाँव में रहती थी। प्रयत्न किया कि उसके पास जाकर रहे। गिरीन्द्रनाथ को लिखे एक पत्र से ऐसा लगता है कि वह वहाँ जाकर रहा भी था।” (पृष्ठ-46, 47)

प्रसंग—शरत जब भाई-बहनों की व्यवस्था करके कुछ निश्चिन्त हुआ तो जीविका की खोज में बिहार से कलकत्ता जा पहुँचा। उसके रिश्ते के एक मामा ने उसे एक काम दिला दिया। जैसे-तैसे वह दिन काटने लगा। उसे मालिक के घर के अन्य कार्य भी करने पड़ते थे जैसे सब्जी लाना, संबंधियों के घर से सामान ढोकर लाना आदि। एक बार शरत के मामा बुश को लेकर उस पर नाराज हो गए और उन्होंने शरत से बुश छीनकर बाहर फेंक दिया। शरत समझ गया कि उसके मामा उससे नौकरों जैसा व्यवहार करते हैं। वह इस अपमान को मन ही मन विष की घूँट की तरह पीकर रह गया। इस गद्यांश में लेखक ने शरत के दुखों और कष्टों का वर्णन किया है।

नोट

व्याख्या—अपने मामा द्वारा अपमानित होने के कारण शरत को असहनीय पीड़ा पहुँची लेकिन देखा गया है कि जब मनुष्य किसी के यहाँ रहकर उसके अहसानों से दबा रहता है, तो वह चुपचाप सब कुछ सहन कर लेता है। शरत ने भी मामा के घर रहकर तरह-तरह के अपमान सहन किए। तब वह सोचा करता था कि दूसरे के घर पर रहना एक प्रकार से दासता का जीवन है। अतः ऐसे जीवन से तो किसी सड़क के किनारे, जंगल या रेगिस्तान में समय काट देना कहीं अच्छा है। उसकी बड़ी बहन कलकत्ता के पास गोविन्दपुर गाँव में रहती थी। शरत ने सोचा कि इससे अच्छा तो यही है कि मैं गाँव में उसके पास जाकर रहूँ क्योंकि वह उसकी सगी बहन थी और शरत के विश्वास के अनुसार बहन भाई को अत्यधिक प्यार करती है। लेखक ने इस प्रसंग में किन्हीं गिरीन्द्रनाथ का हवाला दिया है। शायद शरत ने उनको पत्र लिखा था जिसमें बहन के पास जाने का जिक्र मालूम पड़ता है। परंतु यह बात निश्चित नहीं है। कुछ भी सत्य हो, किंतु शरत का स्वच्छंद स्वभाव वहाँ भी अधिक समय उसे निभाव के मार्ग पर ले जाकर खड़ा नहीं कर सका। इस प्रकार एक दिन शरत ने बहन का घर भी छोड़ दिया।

विशेष—शरत वास्तव में आत्मस्वाभिमानी तरुण था। कोई उसका अपमान करे और वह उसे सहन कर ले, ऐसी बात उसकी आत्मा कभी स्वीकार नहीं करती थी। इस कारण वह छोटे से अपमान को देखकर भी स्थान को तुरंत छोड़ देता था। अपमान का ऐसा ही घूंट पीकर शरत ने अपने मामा का घर छोड़ दिया था। शरत को बड़ा दुख हुआ था कि जो व्यक्ति संबंधी होकर भी उससे घृणा करता है, वास्तव में वह मानव न होकर दानव है। मानवता छोटे-बड़े का भेदभाव नहीं करती है। मानवता के हाथों में तो दया, धर्म, सहानुभूति, सहृदयता और स्नेह के सूत्र होते हैं जिनको जोड़कर वह व्यक्ति को देवत्व की ओर ले जाता है। फिर भला शरत जैसा व्यक्ति जो स्वतंत्र विचारों को सदैव अपने हृदय में बसाए रहता था, एक स्थान पर बंधकर और वह भी अपमानित जीवन जीकर कभी नहीं रह सकता था। इसी कारण उसको घाट-घाट का पानी पीना पड़ा।

12

“ऐसा लगा जैसे दुख के दिन बीत गए, लेकिन वह मात्र एक छल था। नौकरी डेढ़ वर्ष भी नहीं चल सकी और बर्मी भाषा की परीक्षा में भी सफलता नहीं मिली। तब वकील कैसे बन सकता था? जो स्वप्न उसने देखा था वह बस स्वप्न बनकर ही रह गया। हाँ, अपने जन्मजात गुणों के कारण यहाँ के मध्यवर्गीय बंगाली समाज में वह अब तक काफी प्रसिद्ध हो चुका था। उसका गाना सुनने के लिए अनेक भद्र लोग अघोरनाथ के घर आते थे।”

(पृष्ठ-52)

प्रसंग—शरत जीविकोपार्जन के लिए रंगून जा पहुँचा। बर्मा में प्रायः प्लेग फैल जाता था। इसलिए वहाँ की सरकार बहुत सावधान रहती थी। शरत भिक्षुक जैसे वेश में अपने रिश्ते के एक मौसा अघोरनाथ के घर गया। अघोरनाथ एक दयालु व्यक्ति थे। वे रंगून के प्रसिद्ध एडवोकेट तथा बड़े व्यक्ति थे। उन्होंने शरत की सहायता करने का वचन दिया। उनके घर में प्रत्येक शनिवार को गाने-बजाने का कार्यक्रम होता था। उसमें सभी जातियों और धर्मों के लोग भाग लेते थे। शरत ने भी सबको अपना गीत सुनाया। सब लोग उसका गीत सुनकर बड़े प्रसन्न हुए। उसके मौसा ने उसे बर्मा रेलवे के आडिट आफिस में काम दिला दिया। मौसेरी बहन को संगीत की शिक्षा देने के लिए भी नियुक्त कर दिया। इस प्रकार शरत की रोजी-रोटी का एक ठिकाना हो गया। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने शरत के बर्मी जीवन का वर्णन किया है।

व्याख्या—शरत को मौसा द्वारा आर्थिक सहायता मिलने लगी। अतः अब उसके दुःखों का जैसे अंत होने लगा। परंतु प्रभाकर जी के कथनानुसार वह सब कुछ दिखावटी था। उसके पीछे दुख, दैन्य और अलगाव के भाव छिपे हुए थे। शरत की नौकरी मुश्किल से डेढ़ वर्ष तक ही चल सकी। बर्मा की सरकार के आदेशानुसार शरत को बर्मी भाषा की परीक्षा देनी पड़ी। परंतु वह बर्मी भाषा की परीक्षा में अनुत्तीर्ण घोषित कर दिया गया क्योंकि वह परीक्षा की ठीक प्रकार से तैयारी नहीं कर सका। यह परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् वह वकालत भी पास कर सकता था। लेकिन उसकी सारी योजना पानी में बह गई। जो सपना उसने अपने मन में संजोया था वह साकार रूप धारण नहीं कर सका। परंतु संगीत और साहित्य में रुचि लेने के कारण बंगाली लोग उसे पहचानने लगे थे। अतः वह अपने जन्मजात गुणों

नोट

के कारण बंगाली समाज में आदर पा चुका था। उसे सुनने के लिए लोग लालायित रहते थे क्योंकि वह साधारण बातें न बताकर गूढ़ बातें बताता था जिनमें देश और समाज की भलाई हो सकती थी। उसका गाना सुनने के लिए अघोरनाथ के घर अनेक सज्जन पुरुष आया करते थे इसलिए अघोरनाथ ने भी परीक्षा में फेल हो जाने के पश्चात् उससे कुछ नहीं कहा।

विशेष

1. शरत को अचानक रंगून में रेलवे में एक नौकरी मिल गई। इससे उसको लगा कि अब दुख के दिन समाप्त हो गए हैं। परंतु मनुष्य के कर्म उसके साथ-साथ चलते हैं। शरत का भाग्य ने साथ नहीं दिया। वह बर्मी भाषा की परीक्षा में असफल रहा। इस कारण उसका वकील बनने का स्वप्न टूट गया। उसके जन्मजात गुणों ने उसे टूटने नहीं दिया। चूँकि वह गाना बजाना जानता था अतः बंगाली समाज में वह प्रसिद्ध हो गया। इस प्रकार उसके दिन किसी प्रकार कटने लगे परंतु अभी दुख के दिन समाप्त नहीं हुए थे क्योंकि वह स्थायी रूप से किसी नौकरी में नहीं लग पाया था। यहाँ पर शरत को टूट जाना चाहिए था, परंतु वह एक साहसी व्यक्ति था इसलिए उसने ईश्वर को धन्यवाद दिया और आगे के विषय में सोचने लगा।
2. इन पंक्तियों में लेखक ने शरत के कार्यों पर प्रकाश डाला है। मनुष्य जैसा कर्म करता है वैसा ही उसे फल मिलता है। यदि शरत बर्मी भाषा की तैयारी मनोयोग से करता तो उसका भविष्य सुधर सकता था। लेकिन उसने असावधानी से बर्मी भाषा की तैयारी की। इसी कारण वह असफल रहा।



नोट्स सफलता उसी के चरण चूमती है जो सफलता पाने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञा होकर कर्म करता है।

13

“वह अपने को निरीश्वरवादी कहकर प्रचारित करता था। लेकिन सारे व्यसनों और दुर्गुणों के बावजूद उसका मन वैरागी मन था। वह बहुत पढ़ता था। समाज विज्ञान, यौन विज्ञान, भौतिक विज्ञान, दर्शन, कुछ भी तो उससे नहीं छूटा था। मणीन्द्र कुमार मित्र के साथ पाश्चात्य दार्शनिकों को लेकर उसकी खूब चर्चा चलती थी। इसी दर्शन-प्रेम के कारण वह स्थानीय रामकृष्ण मिशन के स्वामी रामकृष्णानंद के संपर्क में आया।”

(पृष्ठ-55)

प्रसंग—शरत सदैव न्याय की बातें किया करता था। उसे बंग-समाज की दकियानूसी और घिसीपिटी बातों में विश्वास नहीं था। वह कहता था कि दीन-दुखियों की मदद करना हमारा कर्तव्य है। स्त्रियों को समाज में आदर मिलना चाहिए क्योंकि पुरुषों के समान स्त्रियाँ भी मनुष्य जाति की एक अंग हैं। ईश्वर उसी की सहायता करता है जो अपनी सहायता स्वयं करता है। जो लोग स्वार्थवश ईश्वर को याद करते हैं वे ढोंगी हैं। इस प्रकार शरत ऐसे ईश्वर को मानता था जो कभी अन्याय और स्वार्थ की बात नहीं बताता। उसे चमत्कार में विश्वास नहीं था। जबकि बंग-समाज में जो परम्पराएँ थीं वे अंधविश्वास पर आधारित थीं। यदि शरत इन परंपराओं को तोड़कर सच्ची बात मानने के लिए कहता था तो लोग कहते थे कि शरत ईश्वर को नहीं मानता है। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने शरत के मनोभावों का बड़े दार्शनिक रूप में वर्णन किया है।

व्याख्या—शरत अपने आपको ईश्वर न मानने वाला व्यक्ति कहकर प्रचारित करता था। उसका कहना था कि अंधी भक्ति और अज्ञानता से भरी ईश्वर की वंदना से तो ईश्वर को न मानना कहीं अच्छा है। उसने अत्यधिक निर्धनता और अभाव का जीवन जिया था इसलिए उसका विश्वास ईश्वर पर से उठ गया था। इसी कारण वह निरीश्वरवादी के रूप में प्रसिद्ध हो गया था। उसमें अन्य व्यसन जैसे शराब पीना, अफीम खाना आदि मौजूद थे। लेकिन इन बुराइयों के बावजूद भी उसके मन में संसार से दूर हटकर सोचने की भावना थी। इस प्रकार से वह वैरागियों की तरह भ्रमण

नोट

किया करता था। उसके मन में कोई एक बात अच्छी तरह जमती ही नहीं थी। इतने पर भी वह अध्ययन की ओर विशेष ध्यान देता था। वह समाज विज्ञान, यौन विज्ञान, भौतिक विज्ञान, दर्शन आदि विषयों को विशेष रुचि के साथ पढ़ता था। पाश्चात्य दर्शन पर वह मणीन्द्रनाथ के साथ भली-भाँति विवाद करता था और इसके बाद भारतीय दर्शन से उसकी तुलना करके किसी निष्कर्ष पर पहुँचना चाहता था। इस प्रकार उसे दर्शन से भी विशेष प्रेम था। इसी प्रेम के कारण उस समय के प्रसिद्ध स्वामी रामकृष्णानंद जो रामकृष्ण मिशन के अध्यक्ष थे, से भी दर्शन विषय पर अच्छी तरह चर्चा होती थी। इससे पता चलता है कि शरत को सभी प्रकार के ज्ञान-विज्ञान को ग्रहण करने की इच्छा रहती थी और उसने कुछ विषयों का तो गंभीरता से अध्ययन भी किया था।

विशिष्ट

1. शरत ने अनेक प्रकार के विज्ञान और दर्शन का अध्ययन किया था। जिसके फलस्वरूप वह इस परिणाम पर पहुँचा था कि दरिद्रों, दुखियों और स्त्रियों की सहायता करने में जितनी प्रसन्नता होती है उतनी प्रशंसा भगवान की पूजा करने में भी नहीं होती। इस दृष्टि से वह जीवित मानव की सेवा करना ही ईश्वर की सेवा मानता था। उसकी इस भावना को देखकर कुछ लोगों ने कहना शुरू कर दिया था कि शरत निरीश्वरवादी है। पर शरत वास्तव में निरीश्वरवादी नहीं था। उसका हृदय मानवीय संवेदना से भर उठता था और इसी कारण वह बंग-समाज से रूढ़िवादी विचारधारा को निकाल फेंकना चाहता था।
2. इन पंक्तियों में लेखक ने शरत की अध्ययनशीलता पर प्रकाश डाला है। शरत एक साहित्यकार था और वह समाज के सुख-दुख को अपना सुख-दुख समझता था। इसी कारण उसने ज्ञान-विज्ञान का गंभीरतापूर्वक अध्ययन किया था। उसे पाश्चात्य दर्शन का भी अच्छा ज्ञान था।
3. इस गद्यांश की भाषा सरल और सुबोध है। इसमें विचारों को प्रकट करने की क्षमता है। इसके माध्यम से शरत की गहन अध्ययन में कितनी रुचि थी, इस बात को स्पष्ट किया गया है।



टास्क 'हिरण्यमयी के कारण हिन्दू के घर में तुलसी का पौधा भी आ गया।' इस पंक्ति से क्या तात्पर्य है?

14

“एक बार फिर जैसे उसके लिए जीवन के अर्थ बदल गए। गृहस्थी बसा लेने के बाद उसकी सौंदर्य भावना फिर जाग गई थी। प्रेम ने उसके घर में फूलों की सुषमा बिखेर दी। उसे पुस्तकों से प्रेम था, पशु-पक्षियों से प्रेम था। वह प्रेम अब सुव्यवस्थित और सघन हो उठा। हिरण्यमयी के कारण हिन्दू के घर में तुलसी का पौधा भी आ गया।”

(पृष्ठ-70)

प्रसंग—शरत ने कृष्णदास अधिकारी महोदय की कन्या मोक्षदा से समाज और कानून को ठोकर मारकर विवाह किया। इसके बाद मोक्षदा का नाम हिरण्यमयी रखा। मोक्षदा जैसी सेवक पत्नी को पाकर शरत को लगा, जैसे उसके हृदय में प्रकाश की किरण फूट पड़ी हो। मोक्षदा अब उसकी प्रेरणा बन गई, शक्ति बन गई। इस प्रकार मोक्षदा ने भी कानूनी पत्नी न होते हुए भी पत्नीत्व के दायित्व को पूर्ण रूप से निभाया। लेखक ने प्रस्तुत पंक्तियों में सच्चे प्रेम और मिलन का वर्णन बड़े सुंदर शब्दों में किया है।

व्याख्या—मोक्षदा अर्थात् हिरण्यमयी के आ जाने के बाद शरत के हृदय के प्रेम-प्रसून खिल उठे। अभी तक उसका जीवन बड़ा अव्यवस्थित रहता था। लेकिन जब सच्चे विवाह को उसने स्वीकार कर लिया तो एक बार फिर उसके जीवन में बहार आ गई। उसकी पूर्व पत्नी की मृत्यु हो चुकी थी। अतः वह बड़ा अनमना-सा रहता था। पर मोक्षदा

नोट

का साथ पाकर उसके मन में ठीक प्रकार से जीने की लालसा बढ़ गई। उसने गृहस्थी बसा ली थी इसलिए वह पुनः सुंदरता को पाने वाले विचारों में तैरने लगा। जब व्यक्ति का टूटा हुआ प्रेम फिर से जुड़ जाता है तो उसके मुख पर प्रेम की लाली अपने आप आकर बिखर जाती है। शरत के चेहरे पर भी ऐसी ही लाली ने अपना घर बना लिया। प्रेम के ऐसे सुखद वातावरण के कारण उसके घर में फूलों की-सी छटा दिखाई देने लगी। शरत को पुस्तकों और पशु-पक्षियों से अत्यधिक प्रेम था। इसी कारण उसके पास पुस्तकों की एक लायब्रेरी थी। उसने तोता, मैना, कुत्ता आदि पशु-पक्षी पाल रखे थे। वह इन सबका बहुत ध्यान रखता था। पत्नी के घर में आ जाने के कारण उसे इन सबकी ओर से चिंता नहीं रही क्योंकि गृहिणी इन सबकी देखभाल अच्छी तरह कर सकती थी। हिरण्यमयी के आने के कारण शरत ने घर में तुलसी का पौधा भी लगा लिया। तुलसी में ऑक्सीजन (शुद्ध वायु) अधिक होती है। वातावरण को शुद्ध करने के लिए प्रत्येक हिन्दू अपने घर में तुलसी का पौधा लगाना शुभ मानता है।

विशेष

1. लेखक ने दर्शाया है कि प्रेम का संसार कितना निराला है। जिस व्यक्ति की पहली पत्नी की मृत्यु हो जाती है उसकी गृहस्थी एक प्रकार से अव्यवस्थित हो जाती है। उसके चारों ओर अंधकार ही अंधकार दिखाई देने लगता है। शरत के जीवन में भी अंधकार छाया हुआ था लेकिन अचानक दूसरी पत्नी मोक्षदा के आ जाने से उसकी सौंदर्य भावना फिर से जाग गई। उसकी गृहस्थी व्यवस्थित हो चली। वास्तव में प्रेम का संसार बड़ा निराला है।
2. शरत के जीवन का वास्तविक चित्रण इस गद्यांश में किया गया है। विवरण को सीधे-साधे शब्दों में व्यक्त किया गया है। भाषा में काव्यात्मकता का-सा आनंद है जिससे शरत की प्रेम-भावना उभर कर पाठकों के सामने आ जाती है।

15

“उसी समय सहसा धोबी का आर्त्तनाद सुना। प्राणों के भय से वह अपनी बकरी खोलना भूल गया था। शरत तुरंत दौड़ा। किसी के निषेध की उसने परवाह नहीं की। जलते हुए घर में घुस गया। सभी लोग हाय-हाय करने लगे। परंतु उसी क्षण आग और धुएँ के कुण्डल के बीच में से बकरी के बच्चे को छाती से चिपकाए हुए वह विद्युत गति से बाहर आया। ठीक इसी समय वह जलता हुआ घर बड़े जोर से टूटकर गिर पड़ा।”

प्रसंग—शरत धनोपार्जन के लिए रंगून में रहने लगा था। अचानक एक संध्या को उसके घर में आग लग गई। घर का सारा सामान उस आग में जल गया। शरत ने एक विदेशी व्यक्ति से बहुत सी पुस्तकें खरीदी थीं। वे पुस्तकें भी अग्नि में स्वाहा हो गईं। इसके अतिरिक्त वर्षों की तपस्या के बाद उसने ‘चरित्रहीन’ नामक एक उपन्यास लिखा था। आग ने उसे भी अपनी लपटों में समेट लिया। शरत को सबकुछ जल जाने का बड़ा दुख हुआ किंतु उसे इस बात की प्रसन्नता भी थी कि उसने कुछ पुस्तकें, अपनी पत्नी और पशु-पक्षी को बचा लिया था। प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने आग लगने के बाद शरत के द्वारा एक धोबी की सहायता करने का वर्णन किया है।

व्याख्या—शरत जिस मकान में रहता था उसके नीचे के तल्ले में एक धोबी रहता था। अचानक घर में आग लग गई। जिस समय घर में आग लगी, सब लोग सोए हुए थे। पड़ोसियों के चीखने-चिल्लाने पर सब लोग उठ-उठकर इधर-उधर भागने लगे। शरत ने उस आग से किसी तरह अपनी पत्नी, पशु, पक्षी आदि को बचा लिया लेकिन वह पुस्तकों को नहीं बचा सका। इसी समय उसके कान में एक धोबी के रोने-धोने की आवाज आई। धोबी आग देखकर स्वयं अपने प्राण लेकर मकान के बाहर भाग गया था परंतु वह अपनी बकरी को बाहर निकालना भूल गया था। शरत ने धोबी की चीख-पुकार सुनी तो वह तुरंत भीतर की ओर दौड़ पड़ा। लोग मना करते रहे लेकिन उसने किसी की बात नहीं सुनी। वह सबके देखते-देखते उस जलते हुए घर में प्रविष्ट हो गया। जिसने देखा वही दुख में डूब गया। बहुत से स्त्री पुरुष हाय-हाय करने लगे। लेकिन शरत मकान के भीतर से बकरी को खोजने लगा। उसने शीघ्र ही

नोट

बकरी को ढूँढ़ लिया। थोड़ी देर बाद लोगों ने देखा कि शरत धुएँ के बादलों के बीच में से बकरी के बच्चे को छाती से चिपटा कर बड़ी तेजी से बाहर की ओर आ रहा है। सब लोग उसके साहस को देखकर चकित रह गए। ठीक इसी समय आग ने लगते हुए घर को ढा दिया। सचमुच शरत ने अप्रतिम साहस का परिचय दिया था।

विशिष्ट—लेखक ने दर्शाया है कि शरत कितना साहसी था। वह दूसरों के दुःख को बिल्कुल नहीं देख पाता था। उसे दूसरों की सहायता करने में विशेष आनंद आता था। वह जानता था कि मानवता क्या चीज है? इसी कारण जब उसने देखा कि धोबी भूलवश बकरी का बच्चा ऐसे मकान में छोड़ आया है जो चारों ओर बुरी तरह आग से घिर गया है, तो वह उस निरीह पशु को लेने के लिए आग में घुस गया। उस समय उसने अपनी जान की भी परवाह नहीं की। सच है, जो लोग साहसी और परोपकारी होते हैं वे आगे बढ़ने के बाद पीछे हटना नहीं जानते हैं, ऐसे लोग देवता होते हैं, मसीहा होते हैं, कृष्ण होते हैं, शिवाजी होते हैं। उनमें मानवीयता के गुण बचपन से ही आ जाते हैं। शरत इस क्षेत्र में अपना उदाहरण स्वयं था।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

5. शरत की शरारत पर माया ने शरत की किससे पिटाई की?
(क) चाबुक (ख) चप्पल
(ग) डंडा (घ) इनमें से कोई नहीं।
6. प्रभाकर जी के अनुसार शरत ने किसकी उपासना की प्रतिज्ञा ली होगी?
(क) देवी (ख) सौंदर्य
(ग) भगवान (घ) इनमें से कोई नहीं।
7. बर्मी भाषा की परीक्षा पास करने के बाद शरत बाबू क्या बन सकते थे?
(क) डॉक्टर (ख) इंजीनियर
(ग) वकील (घ) इनमें से कोई नहीं।

16

“उसमें अब रवींद्रनाथ जैसा लिखने का विश्वास पैदा हो गया था। इसलिए वह चाहता था कि बचपन की रचनाओं को यदि प्रकाशित करना ही है तो एक बार फिर से देख लेना आवश्यक है। इस दृष्टि से ‘काशीनाथ’ जब पुस्तकाकार छपा तो उसमें उसने काफी संशोधन किए। पत्रिका में छपते समय इस रचना का अंत काशीनाथ हत्या और कमला की हत्या से होता है, परंतु पुस्तक रूप में आने पर वह कथा सुखांत हो गई।”

प्रसंग—रंगून से लौटकर शरत ने तेजी से लिखना शुरू कर दिया था। बंगाल में लोगों को पता चल चुका था कि शरतचंद्र नाम का एक व्यक्ति है जो कथाशिल्पी है। शरत की कहानियाँ ‘यमुना’ नामक पत्रिका में छपती थीं जिन्हें पढ़कर लोग आश्चर्यचकित रह जाते थे क्योंकि शरत बंगाल की अनेक समस्याओं को अपनी कहानियों में रखता था। इसी समय बचपन में लिखी बहुत-सी रचनाएँ भी मित्रों के सहयोग से छपने लगीं। कुछ लोग उसकी रचनाओं की प्रशंसा करते थे और कुछ कहते कि ये अपरिपक्व मस्तिष्क की रचनाएँ हैं। लेकिन जो बात सच होती उसे शरत भी स्वीकार करता। वह अपनी प्रशंसा कभी नहीं करता, वरन अपने साहित्य के द्वारा लोगों को यही समझाने की चेष्टा करता कि बंगाल के समाज में सुधार की आवश्यकता है। स्त्रियों के क्षेत्र में विधवाओं, वेश्याओं आदि के प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करने की जरूरत है क्योंकि स्त्रियाँ हैं तो मनुष्य ही। यदि स्त्रियाँ नहीं होंगी तो मानव कैसे रहेगा?

नोट

व्याख्या—शरत हर समय कुछ न कुछ अवश्य लिखता था। बंगाल में उसकी प्रतिष्ठा लेखक के रूप में होने लगी थी। रवींद्रनाथ बंगाल के प्रसिद्ध लेखक थे। इस प्रकार इस समय तक शरत में भी रवींद्रनाथ के समान लिखने का विश्वास पैदा हो गया था। उसने बचपन में बहुत-सी रचनाएँ लिखी थीं जो अभी तक प्रकाशित नहीं हुई थीं। उसके मित्र उन रचनाओं को भी छपवाना चाहते थे। परंतु शरत चाहता था कि उन रचनाओं को प्रकाशित कराने से पहले एक बार देख लेना आवश्यक है क्योंकि उन रचनाओं में बहुत-सी ऐसी बातें हो सकती हैं जो देश और समाज को हानि पहुँचा सकती हैं, लोगों को ठेस पहुँचा सकती हैं। इस दृष्टि से उसने ‘काशीनाथ’ में काफी संशोधन किया। पहले यह रचना दुखांत थी लेकिन संशोधन के बाद इसे सुखांत किया गया। लेखक ने लिखा है कि ‘काशीनाथ’ पत्रिका धारावाहिक के रूप में छपी थी। उस समय इस रचना में काशीनाथ तथा कमला की हत्याएँ की गई थीं। परंतु जब इसका प्रकाशन पुस्तक के रूप में किया गया तो इसे सुखांत बना दिया गया। काशीनाथ और कमला की हत्या वाले भाग निकाल दिए गए। हो सकता है कि शरत ने काशीनाथ की कथा को मधुर बनाने के लिए ऐसा किया हो। लेकिन कथा रोचक हो गई।

विश्लेष—प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने दर्शाया है कि शरत ‘काशीनाथ’ नामक रचना के पुस्तक के रूप में प्रकाशित होने तक बंगाल में एक लेखक के रूप में प्रतिष्ठापित हो चुका था। उसके अंदर प्रौढ़ों की गंभीरता और एक प्रसिद्ध लेखक की गौरव गरिमा समा गई थी। इसी कारण प्रभाकर जी की दृष्टि में शरत एक सीमा तक रवींद्रनाथ के बराबर का लेखक हो गया था। परंतु वह अपने से संतुष्ट नहीं था। वह अपने लेखकीय कार्य में सुधार करना चाहता था। इसी कारण इस काल में उसने जितनी रचनाएँ प्रकाशनार्थ दीं, सभी में कुछ न कुछ संशोधन अवश्य किया। भाषा-सुधार की ओर भी उसने ध्यान दौड़ाया। इससे रचनाओं में प्रसाद गुण आ गए और साधारण पाठक भी उनको पढ़ने के लिए लालायित हो उठा।



उदाहरण—शरत के घर में आग लगी होने पर भी पड़ौसी के आग लगते हुए घर से बकरी को बचाकर लाना एक अच्छा इन्सान होने का प्रतीक है।

17

“जो पक गया है उसको बाँधे रखना दूसरों के लिए देखने में अच्छा लग सकता है, लेकिन जिस आदमी के शरीर में घाव है उसको तो कोई सुविधा नहीं होती। केवल सौंदर्य-सृष्टि के अतिरिक्त उपन्यास लेखक का और एक महत्वपूर्ण काम है। वह काम यदि घाव को देखना है तो वैसा करना ही होगा। आस्टिन मेरी कारेली एवं सारा ग्रेंड ने समाज के अनेक घावों पर से पर्दा उठाया है। ठीक करने के लिए, केवल लोगों को दिखाकर भयभीत करने या मनोरंजन करने के लिए नहीं...तुमने लिखा है ‘चरित्रहीन’ दूसरे नाम से प्रकाशित करना, इससे सबसे अधिक दुख हुआ।” (पृष्ठ-82)

प्रसंग—छोटी से छोटी रचनाओं के साथ-साथ शरत ‘चरित्रहीन’ बराबर लिख रहा था। उसको प्रकाशित करने के संबंध में एक प्रकार की हलचल मची हुई थी। ‘यमुना’ नामक पत्रिका में ‘चरित्रहीन’ का विज्ञापन छपना शुरू हो गया था। लेकिन शरत ऐसा नहीं चाहता था। अतः वह बहुत कठिनाई में पड़ गया। अतः उसने प्रमथ को एक पत्र लिखा। पत्र में उसने यही व्यक्त किया कि ‘चरित्रहीन’ का विज्ञापन देना एक प्रकार से अनुचित है क्योंकि लोगों पर इसका गलत प्रभाव पड़ सकता है। लोग पढ़ेंगे तो सोचेंगे कि शरत स्त्रियों का नेता बनना चाहता है। इतना सब कुछ होने के उपरांत भी शरत ने पुस्तक की पाण्डुलिपि प्रमथनाथ को प्रेषित कर दी। पाण्डुलिपि द्विजेन्द्रलाल राय ने पढ़ी। पढ़ने के पश्चात् उन्होंने अपनी राय जाहिर की कि यह रचना अत्यंत अश्लील है। इसलिए इसे किसी अच्छे पत्र में नहीं छापा जा सकता क्योंकि अच्छे लोग इस उपन्यास को कभी नहीं पढ़ेंगे। प्रकाशक हरिदास चट्टोपाध्याय ने भी उसे अनैतिक कहकर प्रकाशन के अयोग्य बताया। प्रभाकर जी ने प्रस्तुत गद्यांश में शरत की पाण्डुलिपि ‘चरित्रहीन’ के बारे में विचार व्यक्त किए हैं।

नोट

व्याख्या—शरत ने जब प्रकाशक का पत्र पढ़ा तो वह एकाएक क्रुद्ध हो उठा। उसने प्रकाशक को लिखा कि उसकी रचना ‘चरित्रहीन’ तुरंत लौटा दी जाए। साथ ही अपने उत्तर को समझाते हुए उसने निम्नांकित बातें स्पष्ट की—

अंग विशेष को खोलकर कभी नहीं दिखाया जाता है इस बात को मैं भली-भांति जानता हूँ। लेकिन क्या घायल स्थान को खोलकर नहीं दिखाना चाहिए? समाज में यदि कोई ऐसा डॉक्टर है जो घायलों की चिकित्सा करता है, जिस समय वह अपना कार्य करता है तो क्या वह किसी की बात सुनता है। उसे तो जो कुछ करना होता है उसे तुरंत कर देता है, वरना बीमार उसे फोड़े पर हाथ भी धरने नहीं देगा। जो पक गया है उसको बाँध कर रखने में कोई लाभ नहीं है। उसे तो दिखाकर ही इलाज किया जा सकता है। जिसके शरीर में घाव होता है उसे तो चिकित्सा कराने में ही सुविधा रहती है। सुंदरता की दृष्टि से प्राकृतिक कार्यों का अपना महत्व अलग से होता है। लेकिन सौंदर्य-रचना के साथ-साथ उपन्यास लेखक का एक महत्वपूर्ण काम और भी होता है। वह काम यह है कि यदि सच्चाई का पता लगाना है तो उससे संबंधित बातों को भी स्पष्ट रूप में लिखना होगा। बिना ऐसा किए समाज के सामने सच्चाई कभी खुलकर आ ही नहीं सकती है। उदाहरण के लिए आस्टिन, मेरी कारेगली और सारा ग्रेंड का नाम लिया जा सकता है। इन लोगों ने समाज के बहुत से घावों को खोलने के लिए अनेक बातें लिखी हैं। घाव का वास्तव में इलाज तभी हो सकता है जब डॉक्टर उसे साफ-साफ देखता है। मैंने भी अपने उपन्यास में जो कुछ लिखा है वह लोगों को डराने या जनसाधारण का मनोरंजन करने के लिए नहीं लिखा है। आपने जो यह लिखा है कि ‘चरित्रहीन’ उपन्यास किसी दूसरे नाम से प्रकाशित कर दिया जाए, इसके लिए मैं तैयारी नहीं हूँ। मैं इस दुख को कभी सहन नहीं कर सकता। उपन्यास न छपे यह दूसरी बात है।

विशिष्ट

1. प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने शरत के स्पष्टवक्ता होने के संबंध में अपने विचार व्यक्त किए हैं। शरत वास्तव में स्पष्टवादी और आत्मस्वाभिमानी व्यक्ति था। वह साहित्य के माध्यम से बंग-समाज की कुरीतियों और कमजोरियों को लोगों के सामने रखना चाहता था। उसका कहना था कि उपन्यासकार का कर्तव्य केवल पाठकों का मनोरंजन करना ही नहीं है वरन समाज में व्याप्त अनेक घावों को भी खोलना है ताकि लोग उन घावों को भरने के लिए कोई इलाज सोच सके।
2. प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने यह दर्शाया है कि शरत स्वतंत्र लेखन का पक्षपाती था। उसके चिंतन में समाज की कमजोरियों का स्पष्ट विवरण प्राप्त होता है। वह अत्यधिक आत्मस्वाभिमानी, स्पष्टवादी और क्रांतिकारी विचारों का पोषक था। इन विचारों के कारण उसे अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा लेकिन उसने इसकी बिल्कुल चिंता नहीं की।
3. पंक्तियों की भाषा सृजनात्मक है।

18

“लेखक रूप में प्रसिद्ध होने पर उसकी प्रतिष्ठा भी बढ़ रही थी। उसके साथी अब उपेक्षा से उसे चिढ़ाते नहीं थे। इसके विपरीत जब भारत से स्वदेशी आंदोलन के नेता श्री सुरेंद्रनाथ सेन रंगून आए तब उनकी अभ्यर्थना के लिए जो सभा अयोजित की गई उसके सभापति के पद पर उसी को बिठाया गया। जीवन में पहली बार वह अध्यक्ष की कुर्सी पर बैठा तब वह कितना नर्वस हो उठा था। सेर डेढ़ सेर की माला उसके गले में पड़ी थी। उसके भार से सीधा खड़ा नहीं हो पा रहा था। देखकर दया आती है।”

प्रसंग—शरत इस समय तक एक प्रसिद्ध साहित्यकार हो चुके थे। अतः उन्होंने ‘विराज बहू’ लिखना आरंभ किया, जिसे लिखने में उनको एक माह से अधिक समय लगा। इस उपन्यास को उन्होंने बड़े धैर्य के साथ लिखा था। लिखने के बाद उन्होंने उसे अपने मित्रों को सुनाया था, ताकि विचार-विनिमय के बाद इसमें संशोधन किया जा सके। लिखने के संबंध में बहुत सजग रहते थे। वह कभी ऐसी बात नहीं लिखते थे। जिससे लोगों को चोट पहुँचे। लेकिन वह

नोट

जो कुछ कहना चाहते थे उसमें किसी प्रकार का छिपाव नहीं करते थे। समाज की कमजोरियों को वे इस रूप में रखना चाहते थे, जिससे लोग जागृत हों और बुराइयों को दूर करने का प्रयास करें।

व्याख्या—शरत लेखक के रूप में प्रसिद्ध हो चुका था। अतः लेखकीय समाज के साथ-साथ अन्य लोगों के बीच भी उसकी प्रतिष्ठा बढ़ रही थी। किसी समय उसके मित्र उसकी हँसी-मजाक उड़ाया करते थे। लेकिन अब वे उसकी उपेक्षा नहीं करते थे। इन बातों के अतिरिक्त जब भारत से स्वदेशी आंदोलन के नेता श्री सुरेंद्रनाथ सेन रंगून पहुँचे थे तो उनके स्वागत के लिए एक सभा बनाई गई। उस सभा का सभापति शरत बाबू को ही बनाया गया। इससे शरत को कोई विशेष प्रसन्नता नहीं हुई क्योंकि वह सोचता था कि अध्यक्ष अत्यधिक योग्य व्यक्ति को बनाया जाए। फिर भी उस समय अध्यक्ष की कुर्सी पर बैठकर वह भीतर ही भीतर छोटा पड़ने लगा। वह सोचता था कि अध्यक्ष पद स्वीकार करके उसने बहुत बड़ी गलती की है।

उसके गले में सैकड़ों व्यक्तियों ने फूलों की मालाएँ डालीं। उसका स्वागत किया। इस प्रकार उसके गले में कम से कम सेर डेढ़ सेर का वजन हो गया। मालाओं के भार के कारण उसको सीधे खड़े होने में बड़ी परेशानी हो रही थी। उसकी यह दशा देखकर दया आने लगी क्योंकि एक पतला-दुबला व्यक्ति अपने गले में इतने सारे बोझ को सहन कर रहा था।

विशेष—इन पंक्तियों में लेखक ने दर्शाया है कि लेखक के रूप में उसकी प्रतिष्ठा बढ़ गई थी। इसलिए अब सब लोग उसे सम्मान की दृष्टि से देखते थे। यहाँ प्रभाकर जी ने शरत की मनःस्थिति का चित्रण बड़ी कुशलता से किया है। इस प्रकार शरत के व्यक्तित्व का वर्णन लेखक द्वारा बड़े सरल शब्दों में किया गया है।



टास्क शरत अपना परिचय देने से क्यों हिचकिचाते थे? कारण स्पष्ट कीजिए।

19

“प्रमाण और साक्षी की आवश्यकता शायद ही पड़ी हो। लेकिन इसमें तनिक भी संदेह नहीं है कि इन कहानियों के पीछे किसी न किसी रूप में उसकी अनुभूति होती थी। और अनुभूति के ये स्रोत उसे सहज भाव से मिल भी जाते थे। वही दृष्टि तो उसका मूलधन थी।” (पृष्ठ-84)

प्रसंग—शरत अपना परिचय देने में सदा ही झिझकता था। वह वस्त्रों और चाल-ढाल से ऐसा मालूम पड़ता था मानो वह बिल्कुल देहाती है। फिर भी मित्रों के साथ प्रेम व्यवहार करना और किसी भी गोष्ठी में शामिल होने में उसे विशेष आनंद आता था। प्रायः बहुत से साहित्यकार प्रतिदिन ‘यमुना’ के कार्यालय में इकट्ठे होते थे। उनमें कथा शिल्पी और कवि सुधीन्द्रनाथ ठाकुर भी थे। वे शरत को बड़ी श्रद्धा के साथ देखते थे। इस बैठक में कवि और साहित्यकार, साहित्यिक आलोचनाएँ न करके हँसी-मजाक किया करते थे। शरत अपनी कोई ताजा कहानी साहित्यकारों को सुनाता तो लोग कहते, शरत तुम यह मनगढ़ंत कहानी सुना रहे हो। इस पर शरत उत्तर देता कि यह सच्ची घटना है। वह इसके लिए साक्ष्य और प्रमाण देने के लिए भी तैयार हो जाता था। शरत की ऐसी बातें सुनकर साहित्यकार आश्चर्य से उसका मुख देखने लगते थे। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने शरत की ऐसी ही एक घटना का वर्णन किया है।

व्याख्या—शरत अपनी कथा साहित्यकारों को सुनाता तो लोग उसकी बात पर विश्वास नहीं करते थे। वे सोचते थे कि शरत शायद मनगढ़ंत कथा सुना रहा है। इस पर शरत प्रमाण और साक्षी देने को तैयार हो जाता। वह शायद इसलिए कि उसने किसी सत्य घटना पर अपनी कहानी गढ़ी होती। इस प्रकार शरत को कभी प्रमाण और साक्ष्य की जरूरत ही नहीं पड़ी। लेकिन इसमें भी झूठ नहीं था कि शरत जितनी भी कहानियाँ लिखता था उनके काल्पनिक

नोट

अनुभव का स्तेय अवश्य होता। ऐसी अनुभूति के साधन उसे आसानी से प्राप्त हो जाते थे क्योंकि वह जिस समाज में रहता था उसमें समस्याओं का अंबार लगा हुआ था और घटनाएँ भी आसानी से बिना किसी मुसीबत के प्राप्त हो जाती थीं। जिस दृष्टिकोण को लेकर वह कथा लिखता था, असल में वही उसका मूल होता था। उसका दृष्टिकोण बड़ा परिपक्व और ठोस होता था। लोगों को उसकी आलोचना करने का अवसर नहीं मिलता था।

विशेष—लेखक ने दर्शाया है कि शरत कहानी या उपन्यास किसी सत्य घटना को आधार बनाकर लिखता था। बंगाल में आए दिन नई-नई घटनाएँ घटती रहती थीं। शरत उनको देखकर एक कहानी बुन लेता था। इस प्रकार वह योजनाबद्ध ढंग से लेख का कार्य करता था। यदि लोग उसकी कहानी पर विश्वास नहीं करते थे तो वह कहता था कि यदि लोगों को प्रमाण की आवश्यकता है तो मैं वह भी दे सकता हूँ। वह अन्य लोगों की साक्षी देने के लिए भी तैयार हो जाता था। इस प्रकार उसकी कहानियाँ मानव मन को छूने वाली होती थीं।

20

“इसी समय वह रवींद्रनाथ से भी मिला। वह उनका परमभक्त था और रवींद्रनाथ भी शरत की प्रतिभा से परिचित हो चुके थे। अभी-अभी उन्होंने उसकी नई कृति ‘पंडित मोशाय’ पढ़ी थी। असित कुमार हाल्दार ने लिखा है, मुझे याद है, ‘पंडित मोशाय’ पढ़ने के बाद उन्होंने मुझसे कहा था, “मैंने काफी दिनों से इधर-उधर की चीजें पढ़ना छोड़ दिया है, किंतु इस पुस्तक की लेखनी मुझे मरुभूमि में शादल के समान नज़र आती है।”

(पृष्ठ-87)

प्रसंग—‘यमुना’ के कार्यालय में जो साहित्यिक बैठकें होती थीं, उन्हीं में शरत का परिचय उस काल के साहित्यकारों से भी हुआ। उनमें एक हेमेंद्र कुमार राय भी थे। वह यमुना के संपादक फणींद्रनाथ पाल की सहायता करते थे। उन्होंने शरत को देखकर भी नहीं पहचाना क्योंकि शरत एक सीधा-साधा, पतले चेहरे वाला रोगी के समान व्यक्ति था। हेमेंद्र ने सोचा, यह शायद कार्यालय का कोई दफ्तरी है। तभी वहाँ आकर फणींद्रनाथ पाल ने शरत का परिचय दिया। हेमेंद्र को बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा कि मैंने तो मन ही मन आपको कोई दफ्तरी समझा था। यह सुनकर शरत खिलखिलाकर हँस पड़ा। कुछ समय के बाद दोनों में गहरी मित्रता हो गई। लेखक ने शरत की उसी प्रकार की एक साहित्यिक भेंट का परिचय दिया, जो रवींद्रनाथ से थी।

व्याख्या—अन्य साहित्यकारों के समान शरत का परिचय रवींद्रनाथ से भी हुआ। शरत रवींद्रनाथ को बड़ी श्रद्धा की दृष्टि से देखता था। इसी प्रकार रवींद्रनाथ भी शरत की योग्यता और प्रतिभा को मानने लगे थे क्योंकि इस समय तक शरत काफी लिख चुका था। इसी कारण उसकी ख्याति लगभग सारे बंगाल में हो चुकी थी। कुछ समय पहले रवींद्रनाथ ने शरत की एक नई रचना ‘पंडित मोशाय’ पढ़ी थी। उस रचना की उन्होंने बहुत प्रशंसा की। इस बात को असित कुमार हाल्दार ने भी लिखा है कि तथ्य उन्हें भली-भाँति स्मरण हैं, पढ़ने के बाद रवींद्रनाथ टैगोर ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था कि उन्होंने काफी समय से इधर-उधर की पुस्तकों को पढ़ना त्याग दिया है। उनकी इच्छा उच्च कोटि की पुस्तकें पढ़ने की रहती है। लेकिन अचानक उन्होंने जब ‘पंडित मोशाय’ नामक पुस्तक पढ़ी तो उनको लगा कि यह पुस्तक रेतीले स्थान में कहीं अचानक झरना बहने और हरी-भरी घास दिखाई देने के समान है।

विशिष्ट

1. इन पंक्तियों में लेखक ने शरत की लेखनी की प्रशंसा की है। उनकी लिखी पुस्तक ‘पंडित मोशाय’ की प्रशंसा रवींद्रनाथ ठाकुर ने भी की। इससे स्पष्ट होता है कि शरत का लेखन कार्य प्रशंसनीय हो चला था।
2. गद्यांश की भाषा विचारात्मक है। इस पर भी वह बोधगम्य है। शरत के साहित्यिक विषय पर गहरी बात को भी सीधी-सादी भाषा में कह देना प्रभाकर जी की विशेषता है।

“‘पल्ली समाज’ में केवल दुख-दैन्य से पीड़ित, संकीर्ण सांस्कृतिक घेरे के भीतर बँधे हुए, परंपरा-प्रचलित कुसंस्कारों से घिरे हुए, बंगाल के निम्न-मध्यवर्गीय देहाती समाज का सीधा-सादा यथार्थ चित्रण है। शरत का बचपन और यौवन का भी कुछ समय गाँव में ही कटा था। गाँव को वह प्यार करता था। उसी के आधार पर उसने इस पुस्तक की रचना की।” (पृष्ठ-89)

प्रसंग—इस समय तक शरत साहित्यकार के रूप में ख्याति प्राप्त कर चुका था। एक दिन वह फणींद्रनाथ के पास पहुँचा और उनसे ‘बड़ी दीदी’ पुस्तक की सारी प्रतियाँ मांगी क्योंकि उसे पता चल चुका था कि फणींद्रनाथ उसकी पुस्तकों को बेचकर काफी धन कमा रहे हैं। एक संबंधी ने बताया कि पुस्तकें अलमारी में हैं पर चाबी फणींद्रनाथ के पास हैं। शरत बड़ा दुखी हुआ। उसने कील की चाबी बनाकर ताला खोला और सारी प्रतियाँ निकाल कर ले गया। कुछ देर बाद फणींद्रनाथ आए तो उनको शरत द्वारा नई बात खड़ी कर देने के विषय में पता चला। शरत को अपनी गलती का अनुभव हुआ। वह बहुत पछताया। अब वह केवल ‘भारतवर्ष’ के लिए लिखने लगा। इसी समय कुछ मित्रों के कहने पर उसने ‘पल्ली समाज’ नामक रचना लिखना शुरू किया। प्रस्तुत गद्यांश में इसी रचना के संबंध में विचार व्यक्त किए गए हैं।

व्याख्या—शरत ने ‘पल्ली समाज’ नामक रचना पर काम करना आरंभ कर दिया। इस पुस्तक में शरत ने बंगाल के निम्न-मध्यवर्गीय और सीधे-सादे लोगों का चित्रण किया है। इस वर्ग के लोग केवल दीनता और दुखों से परेशान ही नहीं थे वरन कुछ और भी ऐसी बातें थीं जिनके कारण उनको दुख उठाना पड़ता था। वे लोग परंपरागत बुरे संस्कारों से घिरे हुए थे। बंगाल का देहाती समाज कितना सीधा-सादा और सरल हृदय था, इसका चित्रण इस पुस्तक में विस्तार से किया गया है। लेखक वही लिखता है जो अपने आसपास देखता है। वह जिस समाज में रहता है। उसकी अच्छाई और बुराई का सीधा प्रभाव उसके ऊपर पड़ता है। समाज में जो कुछ होता है उसे वह अपनी खुली आँखों से देखता है। शरत ने इसी बंगाली समाज का यथार्थ लेखा-जोखा ‘पल्ली समाज’ में रखा है। शरत का बचपन और यौवन भी कुछ समय के लिए गाँव में व्यतीत हुआ था। इसलिए वह गाँव की गली-गली से प्रेम करता था। इन सब बातों को आधार मानकर उसने इस पुस्तक का प्रणयन किया था।

विशिष्ट—प्रस्तुत पंक्तियों से पता चलता है कि शरत बंगाल के निम्न-मध्यवर्गीय लोगों के जीवन से संबंधित चित्रण करने में सिद्धहस्त था। शायद इसका मुख्य कारण यह हो सकता है कि शरत का बचपन और यौवन इसी प्रकार के लोगों के बीच व्यतीत हुआ था। वह गाँव और वहाँ के लोगों से अत्यधिक प्रेम करता था क्योंकि प्राकृतिक वातावरण का आनंद गाँव के जीवन में आसानी से प्राप्त हो जाता है। इन पंक्तियों में विवरणात्मक शैली का प्रयोग किया गया है। भाषा सीधी, सरल और दार्शनिक है।



टास्क प्रभाकर जी ने शरत की गायन प्रतिभा एवं संगीत प्रियता के तथ्यों को किस प्रकार प्रस्तुत किया है?

“लेकिन स्नेह की प्रगाढ़ता केवल रूप की अपेक्षा नहीं रखती। उनमें ऐसी कुछ विलक्षणता थी जो शीघ्र ही दर्शक का ध्यान आकर्षित कर लेती थी, फिर दिलीप तो उनकी रचनाओं के उपासक थे। शीघ्र ही उनकी हार्दिक सरलता, निश्छलता, स्नेह और संतों जैसी सादगी ने दिलीप के मन को जीत लिया। इस श्रद्धा का एक और कारण था उनका मधुर कंठ। दिलीप कुमार स्वयं भी तो सुंदर गायक थे। अपने पिता के कीर्तन गान और हिंदुस्तानी संगीत में उनकी अच्छी गति थी। जब वे अपने पिता का यह गीत सुनते—‘ओ जे गाना

प्रसंग—जिस समय शरत ने कलकत्ता छोड़कर रंगून का मार्ग पकड़ा था, उस समय वह असहाय था। उसके पास पैसे का अभाव था। लेकिन तेरह वर्ष बाद जब वह कलकत्ता लौटा तो, वह एक प्रसिद्ध कथाकार हो चुका था। उसका स्वागत करने के लिए बंगाल के लोग बड़े उत्सुक रहते थे। नाटककार द्विजेंद्रलाल राय शरत की बड़ी प्रशंसा करते थे। कुछ समय बाद उनके पुत्र दिलीप कुमार राय भी उनके भक्त हो गए। दोनों धीरे-धीरे मित्रवत व्यवहार करने लगे थे। शरत को देखकर दिलीप कुमार का हृदय प्रसन्नता से खिल उठता था। लेखक ने दार्शनिक भावों के मेल से प्रस्तुत गद्यांश में दो मित्रों के हृदयगत भावों का खुलासा किया है।

व्याख्या—जब दो व्यक्तियों में प्रेम-संबंध घनिष्ठ हो जाते हैं तो सुंदरता की ओर कोई ध्यान नहीं देता है। शरत बाबू और दिलीप कुमार एक दूसरे के आसानी से मित्र हो गए थे। शरत बाबू में कुछ ऐसे गुण थे जिनके कारण लोग बड़ी जल्दी उनकी ओर खिंचते चले जाते थे। फिर उनके मित्र दिलीप कुमार तो उनकी कृतियों को बड़े मनोयोग से पढ़ते थे और हर समय उनकी प्रशंसा करते रहते थे। शरत की बातें बड़ी सीधी-सादी और सच्ची होती थी। दूसरे, शरत व्यवहार कुशल भी थे। अतः शीघ्र ही उनके सरल स्वभाव, निश्छल प्रेमभाव और साधु-संतों के समान सादे रहन-सहन ने दिलीप कुमार के मन को जीत लिया। एक अन्य कारण से भी दिलीप कुमार शरत के भक्त हो गए थे। शरत का गला बड़ा सुरीला और मीठा था। अपने पिता के द्वारा कीर्तन गाने और भारतीय संगीत का उनको अच्छा ज्ञान था। दिलीप कुमार को गाने-बजाने का भी शौक था। अतः वह भी कभी-कभी मधुर कंठ से कीर्तन और भारतीय संगीत की तान छेड़ देते थे। उनके गीत-संगीत में इतनी मिठास होती थी कि शरत बाबू की इच्छा होती थी कि वे उन्हें सुनते ही रहें। यही कारण था कि बार-बार उस मीठे संगीत को सुनने के बाद भी शरत का मन कभी भरता नहीं था।

विशिष्ट—लेखक ने इन पंक्तियों के माध्यम से शरत की गान विद्या और संगीत प्रियता के तथ्यों को प्रस्तुत किया है। शरत और उनके मित्र को भारतीय संगीत बहुत प्रिय थे। इस प्रकार शरत एक ओर साहित्यकार थे तो दूसरी ओर गाने-बजाने के भी शौकीन थे। उनका कंठ मधुर था। अतः जिस समय वे गाते थे तो लोग उनके गाने पर मुग्ध हो जाते थे। शरत संगीत के स्वरों में इतने डूब जाते थे कि वह सबकुछ भूल जाते थे। बंग समाज में प्रायः उनके गीतों की प्रशंसा की जाती थी।

23

“जहाँ एक ओर उसके विरुद्ध इतना तीव्र आंदोलन उठ खड़ा हुआ था वहीं दूसरी ओर बहुत से व्यक्तियों ने उसकी आत्मा तक पहुँचने का प्रयत्न भी किया। बहुत दिनों बाद एक धर्मपरायण व्यक्ति ने एक गोष्ठी में उससे कहा, “आप मुँह से चाहे जो कहें, आपकी रचनाओं को पढ़कर मुझे लगता है कि सनातन धर्म की मर्यादा को आप ठेस पहुँचाना नहीं चाहते।”

(पृष्ठ-100)

प्रसंग—शरत चंद्र के जीवन में एक प्रकार से स्वर्ण युग आ गया था क्योंकि देखते-देखते उनकी रचनाएँ बंगाल के घर-घर में छा गईं। एक के बाद एक रचना निकलती चली जा रही थी। फिर ‘चरित्रहीन’ के प्रकाशित होते ही बंगाल में जैसे एक नई लहर व्याप्त हो गई। लोग शरत बाबू की आलोचना करने लगे। ‘चरित्रहीन’ में जिस नारी का चरित्र लिखा गया था उसकी कमी बंगाल में कभी नहीं रही, लेकिन समाज में कुछ रूढ़िवादी और धर्मपरायण व्यक्ति ऐसे थे जो उनके विरुद्ध हो गए। तब शरत ने लोगों को समझाया कि किरणमयी के द्वारा मैंने नारी जीवन की व्यर्थता को दिखाने की चेष्टा की है। कुछ भी सत्य था, लेकिन लोग ऐसा मानकर चलते थे कि यह पुस्तक समाज के वातावरण को गंदा कर देगी।

व्याख्या—शरत की ‘चरित्रहीन’ पुस्तक प्रकाशित हो चुकी थी। अतः लोग उसे पढ़कर शरत के विरुद्ध छिंटकशी करने लगे थे। इस प्रकार यदि एक तरफ लोग उनके विरुद्ध एक तीव्र आंदोलन लेकर आगे बढ़ गए थे तो दूसरी ओर बहुत से नवयुवक इस बात की चेष्टा करने लगे थे कि ‘चरित्रहीन’ के लेखक को पास से समझा जाए। वे शरत

नोट

की आत्मा की गहराई की थाह लेना चाहते थे। वे सोचने लगे थे कि जिस व्यक्ति ने अपनी रचना के द्वारा समाज के यथार्थ को सबके सामने खोलकर रखा है, वास्तव में वह कितना साहसी है। वे साहित्यिक शरतचंद्र से ऊपरी मन से तो घृणा कर सकते थे लेकिन भीतर से वे उनके कार्यों की प्रशंसा करने के लिए विवश थे क्योंकि शरत ने ‘चरित्रहीन’ में समाज में प्रचलित ज्वलंत प्रश्न को उठाया था। वे नारी को प्रतिष्ठित करना चाहते थे और इसी कारण उन्होंने बंग समाज की घिसी-पिटी बातों को समाप्त करने के लिए आवाज उठाई थी। काफी समय के उपरांत शरत का साक्षात्कार एक ऐसे व्यक्ति से हुआ जो धार्मिक प्रवृत्ति का व्यक्ति था। उसने शरत की ‘चरित्रहीन’ पुस्तक का गंभीरतापूर्वक अध्ययन किया था। उस व्यक्ति ने शरत से कहा कि आप अपने मुँह से कुछ भी कहें लेकिन आपकी पुस्तकों को पढ़कर मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि सनातन धर्म की मर्यादा के विरुद्ध आपने कुछ भी नहीं लिखा है। इसलिए आपकी कृतियों से सनातन धर्म की परंपराओं को कोई हानि नहीं पहुँच सकती। आपने जो कुछ लिखा है हमारे समाज में आए दिन वैसा ही होता है। आपने समाज रूपी दर्पण को सबके सामने रख दिया है। उस दर्पण में जो देखेगा उसे अपना ही चेहरा दिखाई देगा।

विशिष्ट—इन पंक्तियों में लेखक द्वारा शरत की रचनाओं में लिखित नारी धर्म की मर्यादा का स्पष्ट चित्रण किया गया है। ‘चरित्रहीन’ उपन्यास एक प्रकार से नारी जाति का लिखित विधान है। इसे पढ़कर रूढ़िवादी और धर्मपरायण व्यक्ति भी शरत का खुलकर विरोध नहीं कर पाए क्योंकि शरत ने वही लिखा है जो समाज में होता है। उन्होंने समाज की मर्यादा का उल्लंघन नहीं किया है। यह दूसरी बात है कि ‘चरित्रहीन’ पढ़कर भिन्न-भिन्न स्वभाव के लोगों ने अपने-अपने ढंग से उसका अर्थ लगाया परंतु जब उन्होंने शरत की आत्मा में झाँककर देखा तो उन्हें लगा कि शरत ने जो कुछ लिखा है उसे किसी भी स्थिति में झुठलाया नहीं जा सकता। वास्तव में पाठक की समझ पर ही सबकुछ निर्भर है। जिसकी जितनी बुद्धि होती है वह बात का उतना ही अर्थ लगाता है। लेकिन यथार्थ अपने स्थान पर रहता है। उसे किसी भी दशा में टाला नहीं जा सकता है।

24

“एक दिन अचानक ऐसी नारी से शरत बाबू की भेंट हो गई जिसने ‘चरित्रहीन’ पढ़कर उन्हें अपना गुरु और त्राता स्वीकार किया था। वह सब काशी आए हुए थे। एक दिन वहाँ के प्रवासी बंगालियों ने उनके सम्मान में सभा का आयोजन किया। माला-चंदन, धूप-धूनी किसी भी वस्तु की कमी नहीं रही। सच्चा आंतरिक स्वागत था। लौटते समय बहुत से लोगों ने उन्हें घेर लिया। उनमें दो नारियाँ भी थीं। दोनों विधवाएँ थीं। एक प्रौढ़ा थी, दूसरी युवती। अवसर पाकर वह युवती उनके पास आई। मधुर स्वर में बोली, “आपने मुझे बचाया है। आप गुरु हैं। मैं आपकी विशेष कृतज्ञ हूँ।” (पृष्ठ-101)

प्रसंग—शरत बाबू ने ‘चरित्रहीन’ नामक उपन्यास लिखा। उसे पढ़कर बहुत से लोग उत्तेजित हो उठे, वे उनके विरुद्ध आवाज बुलंद करने लगे। लेकिन कुछ व्यक्ति ऐसे थे जिन्होंने लेखक के मन की गहराई तक जाने का प्रयास किया। एक व्यक्ति तो उनकी बहुत प्रशंसा करने लगा। उसका कहना था कि जो साहित्यकार समाज की असलियत को इस रूप में सबके सामने खोल सकता है वह वास्तव में महान है। शरत ने लोगों को समझाया कि ‘चरित्रहीन’ एक ऐसी रचना है जिसमें नारी की सच्चाई को बताया गया है। लेकिन तब भी अनेक लोगों की समझ में उनकी बातें नहीं आईं। अध्यापकगण इस पुस्तक के भ्रष्ट कहते थे लेकिन संपूर्ण पुस्तक पढ़े बिना वे भी नहीं रह सके। लेखक ने निम्न पंक्तियों में यह दर्शाया है कि स्त्रियाँ शरत की रचनाओं को पढ़कर बहुत प्रसन्न थीं क्योंकि उन्होंने स्त्रियों की आत्मा को छूकर देखा है।

व्याख्या—शरत इस समय तक एक प्रतिभाशाली साहित्यकार के रूप में प्रसिद्ध हो चुके थे। स्त्रियाँ उनको सम्मान की दृष्टि से देखने लगी थीं क्योंकि उन्होंने स्त्रियों के विषय में काफी लिखा था। अतः एक दिन शरत जब कहीं जा रहे थे तो उनके सामने अचानक एक स्त्री आकर खड़ी हो गई। वह ‘चरित्रहीन’ पुस्तक पढ़ चुकी थी। उस पुस्तक को पढ़कर उसे पता चला था कि बंग समाज में स्त्रियों की क्या दशा है? और इस स्थिति को सुधारने के लिए क्या

नोट

उपाय किए जा सकते हैं? उसने शरत को अपने मन के विचार रखते हुए बताया कि मैंने मन ही मन आपको अपना गुरु और हितकारी व्यक्ति मान लिया है। वह स्त्री अन्य लोगों के साथ काशी आई हुई थी और वहीं पर उसकी भेंट शरत से हो गई थी। काशी में बहुत से प्रवासी बंगाली रहते थे। हजारों विधवाएँ भी काशी वास के लिए आ जाती थीं। सबने मिलकर शरत के सम्मान में एक सभा बुलाई। वहाँ माला, चंदन, धूप-धूनी आदि स्वागत की वस्तुएँ मँगा ली गईं। सारे बंगाली स्त्री-पुरुष उनका हृदय से सच्चा सम्मान करना चाहते थे। सम्मान के फलस्वरूप बंगाली स्त्रियों ने उनकी आरती उतारी। लोगों ने उनके गले में मालाएँ डालीं। इस सम्मान को पाने के पश्चात् शरत बाबू जब लौट रहे थे तो कुछ बंगाली पुरुषों ने उनको घेर लिया। उनमें दो स्त्रियाँ भी थीं। दोनों के पति मृत्यु को प्राप्त हो चुके थे। उनमें एक प्रौढ़ थी और दूसरी युवती। युवती स्त्री शरत के पास आई। उसने शरत को प्रणाम किया और फिर मीठी वाणी में बोली कि आपने मेरा उद्धार किया है, वरना इस गंदे समाज में रहकर मैं मर ही जाती। इसलिए मैं आपको अपना गुरु मानती हूँ। मैं आपके काम से इतनी गद्गद् हूँ कि कुछ कहा नहीं जा सकता। शरत बाबू उसका चेहरा देखते रह गए।

विशेष—शरत बाबू स्त्रियों के पक्षधर थे। इसी कारण उन्होंने ‘चरित्रहीन’ तथा अन्य उपन्यास लिखे। सभी कृतियों में उन्होंने विधवाओं, बहिष्कृत स्त्रियों, परित्यक्ताओं, वेश्याओं आदि के विषय में बहुत कुछ लिखा था। अतः शरत जब कभी स्त्रियों के मध्य आ जाते थे तो स्त्रियाँ उनका अभिनंदन करती थीं। वे चाहती थीं कि शरत बाबू इसी प्रकार स्त्रियों का मार्गदर्शन करते रहें। शरत का कथन था कि पुरुष के समान स्त्री भी समाज का एक अंग है। जिस पुरुष को उसने जन्म दिया है, जो पुरुष माँ, बहन, चाची, मौसी आदि के दर्जे से उसकी पूजा करता है वह स्त्री पतित कैसे हो सकती है? यही कारण था कि काशी में एक अवसर पर कुछ स्त्रियों ने उनका अभिनंदन किया था।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

8. शरत ने अपनी जान पर खेलकर बकरी को आग में जलने से बचाया।
9. शरतचंद्र ज्योतिष विद्या में अटूट विश्वास रखते थे।
10. शरत को पतंग उड़ाने एवं गिल्ली-डण्डा खेलने का बिल्कुल भी शौक नहीं था।
11. ‘आवारा मसीहा’ में राजू ऐसा पात्र है जिसने शरत बाबू का हर कदम पर साथ दिया।

25

“यही दुख कातरता उनके साहित्य में मुखर हुई और इसी कारण वह इतने लोकप्रिय हुए। उनके पाठक जान गए थे कि ‘श्रीकांत’ की आवारगी के बावजूद उन्हें भारी दुखों के बीच में से अपना रास्ता ढूँढना पड़ा है और यह भी कि अन्याय को देखकर उसका क्रोध उफन उठता है। जैसे उनके विचारों के अंतराल में, वैसे ही जीवन में भी पीड़ा की धारा प्रवाहित होती रही है।” (पृष्ठ-106)

प्रसंग—शरत एक साहित्यकार थे। साहित्यकार अपनी पुस्तकों में वही लिखता है जो कुछ वह देश, समाज और परिवार में देखता है। शरत ने अत्यधिक गरीबी देखी थी। वह जानते थे कि दुख क्या होता है? अतः जब वह किसी प्राणी को दुख में डूबा देख लेते तो मानवीय संवेदना से भर उठते थे। उस समय वह सोचते थे कि यदि मनुष्य ही मनुष्य के दुख दूर नहीं करेगा, तो फिर कौन करेगा? इसी भावना से उन्होंने अपने साहित्य में दूसरों के दुखों के विषय में लिखा है तथा उसे दूर करने के लिए कुछ उपाय भी सुझाए हैं। पर दुख कातरता के संबंध में उन्होंने लेखनी उठाकर लोगों को कुछ सोचने-समझने का अवसर दिया। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने शरत की ऐसी ही भावना के बारे में अपने विचार प्रकट किए हैं।

व्याख्या—शरत एक साहित्यकार होने की दृष्टि से अत्यधिक भावुक प्रवृत्ति के थे। दूसरे के दुख को देखकर उनको लगता था जैसे वह दुख उन्हीं का है। अतः वह उसे दूर करने के लिए तन-मन से जुट जाते थे। यदि उनके पास

नोट

पैसा होता था तो वह दुखी जन की सहायता पैसे से भी करने को तत्पर हो जाते थे। इस प्रकार दूसरे के दुख की बातें उनके साहित्य में भरी पड़ी हैं। जो साहित्यकार जन-साधारण की नाड़ी पहचान कर साहित्य का सृजन करता है वह बहुत जल्दी लोकप्रिय होता है। शरत इसी प्रकार के साहित्यिक व्यक्ति थे। इसीलिए बंगाल की जनता उनको अतिशीघ्र पहचान गई। दुखी लोगों के बीच एक विचार उत्पन्न हुआ कि कम से कम एक ऐसा व्यक्ति तो हमारे समाज में उठ खड़ा हुआ है जो दुखी और दरिद्र लोगों को पहचानता है। और जिसने समाज के आडंबर को दूर करने का बीड़ा उठाया है। शरत साहित्य को पढ़ने वाले पाठकों ने शरत द्वारा लिखित ‘श्रीकांत’ नामक उपन्यास भी पढ़ा था। उसमें शरत ने ‘श्रीकांत’ की आवारगी का वर्णन किया है। लेकिन अन्य समस्याओं का निराकरण करते हुए ‘श्रीकांत’ ने अनेक दुखों और संकटों के बीच से अपना मार्ग स्वयं खोजा है। इसके साथ ही समाज में होने वाले अन्याय के विरुद्ध भी उसने कदम उठाए हैं। कुछ लोगों के मतानुसार ‘श्रीकांत’ में शरत ने अपने जीवन चरित्र का वर्णन किया है। क्योंकि अन्याय को देखकर शरत बाबू को अत्यधिक क्रोध आता था और लोगों से वह खरी-खरी कहने लगते थे। मानो उन्होंने जिन विचारों को व्यक्त किया है वह उनके भीतर जीवन की पीड़ा रूपी नदी की धारा के समान बह रही हो। इस प्रकार लेखक ने शरत बाबू की मानवता के प्रति विचारों को एक नए ढंग से रखा है।

विशेष

1. शरत एक ऐसे व्यक्ति थे जो दूसरे को दुखी और पीड़ित देखकर स्वयं दुखी होने लगते थे। यही कारण है कि शरत ने दुखी मानवता के दुखों को दूर करने के लिए अपने साहित्य में नए ढंग के विचार व्यक्त किए हैं। साधारण लोग इस बात को मानने के लिए तत्पर नहीं थे कि एक साधारण-सा दिखने वाला व्यक्ति इतनी ऊँची और ढंग की बात लिख सकता है। वे सोचते थे कि शरत ने जो कुछ लिखा है वह उधार का ग्रहण किया हुआ है। लेकिन असल बात दूसरी है। शरत ने जो कुछ लिखा है वह लोगों के वास्तविक दुख को देखकर लिखा है।
2. प्रस्तुत पंक्तियों में ‘श्रीकांत’ उपन्यास के संदर्भ में लेखक ने शरत की मनःस्थिति और विचारधारा का निष्पक्ष चित्रण किया है।
3. गद्यांश की भाषा सरल, सुबोध और पाठकों को कुछ सोचने के लिए एक मार्ग दिखाती है।

26

“अत्यंत लोकप्रियता के कारण जन साधारण, विशेषकर विद्यार्थी लोग उनकी प्रत्येक गतिविधि पर ध्यान रखते थे। और उसका अर्थ निकालने की चेष्टा करते थे। जब वह बनारस गए तो अनेक विद्यार्थी उनसे मिलने के लिए आए और अनेक विषयों पर उनके साथ विचार-विनिमय किया। एक दिन सबको साथ लेकर विश्वनाथ मंदिर भी गए। उस समय वहाँ आरती हो रही थी। एक कोने में वह जाकर खड़े हो गए और आरती के पश्चात् बिना दर्शन किए चुपचाप चले आए।” (पृष्ठ-109)

प्रसंग—शरत बाबू निरीश्वरवादी नहीं थे। लेकिन वह सच्ची श्रद्धा के कायल थे। अन्य लोगों को भगवान के प्रति अपार श्रद्धा रखते देखकर वह प्रसन्न होते थे लेकिन वह अपने भले के लिए ईश्वर की पूजा-अर्चना कभी नहीं करना चाहते थे। उनका कहना था कि ईश्वर तो घट-घट का वासी है। वह सबकुछ जानता है। फिर मनुष्य धन-दौलत के लिए उसे बीच में क्यों लाता है। मनुष्य को अपने कर्तव्यों का पालन करते रहना चाहिए। ईश्वर जो फल देना चाहता है, वह मनुष्य को अवश्य देगा। यदि हम दिन भर पाप कर्म करते हैं और संध्या को ईश्वर से कहते हैं कि वह हमें क्षमा कर दे, तो क्या ऐसे व्यक्ति दुष्कर्मों को ईश्वर के खाते में डाल देगा। शरत बाबू की दार्शनिक बातें बड़ी ठोस होती थीं। किसी भी बुद्धिमान व्यक्ति में इतना साहस नहीं होता था कि वह उनको काट सके। लेकिन कभी-कभी बुद्धिमान व्यक्ति भी धर्मपरायण व्यक्तियों और समाज के भय से सच्चे तर्क को छोड़कर कुतर्क पर उतर आता था। तब शरत बाबू शांत हो जाते थे क्योंकि वह जानते थे कि यह व्यक्ति बाहर से तो पढ़ा लिखा है परंतु उसके अंतर से रूढ़िवादी विचार नहीं निकल सके हैं।

नोट

व्याख्या—लेखक ने शरत की लोकप्रियता और ईश्वर भक्ति का सच्चा चित्रण करते हुए कहा है कि शरत अत्यंत लोकप्रिय हो चुके थे इसलिए साधारण व्यक्ति और कुछ विद्यार्थी उनके प्रत्येक कार्य को बड़े ध्यान से देखते रहते थे। वे उनके कार्यों और बातों का कुछ न कुछ अर्थ निकाल कर किसी विशेष उद्देश्य की ओर जाना चाहते थे। वे सोचते कि इतना लोकप्रिय व्यक्ति जो कुछ करता है वह काफी सोचने और समझने के पश्चात ही करता है। इसीलिए ऐसे व्यक्ति के कार्यों का गंभीरतापूर्वक अध्ययन करने के पश्चात् कोई न कोई शिक्षा अवश्य ग्रहण करनी चाहिए। एक बार शरत बाबू वाराणसी पहुँचे। विद्यार्थियों को उनके आगमन की सूचना मिली तो वह उनसे मिलने के लिए आए। वे उनके साथ अनेक प्रकार के विषयों पर विचारों का आदान-प्रदान करने लगे। एक दिन शरत उन विद्यार्थियों के साथ विश्वनाथ मंदिर गए। विद्यार्थी बड़े प्रसन्न हुए कि शरत जैसे निरीश्वरवादी उनके साथ विश्वनाथ बाबा के दर्शन को आ गए हैं। जब विद्यार्थियों के साथ शरत मंदिर में पहुँचे तो वहाँ भगवान विश्वनाथ के विग्रह की आरती उतारी जा रही थी। आरती का एक अर्थ विनती करना भी है। सब लोग आरती को शांत मन से देख रहे थे। कुछ लोग हाथ जोड़े हुए मन ही मन ईश्वर का स्मरण कर रहे थे। शरत बाबू उन सब लोगों से हट एक कोने में जाकर चुपचाप खड़े हो गए। थोड़ी देर बाद आरती का कार्य समाप्त हुआ। शरत बिना विश्वनाथ का दर्शन किए शांत मन से बाहर चले आए। एक विद्यार्थी ने उनसे पूछा कि आप धार्मिक व्यक्ति नहीं हैं क्योंकि आपके उपन्यासों को पढ़कर ऐसा पता चलता है। लेकिन फिर भी आप मंदिर में गए इस पर शरत ने उत्तर दिया कि मैं भक्त को प्रेम करता हूँ इसलिए मैं मंदिर में चला गया। इस प्रकार शरत ने उस विद्यार्थी को संतुष्ट किया। उनकी बातों से विद्यार्थियों को ज्ञात हो गया कि शरत अपनी जगह सही हैं।

विशेष—प्रस्तुत पंक्तियों में लेखक ने यह दर्शाया है कि शरत प्रत्येक कार्य की तह तक जाना चाहते थे। उनके तर्क बड़े ठोस होते थे। वह निरीश्वरवादी होते हुए भी ईश्वरवादी थे। वह नास्तिक होते हुए भी आस्तिक थे। उनकी दृष्टि में सच्चाई, अच्छे कर्म, अपने कर्तव्यों का पालन, मानवीयता, निःस्वार्थ विचार, पर सेवा के लिए समर्पण आदि ही ईश्वर की सच्ची सेवा थी। वे इन बातों पर चलते भी थे। इसी दृष्टि को ध्यान में रखकर उन्होंने विद्यार्थियों की शंका का समाधान किया था। जो व्यक्ति एक अनपढ़ ग्रामीण की सच्ची भक्ति देखकर आँखों में आंसू भर लाता हो, क्या वह व्यक्ति कभी निरीश्वरवादी हो सकता है? उनका कहना था कि दरिद्र नारायण का सत्कार और उसकी सच्चे मन से सेवा ही ईश्वर भक्ति है। इसी कारण वह मानवीय संवेदना के प्रति एक प्रकार से न्यूँछावर थे। ऐसी संवेदना का आनंद शरत जैसा व्यक्ति ही ले सकता है। शरत पाप में भी पुण्य ढूँढ़ लेते थे।



टास्क शरत की कुण्डली देखकर पंडित जी ने क्या बात बताई?

27

“यही स्थिति ज्योतिष के संबंध में थी। विश्वास न होने पर भी वह उसमें रुचि लेते थे। बनारस में एक पंडित ने उनकी कुंडली देखकर उनके अतीत जीवन की सारी घटनाएँ विस्तार से बता दी थीं। कहा था, “यह किसी महायोगी या किसी राजतुल्य व्यक्ति की कुंडली है। धर्म-स्थान में बृहस्पति का इतना पूर्ण स्थान मैंने कभी नहीं देखा।”

(पृष्ठ-109)

प्रसंग—शरत बाबू के मन में भगवान के प्रति वैसी श्रद्धा नहीं थी जैसी भक्त के प्रति थी। वह भक्त को प्यार करते थे। किसी अनपढ़ ग्रामीण की सच्ची भक्ति को देखकर तो वह गदगद हो उठते थे। उनका कहना था कि भगवान वास्तव में गरीब के पास है। वह हाथ जोड़कर ईश्वर से यही प्रार्थना करते थे कि हे ईश्वर, उनके द्वारा किसी का अनिष्ट न हो। उनसे किसी को कष्ट न पहुँचे। इसीलिए वह सदैव दरिद्रों और दुखियों के विषय में लिखते रहे। उनकी पत्नी धार्मिक प्रवृत्ति की थी। वह ईश्वर में बड़ी निष्ठा रखती थी। उनका कुछ समय व्रत-उपवास आदि में व्यतीत

नोट

होता था। यह सबकुछ देखकर भी शरत बाबू ने उनके कार्यों में कभी बाधा नहीं डाली। वह सोचते थे कि जो व्यक्ति जैसा करता है। वह कुछ न कुछ सोचकर ही वैसा करता है, अतएव उसके कार्यों में बाधा डालने का हमें कोई अधिकार नहीं है। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने धर्म-कर्म और विश्वास से जुड़े एक प्रश्न पर प्रकाश डाला है।

व्याख्या—शरत बाबू किसी भी धार्मिक व्यक्ति से ऐसा कभी नहीं कहते थे कि वह इस आडंबर को छोड़ दे। वह छोटे-बड़े सभी को सम्मान की दृष्टि से देखते थे। वह ज्योतिष विद्या पर विश्वास नहीं करते थे। लेकिन इसके बावजूद वह ज्योतिष में रुचि लेते थे। जिस समय वह बनारस में थे तो एक विद्वान ब्राह्मण ने उनकी कुंडली देखकर उनके विषय में बहुत सी बातें बताई थीं। यद्यपि उन्होंने पंडित की बातों पर विश्वास नहीं किया था परंतु उन्होंने उसकी बातें बड़े ध्यान से सुनी थीं। पंडित ने कहा कि यह जन्मकुंडली या तो किसी बहुत बड़े योगी पुरुष की है या किसी राजसी व्यक्ति की है क्योंकि कुंडली में जो अक्षरों का विधान रखा गया है वह बेजोड़ है। इसमें धर्म स्थान में बृहस्पति का पूर्ण स्थान है। इस प्रकार का स्थान बहुत कम लोगों की कुंडली में पाया जाता है। इस प्रकार ज्योतिषी ने शरत बाबू के कार्यों को न देखकर भी अनेक बातें ऐसी बताई थीं जो बाद में सच निकलीं। यद्यपि शरत ने अंत तक उन पर विश्वास नहीं किया क्योंकि उनका कर्म उनके आड़े आ जाता था। वह सोचते थे कि जब कर्म ही जीवन है तो अन्य बातें बिना कर्म किए अपना प्रभाव कैसे छोड़ सकती हैं? वह कर्म के सिद्धांत में यहाँ तक विश्वास करते थे कि आँखों के सामने अचानक हुए दैवी परिवर्तनों में भी उनकी आस्था कभी विश्वास के पंखों पर नहीं बैठ पाई। इस दृष्टि से शरत वास्तव में महायोगी थे।

विशेष

1. शरत के अंतःकरण को समझने में उपर्युक्त गद्यांश हमारी बहुत अधिक सहायता करता है। समाज में रहने के कारण शरत जो कुछ देखते थे उसमें कभी बाधा उपस्थित नहीं करते थे परंतु उनका विश्वास, ईश्वर पूजा, नियम व्रत, उपासना, ज्योतिष, फलित आदि में बिल्कुल नहीं था।
2. गद्यांश की भाषा सरलता से समझ में आने लायक है। संस्कृत के शब्दों का प्रयोग भाषा के प्रवाह में बाधक नहीं है। शरत की विद्वत्ता के पीछे जीवन का कटु सत्य छिपा हुआ था, जिसे लेखक ने उनके कार्यों की तुला पर रखकर तोला है।

28

राजनीतिक क्षितिज पर तेजी के साथ नई परिस्थितियाँ पैदा हो रही थीं। ब्रिटिश क्राउन के प्रति वफादारी की प्रतिज्ञा लेने वाली कांग्रेस ने केंचुली उतार फेंकी थी क्योंकि प्रथम महायुद्ध के समाप्त हो जाने पर भारत के हार्दिक सहयोग के बदले में उसी क्राउन ने रौलेट एक्ट प्रदान किया था। दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद के विरुद्ध संघर्ष करने वाले महात्मा गाँधी ने घोषणा की, “यदि रौलेट कमीशन की सिफारिश को बिल का रूप दिया गया तो मैं सत्याग्रह आरंभ कर दूँगा।” (पृष्ठ-110)

प्रसंग—शरत बाबू एक उपन्यासकार के रूप में विख्यात हो चुके थे। इतना ही नहीं, उनके उपन्यासों को पढ़कर लोग उनके दर्शन करने तथा उनसे विचार-विनिमय के लिए भी उतावले रहते थे। लेकिन शरत सदैव अपने को साधारण व्यक्ति ही कहते रहे। जिस समय चारों ओर उनके उपन्यासों की धूम मची हुई थी, उसी समय देश में स्वाधीनता की लहर भी तीव्रगति से दौड़ रही थी। शरत के जीवन में भी क्रांति की एक लहर दौड़ी। वह संपूर्ण देश के साथ अपने को भी समर्पित कर देना चाहते थे। वह ठोस राजनीति में विश्वास करते थे और चाहते थे कि लोग ऐसे कार्य करें जिससे अंग्रेजों को हमारा देश छोड़ने के लिए विवश होना पड़े। वह क्रांतिकारियों के कार्यों में बहुत विश्वास करते थे। इसी कारण उन्होंने सदैव गरम दल का समर्थन किया। प्रस्तुत गद्यांश में लेखक ने देश में व्याप्त स्वतंत्रता आंदोलन पर प्रकाश डाला है।

व्याख्या—भारत में राजनीति के आकाश पर बड़ी तेजी के साथ नई-नई घटनाएँ उत्पन्न हो रही थीं। चारों ओर क्रांति

नोट

की लहर दौड़ चुकी थी। लोग आजादी का महत्त्व समझने लगे थे। अंग्रेजों ने भारतीयों को विश्वास दिलाया था कि वे उनके साथ ऐसा कोई व्यवहार नहीं करेंगे जिससे लोगों की आस्था को चोट पहुँचे। परंतु धूर्त और मक्कार अंग्रेजों ने अपने दिए हुए वचनों का पालन नहीं किया। उस समय देश में स्वतंत्रता के आंदोलन की बागडोर कांग्रेस नामक संस्था के हाथों में थी। अतः अंग्रेजों के आश्वासन देने के कारण कांग्रेस ने ब्रिटिश-ताज के प्रति अपनी संपूर्ण भक्ति दर्शाई थी। अर्थात् कांग्रेस से अंग्रेजों ने कहा था, यदि वह प्रथम विश्व युद्ध में हमारी सहायता जन बल से करेगी तो हम उसके बदले में भारतीयों के राजनीतिक कार्यों के प्रति सदैव और सहयोगी हो जायेंगे परंतु धूर्त अंग्रेजों ने काम निकल जाने के बाद अपना वचन नहीं निभाया था। अतः कांग्रेस रूपी सर्प ने अपने शरीर से अंग्रेजों को हानि न पहुँचाने वाली केंचुली उतार कर फेंक दी थी। इस समय महात्मा गाँधी दक्षिण अफ्रीका में अंग्रेजों के विरुद्ध न्याय पाने के लिए संघर्षशील थे। वहाँ अंग्रेजों ने गोरे-काले का भेदभाव बना रखा था। गाँधी जी रंगभेद की इस घृणित नीति को समाप्त करने के लिए आंदोलन कर रहे थे। जब उन्होंने सुना कि अंग्रेजों ने अपना वायदा नहीं निभाया है तो वे खुलकर उनके विरुद्ध संघर्ष करने के लिए सामने आ गए। अंग्रेजों ने भारतीयों के सहयोग के बदले रौलेट एक्ट दिया। अतः गाँधीजी ने घोषणा की, रौलेट कमीशन की सिफारिशों को कानून का रूप न दिया जाए। अगर ऐसा किया तो मैं सत्याग्रह करने के लिए विवश हो जाऊँगा। सत्याग्रह गाँधी जी का मूलमंत्र था।

विशेष

1. लेखक ने बड़ी कुशलता से शरत कालीन भारत के स्वाधीनता आंदोलन के वातावरण का चित्रण किया है। उस समय देश में स्वाधीनता की लहर बड़ी तीव्रगति से दौड़ रही थी। इस लहर में शरत भी सम्मिलित हुए बिना न रह सके। लेखक ने इस स्थिति का वर्णन सामान्य रूप में किया है। समूचा देश जब एक नई करवट ले रहा था तो शरत के जीवन में भी क्रांति के बीज का फूटना स्वाभाविक था क्योंकि शरत एक स्वाभिमान व्यक्ति थे। स्वाभिमान दासता की मधुर रोटियाँ और पकवान कभी स्वीकार नहीं करता।
2. प्रस्तुत पंक्तियाँ स्वाधीनता आंदोलन की गरम हवा को महसूस कराती हैं। शरत के मन में क्रांति के बीजों का उदय होना इस बात का सूचक है कि वह स्वतंत्रता का महत्त्व समझते थे और क्रांतिकारियों को अपना पूर्ण सहयोग देना चाहते थे।
3. गद्यांश में संस्कृत के शब्दों के साथ-साथ उर्दू और फारसी के शब्दों का प्रयोग भी किया गया है, जैसे 'वफादारी'।

3.2 सारांश (Summary)

- शरत बाबू सांसारिक सुंदरता को भली-भाँति आत्मसात करना जानते थे। परंतु उस सुंदरता को पूर्णरूपेण रचना के रूप में व्यक्त करने से घबराते थे। शायद वह किसी ऐसी बात को कहना चाहते थे जो आदर्शपूर्ण और विचित्र हो।
- नई-नई शैतानियों के कारण शरत को दंड भी मिलता था परंतु वे शैतानी किए बिना रह ही नहीं पाते। ज्यों ही उन्हें अवसर मिलता था। वह कुछ न कुछ नया कर ही डालते थे।
- शरत एकान्तप्रिय व्यक्ति थे। बचपन में वह एकांत में जाकर बैठ जाते थे और घंटों न जाने क्या-क्या सोचते रहते थे। उनके बैठने के स्थान खंडहर, शमशान या फिर गंगा के किनारे के रेतीले स्थान होते थे।
- शरत का एक परम मित्र था, जिसका नाम राजू था। दोनों स्वच्छंद प्रकृति के थे। वे खेलने के लिए घर से निकल जाते और घंटों किसी मैदान में खेलते रहते थे। वह शरत की प्रेरणा था क्योंकि शरत को अच्छे कार्यों को करने की प्रेरणा वही दिया करता था।
- शरत के समय में लोग बंगाल के खंजरपुर गाँव में लाला गुलजारी लाल से कर्ज लेने के लिए पहुँचा करते थे।

गुलजारी उधार के धन पर काफी सूद लिया करते थे। शरत को भी उधार लेकर ही परीक्षा का शुल्क भरना पड़ता था।

- शरत आवारा प्रकृति का व्यक्ति था इसलिए उसे विवाह करके गृहस्थी जोड़ने में बिल्कुल रुचि नहीं थी। गृहस्थी को वह एक बंधन समझता था। इसी कारण उसने कभी सोचा ही नहीं कि किसी स्त्री से विवाह किया जाए।
- शरत वास्तव में आत्मस्वाभिमानी तरुण था। कोई उसका अपमान करे और वह उसे सहन कर ले, ऐसी बात उसकी आत्मा कभी स्वीकार नहीं करती थी। इस कारण वह छोटे से अपमान को देखकर भी स्थान को तुरंत छोड़ देता था।
- शरत को अचानक रंगून में रेलवे में एक नौकरी मिल गई। इससे उसको लगा कि अब दुख के दिन समाप्त हो गए हैं। परंतु मनुष्य के कर्म उसके साथ-साथ चलते हैं। शरत का भाग्य ने साथ नहीं दिया। वह बर्मी भाषा की परीक्षा में असफल रहा। इस कारण उसका वकील बनने का स्वप्न टूट गया।
- दरिद्रों, दुखियों और स्त्रियों की सहायता करने में जितनी प्रसन्नता होती है उतनी प्रशंसा भगवान की पूजा करने में भी नहीं होती। इस दृष्टि से वह जीवित मानव की सेवा करना ही ईश्वर की सेवा मानता था।
- मोक्षदा अर्थात् हिरण्यमयी के आ जाने के बाद शरत के हृदय के प्रेम-प्रसून खिल उठे। अभी तक उसका जीवन बड़ा अव्यवस्थित रहता था। लेकिन जब सच्चे विवाह को उसने स्वीकार कर लिया तो एक बार फिर उसके जीवन में बहार आ गई।
- उसके गले में सैकड़ों व्यक्तियों ने फूलों की मालाएँ डालीं। उसका स्वागत किया। इस प्रकार उसके गले में कम से कम सेर डेढ़ सेर का वजन हो गया। मालाओं के भार के कारण उसको सीधे खड़े होने में बड़ी परेशानी हो रही थी।
- शरत अपना परिचय देने में सदा ही झिझकता था। वह वस्त्रों और चाल-ढाल से ऐसा मालूम पड़ता था मानो वह बिल्कुल देहाती है। फिर भी मित्रों के साथ प्रेम व्यवहार करना और किसी भी गोष्ठी में शामिल होने में उसे विशेष आनंद आता था।
- जिस समय शरत ने कलकत्ता छोड़कर रंगून का मार्ग पकड़ा था, उस समय वह असहाय था। उसके पास पैसे का अभाव था। लेकिन तेरह वर्ष बाद जब वह कलकत्ता लौटा तो, वह एक प्रसिद्ध कथाकार हो चुका था।
- शरत एक साहित्यकार थे। साहित्यकार अपनी पुस्तकों में वही लिखता है जो कुछ वह देश, समाज और परिवार में देखता है। शरत ने अत्यधिक गरीबी देखी थी। वह जानते थे कि दुख क्या होता है?
- शरत बाबू निरीश्वरवादी नहीं थे। लेकिन वह सच्ची श्रद्धा के कायल थे। अन्य लोगों को भगवान के प्रति अपार श्रद्धा रखते देखकर वह प्रसन्न होते थे लेकिन वह अपने भले के लिए ईश्वर की पूजा-अर्जना कभी नहीं करना चाहते थे।
- भारत में राजनीति के आकाश पर बड़ी तेजी के साथ नई-नई घटनाएँ उत्पन्न हो रही थीं। चारों ओर क्रांति की लहर दौड़ चुकी थी। लोग आजादी का महत्त्व समझने लगे थे।
- शरत के मन में क्रांति के बीजों का उदय होना इस बात का सूचक है कि वह स्वतंत्रता का महत्त्व समझते थे और क्रांतिकारियों को अपना पूर्ण सहयोग देना चाहते थे।

3.3 शब्दकोश (Keywords)

- | | |
|---------------------|-------------------|
| 1. अनिवार्य — जरूरी | 2. साक्षी — गवाह |
| 3. आजीवन — जीवनभर | 4. कामना — इच्छा |
| 5. निपुण — कुशल | 6. मार्ग — रास्ता |
| 7. श्याम — काला | 8. वर्ण — रंग |

नोट

- | | |
|----------------------|----------------------|
| 9. माहिर – कुशल | 10. विलक्षण – अद्भुत |
| 11. लालायित – उत्सुक | 12. प्रेरणा – आदर्श। |

3.4 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. लेखक ने शरतचन्द्र के मन की गति का वर्णन किस प्रकार किया है?
2. शरत के प्रकृति सौंदर्य-प्रेमी एवं एकान्त-प्रिय होने का किन बातों से पता चलता है?
3. ईश्वर ने शरत को कैसा व्यक्तित्व और रंग-रूप प्रदान किया था? वर्णन कीजिए।
4. बंग-समाज में व्याप्त अंधविश्वास और पिछड़ेपन का प्रभाकर जी ने कैसे चित्रण किया है?
5. अपने मामा के घर में शरतचन्द्र को किन दुखों एवं कष्टों का सामना करना पड़ा?
6. शरत ने धोबी की बकरी को किस प्रकार बचाया?
7. 'चरित्रहीन' उपन्यास के माध्यम से शरत ने समाज की किन समस्याओं को उजागर किया है?
8. उदाहरण देकर समझाइए कि किस प्रकार शरत 'नास्तिक होते हुए भी आस्तिक थे'।

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

- | | | | |
|----------|-----------|-----------|---------|
| 1. ज्ञान | 2. भण्डार | 3. मित्र | 4. सूद |
| 5. (क) | 6. (ख) | 7. (ग) | 8. सत्य |
| 9. असत्य | 10. असत्य | 11. सत्य। | |

3.5 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)



पुस्तकें आवारा मसीहा-विष्णु प्रभाकर, राजकमल एंड संस, दिल्ली।

नोट

इकाई-4: ‘आवारा मसीहा’ : प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

- 4.1 दिशाहारा व्यक्तित्व का धनी : शरतचन्द्र
- 4.2 स्वच्छंदता और साहस का प्रेरक : राजू
- 4.3 मोक्षदा का चरित्र-चित्रण
- 4.4 ‘आवारा मसीहा’ : क्रान्तिकारी जीवन का अग्रदूत
- 4.5 सारांश (Summary)
- 4.6 शब्दकोश (Keywords)
- 4.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
- 4.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- ‘आवारा मसीहा’ के पात्रों के चरित्र को समझने में;
- शरतचन्द्र के निजी जीवन के खास पलों को जानने में;
- एक ‘क्रान्तिकारी’ के रूप में शरतचन्द्र की भूमिका की व्याख्या करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

प्रभाकर जी ने ‘आवारा मसीहा’ नामक कृति में शरत बाबू के चरित्र के चारों ओर अन्य चरित्रों का चित्रण किया है। इस दृष्टि से शरतचन्द्र इस जीवनी का मुख्य पात्र है। इस रचना में लेखक ने शरत बाबू के महान् चरित्र का उद्घाटन बड़े प्राकृतिक रूप में किया है। उन्होंने जीवनी में विशेष व्यक्तित्व को उभारने के फलस्वरूप प्रमुख तत्वों का ही समावेश नहीं किया है, वरन् जीवनी के तत्वों से संबंधित सामाजिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक तत्वों के द्वारा भी व्यक्तित्व में निखार लाने का प्रयास किया है। वह इस बात को भी नहीं भूलें हैं कि मानव का जीवन कितना संवेदनशील, सामाजिक, सक्रिय और गतिशील है और उसे बराबर गतिशील बनाए रखने के लिए क्या-क्या क्रियाएँ की जानी चाहिए। असल में जीवनी साहित्य को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए लेखक सभी आवश्यक तत्वों और तथ्यों का सहारा लेता है।

शरतकालीन चंद्रमा के समान शरतचन्द्र

मनुष्य एक ऐसा प्राणी है जिसे समाज में रहकर पग-पग पर अनेकानेक बाधाओं और विरोधों का सामना करना पड़ता है। इसके बावजूद उसे जीवित रहना पड़ता है क्योंकि उसे प्रकृति ने जीवित रहने के लिए ही बनाया है। परंपराओं, प्रथाओं और रीति-नीति की दुनिया में वह अपने आपको ढालता है और परिस्थितियों पर विजय प्राप्त करने का प्रयास करता है। इस प्रकार लक्ष्य होता है, अपने अस्तित्व और आदर्शों को बनाए रखना। इसी कारण वह समुद्र की गहराई से मोती खोजता है और सामाजिक प्रतिबंधों से तादम्य स्थापित करता है। उसके आचरण आदर्श और प्रतिदर्श बनते हैं। उसकी क्रियाएँ और उपलब्धियाँ अन्य व्यक्तियों के लिए अनुकरणीय हो जाती हैं। वह आत्मा को समझने के लिए सत्यम्, शिवम् और सुंदरम् को समझने का प्रयास करता है।

यदि हम 'आवारा मसीहा' नामक जीवनी के नायक शरत बाबू की इच्छाओं, जिजिविषाओं आदि पर विचार करें तो हमें पता चलता है कि शरत बाबू एक ऐसे व्यक्ति थे जो प्रकृति से जुड़े हुए थे और जिनको आरंभ से ही प्रकृति ने साहित्य सृजन के लिए बनाया था। उनके भीतर असीम करुणा, दया और सांसारिक माया का एक विशाल साम्राज्य बसा हुआ था जिससे प्रेरित होकर वह साहित्य सृजन करते रहते थे। यद्यपि बंग समाज में बंधने, उनके पाँवों में बेड़ी जकड़ने के लिए आगे बढ़ते रहते थे तथापि वह उनको तोड़कर स्वच्छंदता के साथ आगे बढ़ने और कुछ करने का प्रयास करते रहते थे। ऐसा कहा जाता है कि तत्कालीन समाज की रूढ़ियाँ उनको विवश करती रहती थीं कि वे उच्छृंखल और चरित्रहीन बने रहें। इस दृष्टि से शरत बाबू का व्यक्तित्व किसी एक दिशा की ओर बहने वाला नहीं था, वरन वह अनेक दिशाओं की ओर चलता रहता था। इन परिस्थितियों में लेखक ने यथार्थता और सत्यता को बनाए रखने के लिए एक ओर उनको लुच्चा और लफंगा कहा है तो दूसरी ओर उनमें देवत्व के गुणों का भी बखान किया है। इस संबंध में लेखक ने शरत बाबू को उच्चकोटि का साहित्यकर्मी और रवींद्रनाथ ठाकुर के समान बंगाली साहित्यकार स्वीकार किया है। शरत बाबू के व्यक्तित्व की यह दुरंगी दशा बचपन से ही दिखाई देती है। एक निर्धन पिता का पुत्र शरत, अर्थ यह कि ऐसे पिता का पुत्र जो यायावर वृत्ति का था और जो ससुराल में रहकर अपना भरण पोषण कर रहा था, कैसे किसी बंधन में बँध कर रह सकता था? सचमुच शरत बाबू को सामाजिक बंधनों से घृणा थी। इसी कारण उनका चरित्र सामाजिक जटिलताओं के बीच उभरकर आता है। जो बालक बचपन में ही समाज के थपेड़े खाकर निरंकुश प्रवृत्ति का हो गया था, वह बड़ा होकर समाज के नियमों और मर्यादाओं का कैसे आदर करता? इसी बात को ध्यान में रखकर शरत बाबू के संबंध में हमें ऐसी विचारधारा के दर्शन होते हैं जो दुधारू है। यहाँ हम शरत बाबू के चरित्र से संबंधित गुणावगुणों की व्याख्या कुछ विस्तार से करेंगे—

1. नटखट, स्वतंत्र किंतु दयालु स्वभाव का व्यक्ति—शरत बचपन से ही नटखट स्वभाव का बालक था। उसने साधारण परिवार के बालकों के समान साधारण पाठशाला में विद्या आरंभ की। नटखट प्रकृति के बालकों में जिज्ञासा की प्रवृत्ति अधिक होती है और इसी कारण उनकी बुद्धि तीव्र होती है। वह जो कुछ शैतानियाँ करता है उनसे उसकी शारीरिक और मानसिक शक्ति परिपक्व होती रहती है। शरत को पढ़ते समय तरह-तरह की शरारतें सुझाई देती रहती हैं। वह अपने नाना जी तथा परिवार के अन्य लोगों से भी प्रायः झूठ बोल दिया करता था। इसके फलस्वरूप उसको दंड भी मिलता था और कभी-कभी तो उसे असहनीय शारीरिक दंड भी भुगतना पड़ता था। परंतु इतने पर भी वह शरारत नहीं छोड़ता था और पुनः अपने संगी-साथियों के साथ तरह-तरह के क्रिया-कलापों में डूब जाता था। उसे पशु-पक्षी पालने का भी शौक था। जब कभी उसके पालतू पक्षी को कोई बीमारी हो जाती थी तो वह बहुत दुखी होता था। इन सब कार्यों की इजाजत उसे घरवालों से नहीं मिलती थी इसलिए वह इन कार्यों को गुप्त रूप से करता था। उसके नाना जी नहीं चाहते थे कि शरत अपना समय खेलकूद में व्यतीत करे। वह उसकी पढ़ाई-लिखाई में विश्वास करते थे। उनका कहना था, “जो बालक दिनभर नटखटी करने में अपना समय बिताता है वह निकम्मा होता है। इसलिए बच्चों को अपना जीवन बनाने के लिए अच्छे-अच्छे कार्य करने चाहिए।” कभी-कभी वह शरारती बालकों के साथ पकड़ा जाता तो पास के जंगल में छिप जाता था। तब उसे ढूँढ़ना मुश्किल हो जाता था।

नोट



नोट्स

शरत पतंग उड़ाने और गुल्ली-डंडा खेलने का शौकीन था। जब कभी उसे इस कार्य के लिए मना किया जाता था तो वह शमशान भूमि या खंडहर में छिप जाता था। वह बचपन से बड़ा साहसी था। अतः उसे जरा भी डर नहीं लगता था।

इन सब कार्यों के बावजूद वह बड़ा दयालु बालक था। वह दूसरे के दुख को देखकर बड़ी जल्दी पिघल जाता था। उसने खेल-खेल में कभी किसी को नहीं सताया और न किसी को हानि पहुँचाई। वह अपने संगी साथियों को संकट में पड़ा देखकर उनके कष्टों का निवारण करने के लिए कटिबद्ध हो जाता था। इस दृष्टि से उसे बुरा व्यक्ति कैसे कहा जा सकता है? जबकि समाज में लोग उसे अच्छा व्यक्ति नहीं समझते थे। प्रभाकर जी के शब्दों में, “वह खिलाड़ी था, विद्रोही भी उसे कह सकते हैं, पर बदमाश वह किसी दृष्टि से नहीं था। पिता की तरह उसमें भी प्रचुर मात्रा में सौंदर्य-बोध था। पढ़ने के कमरे को खूब सजाकर रखता। चौकी और उस पर एक सुंदर सी तिपाई, एक बंद डेस्क और उसमें पुस्तकें, कापियाँ, कलम-दवात इत्यादि-इत्यादि।”

“स्वभाव से वह अपरिग्रही था। दिनभर में वह जितनी गोलियाँ और लट्टू जीतता, संध्या को वह उन सबको छोटे बच्चों में बाँट देता। देने में उसे मानो आनंद आता था। नींद और आहार पर भी उसे अधिकार था। बचपन से ही वह स्वल्पाहारी था।”

उस दिन अवकाश प्राप्त अध्यापक अघोरनाथ अधिकारी स्नान के लिए गंगाघाट की ओर जा रहे थे। कपड़े उठाए पीछे-पीछे चल रहा था शरत। एक टूटे हुए घर के भीतर से एक स्त्री के धीरे-धीरे रोने का करुण स्वर सुनाई दिया। अधिकारी महोदय ठिठक गए। बोले, “यह कौन रोता है? क्या हुआ इसे?”

शरत ने उत्तर दिया, “मास्टर मोशाई, इस नारी का स्वामी अंधा था। लोगों के घरों में काम-काज करके यह उसको खिलाती थी। कल रात वह अंधा स्वामी मर गया। यह बहुत दुखी है। दुखी लोग बड़े आदमियों की तरह दिखाने के लिए जोर-जोर से नहीं रोते। उनका रोना दुख से विदीर्ण प्राणों का क्रंदन होता है। मास्टर मुशाई, यह सचमुच का रोना है।”

“सूक्ष्म पर्यवेक्षण की प्रवृत्ति उसमें बचपन से ही थी। जो कुछ भी देखता उसकी गहराई में जाने का प्रयत्न करता और यही अभिज्ञता उसकी प्रेरणा बन जाती। गाँव में एक ब्राह्मण की बालविधवा बेटी थी, नाम था उसका नीरू। बत्तीस साल की उमर तक कोई कलंक उसके चरित्र को छू भी नहीं पाया था। सुशीला, परोपकारिणी, धर्मशीला और कर्मठ होने के नाते वह प्रसिद्ध थी। वह उसे ‘दीदी’ कहकर पुकारता था। दीदी भी उससे बहुत प्यार करती थी। दोनों एक ही परदुःखकातर जाति के व्यक्ति जो थे।”

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. शरतचंद्र को प्रकृति ने आरंभ से ही सृजन के लिए बनाया था।
2. शरत खिलाड़ी था, विद्रोही भी उसे कह सकते हैं, पर किसी दृष्टि से नहीं था।
3. शरत में बचपन से ही सूक्ष्म की प्रवृत्ति थी।
4. शरत बाबू द्वारा लिखित ‘चरित्रहीन’ की भी जलकर राख हो गई थी।

2. भावुक तथा संवेदनशील व्यक्ति—शरत एक भावुक और संवेदनशील व्यक्ति था। वह दूसरों के दुख को देखकर द्रवित हो जाता था। चूँकि वह साहित्यकार था इसलिए उसके पास किसी भी बात को समझने के लिए गहरी दृष्टि थी। वह चाहता था कि लोग दुखी न रहें। वह सोचता था कि लोग दुखी क्यों रहते हैं? क्या इस संसार में दुख नाम की कोई चीज है? लेखक ने शरत का जीवन चरित्र लिखते समय इस बात को समझाया है कि शरत सचमुच

नोट

एक मसीहा था—‘आवारा मसीहा।’ उसका हृदय बचपन से ही किसी को दुखी देखकर रो उठता था। वह जानता था कि दरिद्रता ही दुख का मुख्य कारण है। एक बार गाँव में कालरा फैला। सब लोग गाँव छोड़कर भागने लगे, लेकिन शरत रोगियों की सेवा करने के लिए प्राणपण से जुट गया। उसने इस बात की चिंता नहीं थी कि रोग उस पर कुपित हो सकता है।

“एक बार रंगून शहर में प्लेग की महामारी ने आक्रमण किया। चारों ओर हाहाकार मच उठा। इधर-उधर लाशें दिखाई देने लगीं। तभी एक दिन शरत ने घर लौटकर पाया कि शांति को ज्वर हो गया है। वह काँप उठा। उसने बहुत पास से उस ज्वर के उग्र रूप को देखा था। परंतु पहचान गया कि यह प्लेग है। सहायता के लिए पड़ोसियों से प्रार्थना की, लेकिन ऐसे समय कौन आगे आता। दौड़ता हुआ वह अपने मित्र गिरीन्द्र सरकार के पास पहुँचा और अवरुद्ध कंठ से बोला, “भाई गिरीन! मैं बड़ी विपद् में फँस गया हूँ। शांति तीव्र ज्वर में छटपटा रही है।”

“एक बुढ़िया को प्लेग लगा। उसके बचने की कोई आशा नहीं थी। शरत उसे देखकर कातर हो उठा। विकल-विह्वल वह शांति की प्राण-रक्षा के लिए बार-बार डॉक्टर से अनुरोध करने लगा। लेकिन वह क्या कर सकते थे? सांत्वना देकर तथा उपचार बताकर वहाँ से चले गए। शरत फिर रोगिणी की शय्या के पास आ गया।”

शरत के हृदय में पशु-पक्षियों के प्रति भी विशेष प्रेम था। वह उनको बड़े प्यार से पालता, दुलारता और उनको तरह-तरह की चीजें खिलाता था। वह कहता था कि पशु-पक्षी भी मनुष्य की तरह जीवित प्राणी हैं। यदि उनसे प्यार करो तो वे मन से प्यार करते हैं। वह मनुष्य की तरह छली, कपटी, बेईमान और विश्वासघाती नहीं होते हैं। इन बातों से अभिभूत होकर ही उसने तोता, कुत्ता और बिल्ली पाल रखे थे। जब वह रंगून में थे तो मकान में आग लग गई। वह घर की आग को किकर्तव्यविमूढ़-सा देखता रहा। उसने ‘चरित्रहीन’ उपन्यास लिखा था, उसकी पाण्डुलिपि भी जलकर राख हो गई। शायद कुछ पुस्तकें भी आग निगल गई। अंततः वह घबराया नहीं।

लेखक के शब्दों में, “पक्षी उसके पास निरंतर रहते थे। एक मैना थी, जिसे प्यार से वह ‘मौना’ कहकर पुकारता था। अचानक उसकी मृत्यु हो गई। वह ऐसे दुखी हुआ, जैसे कोई संतान के मरने पर होता है। फिर एक सिंगापुरी नूरी पक्षी ले आया। बड़े प्यार से उसका नाम रखा ‘बाटू बाबा’। उसे बातें करना सिखाया। रात को बार-बार उठकर उसे खिलाता।”

“एक दिन यह ‘बाटू बाबा’ मर गया। सोने की जंजीर उसके गले में फँस गई। शरत अत्यंत कातर हो उठा। विधिपूर्वक नदी-तट पर ले जाकर उसका दाह-संस्कार किया। कई दिन तक न तो घर से बाहर निकला, न खाया, न पिया। जब निकला तो शोक के कारण उसका हृदय भरा हुआ था। बाल बिखरे हुए थे। मित्रों ने पूछा, “क्या हुआ शरत बाबू? आप इतने दुखी क्यों हैं?”

शरत ने उत्तर दिया, “मेरे बच्चे की मृत्यु हो गई।”

इस प्रकार शरत पशु, पक्षी और मानव सभी से अटूट प्रेम करता था। इसी विशिष्ट गुण के कारण शरत बाबू ने शास्त्री जी की कन्या को अपनी जीवन संगिनी बना लिया जबकि उस समय उनकी चित्तवृत्ति ग्रहस्थी बसाने की नहीं थी। उन्होंने अपनी प्रिय कहानी ‘काशीनाथ’ के स्वत्वाधिकार प्रमथनाथ मजूमदार को दे दिए थे, क्योंकि उनसे मजूमदार की निर्धनता देखी नहीं गई थी। गाँव में कोई बीमार हो जाता तो वह उसे देखने जाता और उसके पास जो भी दवा होती वह रोगी को देता। यदि उस दवा से रोगी को लाभ नहीं होता तो वह डॉक्टर को बुलाकर लाता और उसका सारा व्यय स्वयं ही वहन करता।

शरत विधवाओं से भी विशेष सहानुभूति रखते थे। अपनी पुस्तकों में उन्होंने ऐसी बहुत सी महिलाओं के विषय में लिखा है जो सामाजिक परंपराओं और रूढ़ियों के कारण पतित, वेश्या आदि मान ली गई थीं।

“और उस दिन हिरण्यमयी ने कानून सम्मत पत्नी न होते हुए भी पत्नीत्व के दायित्व को पूर्ण रूप से ओढ़ लिया। मन का मिलन ही सच्चा विवाह है।”

शरत बाबू ने एक स्थान पर लिखा है, “देखो, किरणमयी के चरित्र द्वारा मैंने नारी-जीवन की व्यर्थता को दिखाना

नोट

चाहा है। किरणमयी और हाशन बाबू का गृहस्थ जीवन बड़ा ही करुण है। स्वामी का प्यार उसने पाया नहीं। घर में स्वामी है, सास है, एक दार्शनिक है जो पत्नी को पढ़ाकर सुखी है। सास घोर स्वार्थी है। पुत्रवधू से खूब काम लेती है। किरणमयी दोनों विरुद्ध प्रकृति के स्त्री-पुरुष के प्रेमहीन मेल को हिंदू समाज विधि का नियम मानकर स्वीकार नहीं करती। वहीं से किरणमयी के जीवन की ट्रेजडी आरंभ होती है।”

शरत बाबू जब सत्तावन वर्ष के हुए तो बंगाल की स्त्रियों ने उनका जन्मदिवस मनाते हुए उनका अभिनंदन किया। उनको पराधीन समाज की असहाय नारियों के कष्टों को दूर करने वाला बताया। ऐसा भी कहा कि शरत बाबू ने अपने साहित्य में नारियों की गूढ़ प्रकृति को सम्मान देकर उनको उठाने का भरसक प्रयास किया है। इस प्रकार उनको स्त्री-चरित्र के रहस्य को ज्ञाता बताकर उनकी वंदना की गई।

अंत में एक धर्मपरायण व्यक्ति ने एक गोष्ठी में उनसे कहा, “आप मुँह से चाहे जो कहें, आपकी रचनाओं को पढ़कर मुझे लगता है कि सनातन धर्म की मर्यादा को आप ठेस पहुँचाना नहीं चाहते। जब देखता हूँ कि ‘चरित्रहीन’ उपन्यास की उस लड़की ने स्टीमर पर एक बालक के साथ एक बिछौने पर रहते हुए भी अपने शील को नष्ट नहीं होने दिया तो क्या हम लोग कहेंगे कि आप सनातन धर्म को नहीं मानते?”



टास्क शरत की भावुक एवं संवदेनशील प्रकृति को उदाहरण देकर समझाइए।

3. उत्साही एवं तीक्ष्ण बुद्धि वाला व्यक्ति—शरत बाबू की बुद्धि बचपन से ही तीक्ष्ण थी। वह जिस व्यक्ति को एक बार देख लेते थे उसे कभी नहीं भूलते थे। वह व्यक्ति यदि वर्षों बाद भी उन्हें दिखाई दे जाता था तो वह बड़ी सहजता से उसका नाम पता बता दिया करते थे। शायद इसी एक विशेष गुण के कारण उन्होंने बंगाल के जीवन से संबंधित अनेक बातों को सोचा और समझा था। वह चाहते थे कि समाज में गली-सड़ी बातें और जीवन को नरक बनाने वाली जो परंपराएँ पनप गई हैं उनका हर दृष्टि से निराकरण हो। उन्हें पढ़ने का अवसर कम प्राप्त हुआ परंतु जितना पढ़ा उसमें उन्होंने पूर्ण दक्षता प्राप्त की। बचपन में उनके नटखट व्यवहार से शिक्षकगण अवश्य दुखी होते थे, परंतु जब वह उनके मुख से सूझ-बूझ की बातें सुनते थे तो वे उनको किसी भी प्रकार का दंड नहीं दे पाते थे।

उनका बचपन गरीबी, दीनता और धनाभाव में व्यतीत हुआ था। उनके पास परीक्षा देने के लिए शुल्क नहीं था। इसलिए वह अपने मामा लोगों को ट्यूशन पढ़ाकर शुल्क के लिए धन जुटाते थे। इस संबंध में यह बात भी स्मरणीय है कि वह बड़े साहसी, लगनशील, उत्साही एवं उच्चकोटि के व्यक्ति थे। अपनी ओर से वह कभी कोई ऐसा कार्य नहीं करना चाहते थे जिससे दूसरों को कष्ट पहुँचे।

उस दिन विज्ञान की परीक्षा थी उन्होंने अपने विद्यार्थियों से कहा, “आज रात तुम मुझे परेशान न करना। जो कुछ पूछना हो कल सवेरे आकर पूछ लेना।” और इसके बाद वह विज्ञान की पुस्तकें लेकर पढ़ने बैठ गए। वह रातभर दत्तचित्त होकर पढ़ते रहे। उनमें पढ़ने की इतनी धुन रहती थी कि वह गूढ़ से गूढ़ विषय के रहस्य को हृदयंगम करने के उपरांत ही चैन से बैठते थे। इसके बाद जब उन्होंने प्रश्नपत्रों के उत्तर दिए तो परीक्षक उनके उत्तरों को देखकर चकित रह गए। वे विश्वास ही नहीं कर पा रहे थे कि शरत बाबू इतने अनूठे उत्तर लिख सकेंगे। वे सोचने लगे, कहीं शरत ने नकल तो नहीं की है। इसकी जाँच करने के लिए उन्होंने शरत बाबू को बुलाया और उनको नया प्रश्नपत्र तैयार करके दिया। इस बार शरत बाबू ने सभी प्रश्नों के उत्तर मौखिक रूप में दे दिए। यह देखकर अध्यापकों के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। उनकी स्मरण-शक्ति के सामने अध्यापकगण उनका चेहरा देखते रह गए। प्रभाकर जी ने उनके संबंध में लिखा है, “अत्यंत लोकप्रियता के कारण जनसाधारण, विशेषकर विद्यार्थी लोग उनकी प्रत्येक गतिविधि पर ध्यान रखते थे। वे उसका अर्थ निकालने की चेष्टा करते थे। जब वे बनारस गए तो अनेक विद्यार्थी उनसे मिलने के लिए आए और अनेक विषयों पर उनके साथ विचार-विनिमय किया। एक दिन उन सब को साथ लेकर वह विश्वनाथ के मंदिर में भी गए। उस समय वहाँ आरती हो रही थी। एक कोने में जाकर वे खड़े हो गए

और आरती के पश्चात् बिना दर्शन किए चुपचाप चले आए।” एक विद्यार्थी ने पूछा, “आपके उपन्यास से पता चलता है कि आप कंजर्वेटिव या आर्थोडक्स नहीं हैं। तब आप मंदिर में क्यों गए?”

शरतचन्द्र ने उत्तर दिया, “भगवान के प्रति मेरे मन में वैसी श्रद्धा नहीं, लेकिन मैं भक्त को प्यार करता हूँ। एक अनपढ़ ग्रामीण की सच्ची भक्ति में देवत्व रहता है। मैं वही देखने गया था। वह देखकर मैं कृतकृत्य अनुभव करता हूँ।”

4. विद्रोही प्रकृति का व्यक्ति—शरत बाबू ऐसे समाज में रहते थे जिसमें सड़ी-गली मान्यताओं को श्रेष्ठ स्थान दिया गया था। अतः शरत बाबू इन मान्यताओं और परंपराओं के सख्त विरोधी थे। वह उनको स्वीकार करने में हिचकिचाते थे। उनके विरोध में जो सच्ची बातें उनके हृदय में जन्म लेती थीं उनको वह तुरंत कर देते थे। एक बार दादी के मना करने के बाद भी वह बसंतपुर चले गए। विद्रोह की इस भावना के कारण वह कुछ जिद्दी हो गए थे। तंबाकू खाने लगे थे। कलकत्ता में पहुँचे तो उन्होंने वेश्याओं के मुहल्ले में मकान लिया, क्योंकि वह मानते थे कि वेश्याएँ भी समाज का एक अंग हैं। लोगों ने झूठी मान्यताओं के कारण उनको समाज से बहिष्कृत कर रखा है। वह वेश्याओं में भी सच्चरित्र स्त्रियों को ढूँढ़ते थे। वह उनकी सदाशयता और महानता की प्रशंसा किया करते थे। वह सोचते थे कि किसी कारणवश वे पथ भ्रष्ट हो गई हैं, परंतु वे भी नारियाँ हैं। इन नारियों में ही माँ, बहिन और पत्नी होती हैं। सचमुच मनुष्य का बाहरी रूप उसका असली परिचय नहीं है। उनका कहना था—हजारों ऐसी सती नारियाँ समाज में मिलेंगी जो ऊपर से तो भली और सुपथगामी दिखाई देती हैं परंतु भीतर से वे झूठी, कुकर्मि, चोर, धोखेबाज, ईर्ष्यालु और जाने क्या-क्या होती हैं। इसके विपरीत जिनको हम दुराचारिणी कहते हैं, उनके भीतर दया, प्रेम, श्रद्धा आदि गुणों की खान रहती है।

शरत बाबू कहते थे—“परमात्मा ने मानव को मानव बने रहने के लिए बनाया है, दानव नहीं। इसलिए मनुष्य को मनुष्य से घृणा कभी नहीं करनी चाहिए। घृणा पाप को जन्म देती है और पाप से मनुष्य की प्रवृत्ति अपराधी बन जाती है। उनका कहना था शास्त्रों में जो कुछ लिखा है वह समयानुसार ठीक था। इसलिए शास्त्रों में संशोधन करने का मनुष्य को अधिकार है। शास्त्रों ने तो मनुष्य के अधिकारों का बखान किया है परंतु कर्तव्यों के बारे में कुछ नहीं कहा है। ऐसी दशा में पुरुष तो कुछ भी करता फिरे उसके लिए कोई उँगली नहीं उठाता, परंतु भूल से स्त्री का पाँव फिसल जाता है तो लोग उसे कुलटा, कलकिनी, दुराचारिणी, पथभ्रष्टा और न जाने क्या-क्या कहने लगते हैं। ऐसी बात क्यों है? समाज में स्त्रियों को भी उतना ही सम्मान मिलना चाहिए जितना एक पुरुष को दिया जाता है। स्त्री भी प्राणवान् प्राणी है। वह सती है। वह गृहस्थी को सजाती है और पुरुष को जन्म देने वाली देवी है। और वह मनुष्य की प्रेरणा है। अतः हमें स्त्री जाति का सम्मान करना चाहिए।”

5. विलक्षण प्रतिभा का धनी साहित्यकार—शरत बाबू ने बचपन से ही जीवन को निकट से देखा था। उसकी गहराइयों को पहचानने की चेष्टा की थी। अतः विरला अथवा महान् साहित्यकार बनना तो जैसे वह अपने भाग्य में लिखा कर लाए थे। वह बचपन से ही कहानी, कथा आदि सुनने में रुचि लेते थे। वह स्थानीय जमींदार के पुत्र के साथ प्रायः थियेटर देखने चले जाते थे। वह रास्ते में अचानक ही उससे पूछ बैठते थे—“क्या तुम इस पर कहानी लिख सकते हो?” कुछ क्षण बाद वे स्वयं उसी से मिलती-जुलती कहानी गढ़कर सुनाने लग जाते थे। कुछ दिनों बाद वह एक सुंदर कहानी रचकर भी दिखाते थे। उनको कहानी लिखने की प्रेरणा अपने पिता की ‘हरिदास की गुप्त बातें’ और ‘भवानी पाठ’ जैसी पुस्तकों से मिली। ये दोनों पुस्तकें उन्होंने अपने पिता की अलमारी में से चुपके से निकाल कर पढ़ी थीं। चूँकि उनके पिता ने उनसे कह रखा था कि पाठ्य पुस्तकों के अलावा दूसरी पुस्तकों को पढ़ना अच्छे लड़कों का कर्तव्य नहीं है। अतः शरत बाबू के विद्रोही मन ने उन पुस्तकों को जान-बूझकर पढ़ा। वह देखना चाहते थे कि जिन पुस्तकों के विषय में उनसे मना किया गया था, आखिर उनमें ऐसी क्या बात है? इस प्रकार की पुस्तकों से ही उनको नई कहानियाँ और उपन्यास लिखने की प्रेरणा मिल सकी थी।

जिज्ञासा मानव मन की प्यास बुझाती है तो उसे एक नई खोज करने की प्रेरणा भी देती है। शरत बाबू जिन कहानियों को गढ़-गढ़ कर लिखते थे, वे दूसरों को भी सुनाते थे। उनके संगी-साथी उन कहानियों को सुनकर प्रभावित हुए बिना नहीं रहते थे। वह अपने मामा सुरेंद्रनाथ, विभूतिभूषण और विधवा बहन के साथ गुप्त रूप से गोप्यता भी करते

नोट

थे। अपनी युवावस्था में ही उन्होंने काशीनाथ, शिशु, चंद्रनाथ, हरिचरण बालस्मृति, शुभदा, देवदास, अनुपमा का प्रेम, कोरेल ग्राम आदि कृतियाँ लिख डाली थीं। उन्हें साहित्यिक गोष्ठियों में विशेष आनंद आता था। वहाँ बैठकर वे सभी प्रकार की रचनाओं पर चर्चा करते थे। उनके साहित्यिक जीवन के विषय में भी विष्णु प्रभाकर ने लिखा है, “जैसा कि उनका स्वभाव था वह बहुत अधिक नहीं लिख पाते थे। आग्रह करने वाले बहुत थे। सब की रक्षा करना उनके लिए असंभव था। जो उनको जानते थे और उनके परमभक्त थे, वे ही उनसे लिखवा सकते थे। उनमें अग्रणी थे-भारतवर्ष के ख्यातनामा संपादक राय बहादुर जलधर सेन। बैकुंठ का वसीयत नामा, अरक्षणीया, श्रीकांत, निष्कृति तथा समाज धर्म मूल्य आदि उनकी रचनाएँ भारतवर्ष में ही प्रकाशित हुईं। निष्कृति का एक अंश ‘घर भांगा’ के नाम से ‘यमुना’ में भी छपा था।”



नोट्स

शरत के साहित्यिक जीवन पर अपने विचार प्रकट करते हुए प्रफुल्लचंद्र राय ने कहा था—“धन्य शरतचंद्र! तुम इतने दिन कहाँ थे? कहाँ से आ गए? सचमुच तुम्हारे समान एक लेखक की बड़ी आवश्यकता थी। सामाजिक व्याधि और दुर्नीति का चित्रण करने के लिए जिस प्रकार तुमने कलम पकड़ी उसकी कोई तुलना नहीं हो सकती। तुमने कभी भी धर्ममत के ऊपर ओछा व्यंग्य-विद्रूप नहीं किया।”

6. सच्चा राष्ट्रभक्त—शरत बाबू को अपने देश से अटूट प्रेम था। वह देश सेवा के लिए बड़े से बड़ा कार्य भी छोड़ने के लिए तैयार हो जाते थे। वह राजनीति के क्षेत्र में लोगों को सक्रिय होने की प्रेरणा देते थे और चाहते थे कि भारत से दुष्ट और धूर्त अंग्रेजों के राज्य का हर दशा में अंत होना चाहिए। वह स्वतंत्रता आंदोलन को हृदय से अपना लेना चाहते थे, किंतु कुछ कारणवश वह वैसा नहीं कर पाए जैसा सोचा करते थे। वह एक साहित्यकार थे। लोगों के कथनानुसार साहित्यकार को राजनीति की गंदी बातों में नहीं पड़ना चाहिए परंतु शरत बाबू कहते थे कि गाँधी जी ने जो आंदोलन छेड़ा है उसका साथ सभी लोगों को देना चाहिए क्योंकि वह देश की मुक्ति का आंदोलन है। जो व्यक्ति दासता में रहकर साँस लेने में गुरेज नहीं करता वह सच्चा साहित्यकार नहीं है। सच्चा साहित्यकार दासता की बेड़ियों को तोड़ने के लिए हर तरह के कर्म कर सकता है। जब कभी उनके संगी-साथी उनसे कहते कि आप तो साहित्यिक हैं आपका काम साहित्य चर्चा है राजनीतिक नहीं, तो वह उत्तर देते, “यह आपकी भूल है। राजनीति में योगदान देना देशवासियों का कर्तव्य है। विशेषकर हमारे देश में यह राजनीति आंदोलन देश की मुक्ति का आंदोलन है। इस आंदोलन में साहित्यकारों को सबसे आगे बढ़कर योगदान देना चाहिए। लोकमत को जागृत करने का गुरुभार संसार के सभी देशों में साहित्यिकों का ही रहा है। युग-युग में उन्होंने ही तो मनुष्य के मन में मुक्ति की आकांक्षा जगाई है। यदि आपकी बात मान लें तो वकील, बैरिस्टर, विद्यार्थी सभी यही तर्क उपस्थित करेंगे, तब राजनीति को कौन संभालेगा?”

शरत बाबू चाहते थे कि देश की मुक्ति के आंदोलन में लोगों को अवश्य भाग लेना चाहिए। इसी भावना के कारण उनकी देश संबंधी में पूरी श्रद्धा नहीं थी, किंतु वह आजादी के महत्त्व को खुले हृदय से बताते थे। उन्होंने कहा, “मैं गाँधी जी को व्यक्तिगत रूप से इतना बड़ा मानता हूँ जिसकी तुलना आसानी से खोजे नहीं मिल सकती। मेरे मन में उनके प्रति लोगों से कहीं अधिक श्रद्धा है। उनके प्रति मेरे मन में यदि वह श्रद्धा नहीं होती तो आज मैं किसी के दबाव या आग्रह से हावड़ा जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष का पद कभी स्वीकार नहीं करता। पर उनके सिद्धांतों से अक्षरशः सहमत होने की कसम मैंने खाई है। मैं मनुष्य हूँ मिट्टी का जड़ पुतला नहीं हूँ। इसलिए किसी भी साधारण या महत्त्वपूर्ण विषय पर स्वतंत्र रूप से चिंतन करने की सामर्थ्य मुझमें है।”

जब उनसे पूछा गया कि अहिंसक सत्याग्रह और हिंसक विप्लव में किसका समर्थन करते हैं? तो उन्होंने उत्तर दिया, “मैं हिंसा का समर्थन नहीं करता यह ठीक है। फिर भी न जाने क्यों, क्रांतिकारियों के प्रति मेरे अंदर यह एक

नोट

कमजोरी रह गई है। इसलिए खतरा उठाकर भी इनसे संपर्क रखने और कभी-कभी यथासंभव आर्थिक मदद करने में मैं तनिक भी आगा-पीछा नहीं करता।”

एक बार, गाँधी जी के आह्वान पर भारत की नारी सामूहिक रूप से पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर रणभूमि में उतरी थी। दोनों साथ-साथ रहेंगे तो क्या आपत्तिकर घटनाएँ न घटेंगी? यह आशंका अनेक व्यक्तियों को परेशान कर रही थी। शरत बाबू ने इस अवसर पर स्पष्ट शब्दों में कहा, “मशाल के दीप्त प्रकाश से अंधकार नष्ट होता है, यही बात सब लोग जानते हैं लेकिन उससे उठने वाली किंचित बदबू की ओर क्या किसी का ध्यान जाता है? जल प्लावन से धरती उर्वर हो उठती है? यदि उस जल के साथ कुछ मैला भी आ जाए तो परेशान होने की क्या बात है?”

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि शरत बाबू बड़े उत्साही, दयालु, विद्रोही परंतु धर्म की वास्तविकता को समझने वाले और घुमक्कड़ व्यक्ति थे। उन्होंने जीवन को बहुत पास से देखा और उसे समझने का प्रयास किया। सचमुच वह एक निस्वार्थी और मानव को मानव समझने वाले व्यक्ति थे। ऐसे व्यक्ति संसार में कम ही होते हैं।



टास्क सच्चे राष्ट्रभक्त के रूप में शरत ने क्या भूमिका निभाई?

4.2 स्वच्छंदता और साहस का प्रेरक : राजू

राजू का चरित्र—‘आवारा मसीहा’ में श्री विष्णु प्रभाकर ने वैसे तो मुख्य रूप से शरच्चंद्र के चरित्र का चित्रण किया है, लेकिन साथ में आए अन्य पात्रों के चरित्रों पर भी बहुत-कुछ लिखा है। इसका मुख्य कारण यह है कि चरित्र-चित्रण करते समय चरित नायक का लेखक जिन समस्याओं, मान्यताओं और परिस्थितियों के संबंध में लिखता है, उससे संबंधित पात्रों के चरित्रों को दर्शाना भी आवश्यक हो जाता है। जीवनी में आने वाली सभी सहायक पात्र काल्पनिक न होकर वास्तविक होते हैं। इन लोगों का चरित नायक से किसी न किसी रूप में सीधा संबंध होता है। इनके व्यक्तित्व का निर्माण करने से अधिकारों और कर्तव्यों के विषय में बहुत कुछ पता चल जाता है। पाठकों को भी नई बातों की जानकारी होती है।

‘आवारा मसीहा’ में राजू भी इसी तरह का पात्र है जिसने शरत बाबू का हर कदम पर साथ दिया। यदि शरत बाबू की ओर से किसी प्रकार की नई शरारत होती तो राजू उनको चेतावनी देता और गलत कार्य करने से रोकता था। इस प्रकार राजू एक ऐसा लड़का है जो शरत बाबू को एक नई दिशा प्रदान करता है। इससे प्रेरित होकर शरत बाबू एक दुःसाहसी लड़के से साहित्यकार और समाज सेवक बन गए। यह मान्यता है कि यदि राजू शरत बाबू के जीवन में नहीं आता तो शरत बाबू शायद साहित्यकार न बनकर कुछ और बन जाते।

राजू के पिता का नाम बाबू रामरतन मजूमदार था। वे जिला इंजीनियर थे। भागलपुर में आकर रामरतन बाबू ने शरत बाबू के पड़ोस में मकान लिया। कुछ सामाजिक कारणों से दोनों परिवारों में अनबन हो गई लेकिन बच्चों में पहले के समान प्रेमभाव रहा। इस प्रकार शरत बाबू और राजू दोनों दो तन एक प्राण के रूप में कार्य करने लगे। असल में दोनों बालकों के स्वभाव एक से ही थे। दोनों बालक तरह-तरह के खेलों में पारंगत थे। वे कभी पतंग उड़ाते और कभी गुल्ली डंडा खेलते। राजू कीमती पतंगें खरीदकर लाता था और शरत की पतंग से पेंच लड़ाता था। दोनों की गहरी जान-पहचान पतंगबाजी के कारण ही हुई थी। दोनों एक दूसरे के विचारों का स्वागत करते थे और जहाँ तक संभव होता था प्रतियोगिता के कारण आपसी प्रेमभाव को प्रभावित नहीं होने देते थे।

राजू एक साहसी, अच्छा सुझाव देने वाला और प्रत्युपनमति बालक था। जब कभी वह शरत के सामने कोई बात रखता, अपने सुझाव देता तो उसे शरत के शांत और धैर्यपूर्ण उत्तर को सुनकर चकित रह जाना पड़ता क्योंकि शरत के सुझाव बेजोड़ होते थे। एक उदाहरण यह है—

नोट

“उसका अधिकतर समय राजू के साथ बीतने लगा। वह इन दिनों पढ़ना-लिखना छोड़ लकड़ी के कारखाने में काम सीखता था। यदि वह मोती जैसे अक्षर लिख सकता था तो लकड़ी की सुंदर वस्तुएँ भी बना सकता था। अद्भुत चरित्र था उसका। एक साथ वीरता और बाँसुरी की विद्या में निष्णात। कंठ स्वर मधुर था। हारमोनियम, क्लेयरनेट सभी खूब अच्छी तरह से बजाता था। अभिनय करने की उसमें अद्भुत क्षमता थी। वह प्रतिभाशालियों के वंश में पैदा हुआ था इसलिए प्रतिभा ने उसका मुक्त होकर वरण किया था।”

“उसकी एक नाव थी और उसी में वह घूमता रहता था। कभी-कभी घोर अँधेरी रात और पूरमपूर भरी होती गंगा, वह शरत को पकड़ता और कहता, ‘चलो नाव में घूम आवें’ शरत को डर लगता, पर राजू तो उसका गुरु है, मना करे भी तो कैसे करे?”

एक बार की बात है कि फुटबाल के मैदान में दंगा हो गया। इस बारे में लेखक ने लिखा है, “अन्याय के विरुद्ध सीना तानकर खड़ा हो जाना राजू का स्वभाव था।” इस पंक्ति से यह बात स्पष्ट होती है कि राजू दुःसाहसी होने के कारण कभी-कभी झगड़ा भी करने लगता था। राजू की उम्र शरत से अधिक थी। अतः वह उसे हर प्रकार से उत्साहित करता रहता था। राजू संगीत और बाँसुरी बजाने में भी रुचि लेता था। उसका कंठ मधुर था। जब गाता तो श्रोतागण मुग्ध हो जाते थे। आजकल राजू ने पढ़ना-लिखना छोड़ दिया था। वह लकड़ी के एक कारखाने में काम सीख रहा था। देखा जाए तो वह ऐसे काम की ओर भी प्रवृत्त हो जाता था जिसे दूसरा बालक कभी नहीं कर सकता था।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

5. शांति को बुखार होने पर शरत किसके पास जाता है?

(क) राजू	(ख) नीरू
(ग) गिरींद्र सरकार	(घ) इनमें से कोई नहीं।
6. कितने वर्ष का होने पर बंगाली स्त्रियों ने शरत का जन्मदिन मनाकर उनका अभिनन्दन किया?

(क) सत्तावन	(ख) पचपन
(ग) बावन	(घ) इनमें से कोई नहीं।
7. किससे प्रेरित होकर शरत बाबू एक दुःसाहसी लड़के से साहित्यकार और समाज सेवक बन गये?

(क) नीरू	(ख) राजू
(ग) मोक्षदा	(घ) इनमें से कोई नहीं।

एक बार की बात है, गंगा में कुछ स्त्रियाँ स्नान कर रही थीं। राजू भी शरत के साथ किनारे पर अपनी नाव ठीक कर रहा था। अचानक वहाँ कुछ असामाजिक तत्व आ गए। वे स्त्रियों की ओर घूरने लगे। राजू ने उनमें से एक व्यक्ति को पकड़ लिया। फिर उसे गंगा में खूब गोते लगवाए। अंत में उससे प्रतिज्ञा करवाई कि वह भविष्य में स्त्रियों के प्रति कभी गलत व्यवहार नहीं करेगा। इसी प्रकार एक अंग्रेज ने मोक्षदा संस्कृत पाठशाला के एक अध्यापक की मार्ग में कोड़े से पिटाई कर दी। उनकी पीठ पर चाबुक की मार से खाल उधड़ गई और खून छलक आया। राजू ने यह सब देखा तो उसका रक्त खौल उठा। उसने उस दुष्ट और पापी अंग्रेज से बदला लेने की प्रतिज्ञा कर ली। फिर अध्यापक से निवेदन के रूप में कहा—“आप धैर्य धारण करके अपने घर जाएँ। कल जो कुछ होगा उसे आप स्वयं सुन लेंगे।” दूसरे दिन राजू, शरत तथा कुछ अन्य साथी एक मोटी-सी रस्सी लेकर पेड़ों के पीछे छिप गए। उन सब ने मिलकर रस्सी पेड़ों से दो तनों के बीच बाँध दी। वह अंग्रेज शाम के समय क्लब को जाता था। अचानक उसका घोड़ा रस्सी में उलझ कर गिर पड़ा। तभी सब लड़के पेड़ों से नीचे कूद पड़े। उन्होंने उस पापी अंग्रेज की मन माफिक

पिटार्ई की और उससे माफी मंगवाई। इसके बाद वह अंग्रेज मारे लज्जा के भागलपुर से स्थानांतरण करा के भाग गया।

इस घटना से यह सिद्ध होता है साहसी होने के साथ-साथ राजू बुद्धिमान और निडर भी था। उसे अन्याय जरा भी पसंद नहीं था। एक उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जाती है—

पास आकर राजू ने शरत से कहा, “उस मुहल्ले के तारापद का बेटा अभी-अभी हैजे से मर गया है। बेचारा तीन साल का बच्चा अनेक प्रयत्न करने पर भी बच नहीं सका। माँ-बाप पागलों की तरह रो-पीट रहे हैं। लेकिन इस रोग के रोगी की लाश को अधिक देर तक नहीं रखना चाहिए। इसी दम शमशान पहुँचा देना चाहिए। मोहल्ले के सभी लोग यहाँ यात्रा देखने के लिए आ गए हैं। अब तू भी मेरे साथ चला।”

“दोनों तारापद के घर पहुँचे। माँ-बाप को समझा कर बच्चे की लाश शमशान की ओर ले चले। आधी रात बीत चुकी थी। शमशान ठीक गंगा के तट पर था। जितना बड़ा उतना ही डरावना। दूर-दूर तक बस्ती का निशान नहीं था। चारों ओर बालू का अखंड राज्य, कहीं-कहीं खजूर के एक-दो पेड़ या कंटीली झाड़ियाँ, यही कुछ वहाँ दिखाई देता था।”

“शमशान के बीचों-बीच एक झोंपड़ा था। आँधी-पानी आने पर या किसी कारण विश्राम करने की आवश्यकता हो तो उसका उपयोग किया जा सकता था। लेकिन लोगों का विश्वास था कि इस झोंपड़े में भूत रहते हैं। दिन में भी उसके भीतर जाने से डरते थे।”

लेकिन राजू इन बातों की चिंता नहीं करता था। वह सीधा उसी झोंपड़े में जा घुसा। शरत भी पीछे-पीछे चला आया, लेकिन डर के मारे वह काँप रहा था। राजू ने लाश को फर्श पर रख दिया। बोला, “बहुत देर से बीड़ी नहीं पी है। पहले एक बीड़ी पी लूँ।”

तभी सहसा अँधेरे में एक आवाज आई, “एक मुझे भी दोगे?”

शरत के रोंगटे खड़े हो गए। शरीर से पसीना बहने लगा। राजू ने पूछा, “कौन है?” और साथ ही दियासलाई जलाकर देखा, पास ही एक मैले से बिस्तर पर एक आदमी गुदड़ी से ढका हुआ लेटा है।

...अंत में राजू ने सबसे पहले लड़के को गाड़ा, फिर स्नान किया। उसके बाद शरत से कहा—“मैं इस बूढ़े को कंधे पर उठा लेता हूँ। तू इसकी गुदड़ी बगल में दबा ले।”

इस प्रकार ‘आवारा मसीहा’ में राजू की निडरता और साहस की अनेक कहानियाँ भरी पड़ी हैं। भागलपुर में माघ के महीने का जाड़ा प्रसिद्ध है। एक दिन अचानक बेगला सकूल की पत्नी का स्वर्गवास हो गया। उस दिन अँधेरी रात्रि थी और आकाश में घने बादल थे। ऐसी दशा में गाँव का कोई भी व्यक्ति शमशान जाने को तैयार नहीं हुआ। लेकिन राजू, शरत तथा अपने अन्य साथियों की सहायता से इस कार्य को करने के लिए तैयार हो गया। जब वे लोग शव को शमशान घाट की ओर ले जा रहे थे तो मार्ग में बड़ी तेज वर्षा होने लगी। देखते-देखते रास्ते और घाट पानी में डूब गए। ऐसे में लाश को कैसे फूँका जा सकता था? राजू बोला—“हम लोग इमली के पेड़ के नीचे बैठ कर साँस ले लें।” इसी समय ओले गिरने लगे। ऐसे में पेड़ के नीचे बैठना भी ठीक नहीं था। पर मुर्दे को अकेले कैसे छोड़ा जाए? राजू बोला, “आप सब जा सकते हैं, मैं अकेला यहाँ रहूँगा।” राजू ने किसी प्रकार लाश को ठिकाने लगाया और ओले-पानी में हँसता हुआ घर की ओर चल पड़ा। सचमुच राजू एक परोपकारी, अदम्य साहसी और बात का धनी लड़का था।

राजू के हृदय में निर्धन मित्रों के प्रति बड़ी दया का भाव रहता था। वह जब-तब निर्धन छात्रों की सहायता करता रहता था। उसने जीवन के हर क्षेत्र में शरत की सहायता की। शरत ने राजू से ही सीखा था कि दया क्यों आती है? और करुणा क्यों फूट-फूट कर रोती है? शरत बाबू राजू से प्रेरणा लेकर कार्य करते थे। एक दिन अचानक पता चला कि राजू कहीं चला गया है। शरत को लगा जैसे किसी ने उनकी आत्मा को निचोड़ लिया हो। कुछ दिनों के बाद कुछ लोगों ने राजू को हरिद्वार में देखा। वह उदासी पंथ के अखाड़े में एक गीत गा रहा था। एक बंगाली जान-पहचान की महिला ने राजू को पहचान लिया। उसी स्त्री ने उससे कहा कि “तेरे माता-पिता तेरे कारण पागल हो गए हैं।”

लेकिन राजू शांत रहा। इस प्रकार वह किसी को कुछ बताए बिना समाज और शरत से दूर चला गया और फिर कभी नहीं मिला।

प्रश्न उठता है कि कहीं राजू कोई काल्पनिक पात्र तो नहीं है? परंतु शरत की प्रेरणा और कदम-कदम पर सहायता के प्रमाण प्रस्तुत करने वाला राजू काल्पनिक पात्र नहीं हो सकता। हाँ, राजू एक विचित्र चरित्र वाला बालक है। संभवतः उसके हृदय में शुरू से ही संन्यास लेने की आकांक्षा बलवती हो रही थी। अंत में जब वह कदाचित् संसार की गंदी बातों, माया, मोह और मृत्यु से बचने की तरकीब सोचता है तो संन्यासियों के अखाड़े में जा पहुँचता है। इसके हृदय में मानव-जाति के प्रति दया और प्रेम का भाव है। वह निडर है और अन्याय के विरुद्ध इसी कारण सीना तानकर खड़ा हो जाता है। उसने साहस का परिचय छोटी-सी आयु में ही दे दिया था। कुछ भी सही, राजू शरत की प्रेरणा का स्रोत था।

4.3 मोक्षदा का चरित्र-चित्रण

हिरण्यमयी देवी—शरत बाबू जिस स्त्री से प्रेम करते थे उसका नाम हिरण्यमयी देवी था। हिरण्यमयी देवी शरत बाबू की पत्नी थी लेकिन समाज की दृष्टि में, “शरत बाबू ने उसे अपनी जीवन संगिनी बना लिया था।” कुछ भी सत्य हो लेकिन शरत उससे ऐसा कोई व्यवहार नहीं करते थे जो अपयश का कारण था। हिरण्यमयी देवी एक देहाती स्त्री थी, और वह कम पढ़ी-लिखी थी। वह सीधी, सादी, समाज की बहुत-सी बातों की जानकार और शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत करने में विश्वास रखती थी। शरत बाबू की उससे जान पहचान भी बड़े अनोखे ढंग से हुई। उनकी पहली धर्म पत्नी शांति का देहावसान हो चुका था। शांति के सानिध्य से शरत बाबू का जीवन आनंदपूर्वक बीत रहा था, परंतु उसकी मृत्यु के उपरांत शरत बाबू जैसे टूट गए थे। इस कारण उन्होंने दूसरी स्त्री से विवाह करने की बात त्याग दी थी। यद्यपि शरत बाबू की आयु काफी हो चुकी थी और वे तरह-तरह के कष्टों को सहन करते हुए अधूरे और अस्वस्थ रहने लगे थे, जैसे-तैसे जीवन-नैया को चला रहे थे। रंगून में रहते समय वह अनेक स्त्रियों के संपर्क में आए परंतु उन्होंने किसी से भी विवाह की बात नहीं चलाई। कुछ विद्वानों का कहना है कि रंगून में उनके घर में एक स्त्री रहती थी। परंतु पता नहीं चल पाया कि वह कौन थी और उनके साथ क्यों रहती थी? कोई नहीं जानता कि वह उनकी जीवन संगिनी थी या कोई रखैल स्त्री।



टास्क मोक्षदा के चरित्र पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

बंगाल के बहुत से लोग उन दिनों धन कमाने के लिए रंगून जाया करते थे। उन्हीं में से कृष्णदास अधिकारी नामक एक संभ्रांत व्यक्ति रंगून पहुँचे थे। वह मेदिनीपुर जिले के रहने वाले थे। उनके साथ उनकी एक पुत्री थी। जिसका नाम मोक्षदा था। वह साधारण कन्या थी। उसे सुंदर किसी भी दशा में नहीं कहा जा सकता। उसका रंग मटमैला और शरीर भी सुडौल नहीं था, पर वृष्टि से भीगे फूल पत्तों जैसा लावण्य, चेहरे से श्रीमयी और स्नेहमयी भी कम नहीं थी। उसके पिता निर्धन थे। अतः वह कन्या के लिए दहेज जैसी घृणित वस्तु जुटाने में असमर्थ थे। उसके पिता ने शरत से कहा कि यदि आप अनुग्रहपूर्वक मेरी बेटी को स्वीकार कर लें तो बड़ा उपकार होगा। लेकिन शरत बाबू अभी इसके लिए तैयार नहीं थे क्योंकि उनको अपनी पूर्व पत्नी की याद सताती रहती थी। इसलिए शरत मानसिक रूप से विवाह नहीं करना चाहते थे।

इसी समय शरत बाबू बीमार पड़ गए। बीमारी का मुख्य कारण उच्छृंखल जीवन और खान-पान में बदपरहेजी आदि था। दूसरे बर्मा में मलेरिया और प्लेग जैसे रोग फैले हुए थे। इसलिए ऐसे वातावरण में कोई भी व्यक्ति बीमार हो सकता है। उस समय मोक्षदा ने बड़े स्नेह से शरत बाबू की तीमारदारी की। धीरे-धीरे शरत बाबू का ज्वर उतर गया।

नोट

एक दिन उन्होंने आँख खोल कर देखा कि मोक्षदा उनके सिरहाने बैठी है। शरत को आश्चर्य हुआ और उसके प्रति सहानुभूति उमड़ी। वे सोचने लगे माँ के पश्चात मोक्षदा ही एक ऐसी स्त्री है जिसने मुझे स्नेह दिया है। वह मोक्षदा की ओर आकर्षित होते गए।

एक दिन शरत को पता चला कि कृष्णदास बिना कुछ बताए कलकत्ता चले गए हैं। वह मोक्षदा का भार उनके ऊपर छोड़ गए हैं। शरत को मोक्षदा के लिए वर खोजने का भार वहन करना पड़ा।

तब शरत ने अचानक मोक्षदा से कहा, “आज मैंने तुम्हारे लिए एक वर ढूँढ लिया है।”

मोक्षदा हठात् शरत की ओर देखने लगी। फिर उसकी आँखें भर आईं। बोली, “इस तरह की बातें करते आपको अच्छा लगता है?”

शरत ने कहा, “ना ना, मैं परिहास नहीं कर रहा और तुम्हें बुरा भी नहीं मानना चाहिए। आखिर तुम्हें विवाह तो करना ही है, जो व्यक्ति मैंने तुम्हारे लिए ढूँढा है, वह तुम्हारा आदर करता है और तुम्हारे प्रति सदय भी है।”

मोक्षदा और भी विस्मित हो उठी। अटक-अटक कर उसने कहा, “मैं इस बारे में कुछ नहीं जानती। वह व्यक्ति कौन है? बिना जाने उसके बारे में क्या कह सकती हूँ।”

शरत ने शरारत से मुस्कराते हुए कहा, “तुमने उसे देखा है।”

“क्या?”

“बहुत बार देखा है।”

जैसे मोक्षदा के मस्तिष्क में प्रकाश उभरने लगा। फिर भी अनजान बने रहते हुए उसने कहा, “मैं कुछ नहीं जानती।”

शरत बोला, “मुझे नहीं जानती।”

मोक्षदा ने एकाएक दृष्टि उठाकर शरत की ओर देखा। अविश्वास और विस्मय से भरी वह दृष्टि शरत के अंतर में भर गई। फिर सहसा भरी हुई बदली की तरह वह नीचे झुकी कि शरत के चरण पकड़ ले लेकिन बीच में ही रोक कर शरत ने कहा, “क्या तुम्हें वह व्यक्ति स्वीकार है?”

मोक्षदा ने अब भी कोई जवाब नहीं दिया। वह उसी तरह नीचे झुकी रही। इसके बाद शैव-रीति से दोनों ने विवाह कर लिया। यद्यपि समाज ने इस संबंध को स्वीकार नहीं किया परंतु शरत सामाजिक विधि-विधानों को कब मानता था? उसने कहा, “आज से तुम हिरण्यमयी देवी हुई। तुम खरे सोने के समान हो। इस पर कभी भी किसी प्रकार का मैल नहीं जम सकता। तुम्हारे अंतर के उज्ज्वल रूप को मैंने देख लिया। वह मेरी शक्ति बनेगा।”

“और उस दिन से हिरण्यमयी देवी ने कानून सम्मत पत्नी न होते हुए भी पत्नी के दायित्व को पूर्ण रूप से ओढ़ लिया। मन का यह मिलन ही सच्चा विवाह है।”

हिरण्यमयी देवी एक सीधी-सादी और सरल हृदय स्त्री थी। वह शरत का बहुत सम्मान करती थी। वह हमेशा उसके कार्यों को प्राण-पण से पूर्ण करती थी। शरत बाबू को उसने कभी शिकायत का अवसर नहीं दिया। एक बार शरत बाबू किसी क्रांतिकारी की सहायता करना चाहते थे। हिरण्यमयी देवी ने अपने पति के द्वारा उस मनुष्य की सहायता को अच्छा समझा और उससे जो करते बना, उसने किया। इस तरह वह दोहरा भार ढोती हुई भी गृहस्थी के नियमों का पालन करती रहती थी। अनपढ़ होने के कारण हिरण्यमयी देवी को बहुत सी अच्छी-बुरी बातों का ज्ञान नहीं था। जब कभी कोई उससे शरत साहित्य के स्त्री पात्रों के विषय में कुछ बात करना चाहता तो वह हँसकर अनभिज्ञता प्रकट कर देती थी। उसका हृदय सदैव इसी बात में डूबा रहता था कि लोगों को उसके द्वारा कष्ट न पहुँचे। वह निश्चल प्रेम से शरत बाबू की सेवा करती रहती थी। इसी प्रेम के कारण उसने एक आवारा साहित्यकार के हृदय को जीत लिया था। उसकी सेवा परायणता, निश्चलता और प्रेम के विषय में लेखक ने संक्षेप में बहुत कुछ कह दिया है।

4.4 ‘आवारा मसीहा’ : क्रांतिकारी जीवन का अग्रदूत

नोट

‘आवारा मसीहा’ में प्रभाकर जी ने सुप्रसिद्ध उपन्यासकार शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय की जीवनी का चित्रण किया है। इसमें लेखक ने ‘कुछ नहीं’ को ‘सबकुछ’ के रूप में व्यक्त करने की चेष्टा की है और वह अपने इस महत्वपूर्ण कार्य में सफल भी हुआ है। उसने शब्दों के माध्यम से शरत बाबू तथा उनसे संबंधित पात्रों, घटनाओं, रूढ़ियों, कार्यकलापों आदि के विषय में जो कुछ समझाया है उसे देखकर यही लगता है कि यदि लेखक चाहे तो पीतल को भी सोना बना सकता है। लेखक की इस पुस्तक के अध्ययन से साहित्यकारों और पाठकों को एक नई दिशा मिली है। यह निर्विवाद सत्य है कि जो व्यक्ति विचारवान होते हैं वे संवेदनशील भी होते हैं। निरक्षर भट्टाचार्य के हृदय में प्रेम, भक्ति, शालीनता, सहृदयता, दया, करुणा आदि का समुद्र वेग नहीं उमड़ता। अतः विज्ञ पाठक संवेदनशील व्यक्ति से ही कुछ आशा रख सकता है, निरक्षर से नहीं। सच्चाई तो यह है कि जिस व्यक्ति का हृदय भाव-सरिता से भीगता नहीं, जिसका मस्तिष्क चेतना-सागर में गोते नहीं लगाता, वह अच्छा लेखक या कवि कभी नहीं बन सकता। शरत बाबू ऐसे व्यक्ति थे जो हर समय कुछ न कुछ पढ़ते रहते थे। उन्होंने प्राणी विज्ञान, जीव विज्ञान पाश्चात्य, भारतीय शास्त्रों आदि का गंभीरतापूर्वक अध्ययन किया था। अतः वह विभिन्न विषयों पर वाद-विवाद कर सकते थे। विद्वता की इसी लहर में डूबकर वह साहित्य की रचना करते थे और उसी से अपना जीवन-यापन करते थे। उनके विचार इतने परिपक्व होते थे कि किसी को काटने का साहस नहीं होता था। अपने इन्हीं विचारों के कारण वह विश्वप्रसिद्ध व्यक्ति माने गए। उनके साहित्य का विश्व की अनेक प्रसिद्ध भाषाओं में अनुवाद हुआ। जिसने उनके साहित्य को पढ़ा और मनन किया है, वह जानता है कि समाज और मनुष्य का जीवन क्या है? जीवन को किस सीमा तक जिया जा सकता है? ईश्वर ने इस जीवन को क्या केवल जीने के लिए बनाया है या किसी कार्य के लिए?

प्रभाकर जी ने उनके जीवन चरित में अनेक स्थलों पर उनकी जीवनी से संबंधित अनेक बातों को उद्धृत किया है। ये बातें विचारणीय हैं और इनका अध्ययन करके चरित नायक की उच्छृंखल प्रकृति पर कुछ सोचा-समझा जा सकता है। शरत बाबू के उपन्यासों में जो उनके विचार मिलते हैं, वे बड़े गंभीर और ठोस हैं। उनको मानकर चलने में आज भी सामाजिक कार्यकर्ता उँगली उठा सकते हैं। परंतु यदि वह शरत बाबू के समान दृढ़ निश्चय वाला व्यक्ति है तो वह पीछे न हटकर आगे ही बढ़ सकता है। इस अध्याय में हम उनके क्रांतिकारी विचारों का अध्ययन संक्षेप में करेंगे। सबसे पहली बात तो यह है कि शरत बाबू उदात्त, सर्वोत्कृष्ट और सर्वतोमुखी हिंदू धर्म के समर्थक थे, परंतु जब कभी वह हिंदू धर्म की रूढ़ियों और ढकोसलों को देखते थे तो वह उनका विरोध करने के लिए ताल ठोंक कर सामने आ जाते थे। इस कारण उनको विरोध का भी सामना करना पड़ता था। इसके बावजूद उन्होंने समाज में व्याप्त समस्याओं के विषय में अपने विचार स्पष्ट रूप से रखे।

“मैं अपनी रचना द्वारा मनुष्य की आत्मा का अपमान नहीं करना चाहता। पुरुष हो या स्त्री गिरकर उठने का रास्ता सबके लिए खुला होना चाहिए। हिंदुओं का समाज बड़ा निष्ठुर है। मुस्लिम समाज तुलनात्मक रूप से अच्छा है। ईसाई समाज उससे भी अच्छा है। मेरे ‘पल्ली समाज’ की रमा और रमेश को लीजिए। दोनों महाप्राण हैं दोनों में मंगल करने की अपार शक्ति है, पर दोनों के जीवन किस प्रकार नष्ट हो गए? इनका मिलन एक ‘रिलीजन यूनिटी’ नहीं हो पाया। ऐसा क्यों हुआ? क्या यह सोचना वर्जित है? इतने बड़े प्राण नष्ट हो गए। क्या किसी दूसरे समाज में ऐसा होता? मैं तो केवल चिंतन के मार्ग का संकेत देकर चुप हो जाता हूँ। आप लोग समस्या का समाधान करें। हम जो बाहर हैं उससे उलझ कर रह जाते हैं। आंतरिक भी तो है। प्रेम कितनी बड़ी वस्तु है। उसकी शक्ति कितनी अपार है।”

इस प्रकार शरत बाबू ने हिंदू समाज में प्रचलित सती-प्रथा का विरोध करने का क्रांतिकारी कदम उठाया। आश्चर्य की बात यह है कि उस समय बंगाल में कट्टरपंथी हिंदू पंथ और विचारधारा का आंदोलन बड़ी तेजी से चल रहा था। ऐसी स्थिति में बड़ी निडरता के साथ हिंदू धर्म के आडंबरों और कुरीतियों के विरुद्ध आवाज उठाना शरत जैसे दृढ़ निश्चयी और साहसी विचारक का ही काम था।

इस विषय में उन्होंने कहा—“मुझे यश की कामना बिल्कुल नहीं है। यदि मैं यश लोलुप होता तो इतने दिन, इतना

नोट

समय, इतने सहज भाव से नष्ट नहीं कर पाता।”

साहित्य के बारे में उन्होंने अपने विचार इस प्रकार प्रकट किए हैं—

“साहित्य का मूल ‘सहित’ से है, अर्थात् सब के सहित सहानुभूति रखना आवश्यक है। घर बैठे आराम कुर्सी पर पड़े रहकर साहित्य सृष्टि नहीं होती है। हाँ, नकल की जा सकती है। ये लोग करते क्या हैं कि पुस्तक के किसी एक कैरेक्टर को लेकर इसी में कुछ रद्दोबदल कर एक नवीन कैरेक्टर की सृष्टि कर डालते हैं। मानव क्या है? यह मानव को देखे बिना नहीं समझा जा सकता। अत्यंत कुत्सित गंदगी के भीतर भी मैंने इतनी मानवता देखी कि उसकी कल्पना नहीं की जा सकती। यह सारी अभिज्ञता मेरे मन में बनी रही। मेरी स्मरणशक्ति अच्छी है। जानने की इच्छा मेरी बराबर बनी रहती है। मानव के भीतर की सत्ता को जानना मेरा उद्देश्य है। जो तनिक फिसल गया उसे बिल्कुल फेंक दें, यह क्या बात है?”

“मूर्त रचना करना चाहने पर कल्पना से काम नहीं चलता, अपनी अभिज्ञता चाहिए। मेरी रचनाओं में युक्तियों का प्रयोग या समन्वयात्मक परिणाम अधिक हैं। रूप और स्वभाव का वर्णन प्रायः नहीं है।”

साहित्य भाषा के संबंध में भी उन्होंने बड़े क्रांतिकारी विचार रखे हैं—

“बहुत से लोग कहते हैं कि हमें प्लाट नहीं मिलते, इसलिए लिखते नहीं मैं अवाक् रह जाता हूँ। इतनी विशाल धरती पड़ी है, इतना वैचित्र्य है, और ये लोग प्लाट नहीं खोज पाते? इसका कारण है कि वे मानवता को नहीं खोजते अपनी कथा को लेकर व्यग्र रहते हैं। किससे लोगों का मनोरंजन हो, मैं यह नहीं करता। किसी भी पात्र का व्यक्तित्व मैं नष्ट नहीं होने देता। मैं भाषा अच्छी नहीं जानता। शब्दावली बहुत कम है, फिर भी वह लोगों को क्यों अच्छी लगती है? मैं नहीं जानता। जो कुछ कहना या समझना चाहता हूँ वही मन में रखता हूँ और इसके लिए बहुत परिश्रम करता हूँ। ‘वह’ और ‘उन’ का प्रयोग बहुत सावधानी से करना होता है। जो लोग कहते हैं कि जो लिखूँगा, वही उत्कृष्ट है, वे लोग भयंकर भूल करते हैं। मनुष्य की बातचीत की तरह लिखने में भी बहुत सी असंबद्ध बातें रहती हैं। इसलिए भूमिका लिखकर मुझे समझाना नहीं पड़ता। मेरी किसी पुस्तक में भूमिका नहीं है।”



टास्क शरत बाबू के क्रांतिकारी विचारों पर टिप्पणी कीजिए।

शरत बाबू का कथन था कि मनुष्य सामाजिक प्राणी होने के नाते समाज में होने वाले क्रिया-कलापों के पक्ष या विपक्ष में जब तक वह क्रांतिकारी कदम नहीं उठाएगा तब तक वह सफल नहीं हो सकता। उसके जीवन पर परोक्ष या अपरोक्ष प्रभाव पड़ता ही है। शरत बाबू जिस समय लिखते थे उस समय देश में राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन चल रहा था। अतः उन्होंने उसमें योगदान दिया। परंतु चूँकि वह लेखक थे। अतः उनकी राजनीति संबंधी धारणाएँ बड़े अनोखे ढंग की थीं। वह अपने हिसाब से सोचते थे।

शरत बाबू का राजनीतिक झुकाव सदा गरम दल की ओर रहा। लोकमान्य के प्रति उनकी सच्ची श्रद्धा थी। हरिलक्ष्मी में मंझली बहू शरमाते हुए, हँसते हुए कहती है, “तिलक महाराज की तस्वीर देख-देखकर बनाने की कोशिश की थी जीजी, पर बनी नहीं।” यह कहते हुए उसने उंगली उठाकर सामने की दीवार पर टँगे हुए भारत के कौस्तुभ्य लोकमान्य तिलक का चित्र दिखा दिया। उन्हीं तिलक का जब 31 जुलाई की आधी रात के बाद देहावसान हो गया तब व्याकुल शरतचन्द्र ने लिखा, “तिलक केवल मेरे भाई ही नहीं थे, बंधु ही नहीं थे, नेता ही नहीं थे। वह हम बाइस करोड़ लोगों के मलिन ललाट के, शुभ्र गौरवमय तिलक थे। वही तिलक आज मिट गया है। हम अनाथ हो गए हैं।”

शरत साहित्यकार थे और साहित्यकार प्रायः राजनीति के दल से दूर रहता है। परंतु वे मानते थे कि भारत की स्वतंत्रता के लिए जो आंदोलन गाँधी जी ने चलाया है वह केवल शुष्क राजनीति ही नहीं है, देश की मुक्ति राजनीति ही नहीं

नोट

है, देश की मुक्ति का व्रत है। जो देश की दासता को सह सकता है वह साहित्यिक नहीं है। उनके साहित्य में देश और मनुष्य का यही प्रेम परिष्कृत हुआ है। उसी देश और मनुष्य के प्रेम के कारण वह असहयोग आंदोलन से अलग नहीं रह सके। साहित्यिक मित्रों ने उनसे कहा, “आप तो साहित्यिक हैं आपका काम साहित्य चर्चा है राजनीति नहीं।” शरत ने उत्तर दिया, “यह आपकी भूल है। राजनीति में योग देना देशवासियों का कर्तव्य है। विशेषकर हमारे देश में यह राजनीतिक आंदोलन देश की मुक्ति का आंदोलन है। इस आंदोलन में साहित्यिकों को सब से आगे बढ़कर योग देना चाहिए। लोकमत जाग्रत करने का गुरुभार संसार के सभी देशों में साहित्यिकों के ऊपर रहा है। युग-युग में उन्होंने ही तो मनुष्य के मन में मुक्ति की आकांक्षा जगाई है। यदि आपकी बात मान भी लें। तो वकील, बैरिस्टर डॉक्टर और विद्यार्थी सभी यही तर्क उपस्थित करेंगे। तब राजनीति को कौन संभालेगा?”

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

8. शमशान के झोंपड़े में भूत रहता है, ऐसा लोगों का विश्वास था।
9. राजू एक परोपकारी, अदम्य साहसी और बात का धनी लड़का था।
10. हिरण्यमयी देवी एक शहरी और पढ़ी-लिखी स्त्री थी।

शरतचंद्र चाहते थे देश के आंदोलन में सभी वर्गों के लोग हिस्सा ले क्योंकि देश में सभी वर्ग रहते हैं। गाँधीजी के कहने पर महिलाएँ भी स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने के लिए मैदान में आईं तो उन्होंने बड़े सच्चे शब्द कहे—

“जिस चेष्टा में, जिस आयोजन में देश की नारियाँ सम्मिलित नहीं। उनकी सहानुभूति नहीं, उस सत्य की उपलब्धि करने का कोई ज्ञान, कोई शिक्षा, कोई साहस जिनको आज तक हमने नहीं दिया उनको केवल घर के भीतर बिठाकर केवल चर्चा कातने के लिए बाध्य करने पर कोई बड़ी वस्तु नहीं प्राप्त की जा सकेगी औरतों को हमने जो केवल औरत बना कर रखा हुआ है मनुष्य नहीं बनने दिया उसका प्रायश्चित्त स्वराज्य से पहले देश को ही करना चाहिए। अत्यंत स्वार्थ की खातिर जिस देश ने अब तक केवल उसके सतीत्व को ही बढ़ा करके देखा है, उसके मनुष्यत्व का कोई ख्याल, नहीं किया, उसे उसका देना पहले चुका देना होगा।”

देशबंधु के निवास स्थान पर एक दिन उन्होंने गाँधी जी से कहा था, “महात्मा जी आपने, असहयोग रूपी एक अभेद्य अस्त्र का आविष्कार किया है। अगर जनता सरकार से सहयोग न करे तो वह एक दिन में ही समाप्त हो जाए। तब हम एक वर्ष में नहीं चौबीस घंटे में ही स्वराज्य ले सकते हैं।”

इस प्रकार शरत बाबू एक निर्भीक और महान व्यक्ति थे। उस समय के क्रांतिकारी लोग शरत बाबू के साहित्य को पढ़कर अति प्रसन्न होते थे। वे लोग ‘पथेरदाबी’ (पथ के दावेदार) की बड़ी प्रशंसा करते थे। शरत बाबू ने कभी भी स्वार्थी पुरुष का समर्थन नहीं किया और न वह अवसरवादी पुरुष को अच्छा समझते थे। यदि उनमें मानवीय दुर्बलताएँ थीं तो अनेक ऊँचे गुण भी थे। वह सदा अन्याय का विरोध करने के लिए उठ खड़े होते थे। वह कहा करते थे कि गुलामी से बुरी चीज नहीं है और जो मनुष्य किसी को दास बनाता है वह बड़ा अन्यायी और नीच है। यही कारण था कि वह देश को अंग्रेजों के पंजों से मुक्त देखना चाहते थे। एक बार उन्होंने कहा था, “महिलाओं के साथ घोर-बर्बर और अमानुषिक अत्याचार देखकर भी तुम लोग नपुंसकों की तरह केवल मूकदर्शक बनकर रह गए। और उस पर तुम इस बात के लिए गर्व प्रदर्शित करते हो अहिंसा और संयम के सिद्धांतों की पूरी रक्षा हुई। चुल्लूभर पानी में डूब न मरे तुम लोग।”

उनके इन उदात्त विचारों के कारण लोगों ने उनका बड़ा सम्मान किया। लेकिन ‘चरित्रहीन’ जैसे उपन्यास के कारण लोगों ने उनको बुरा-भला भी कहा। परंतु शरत अपने उद्देश्य से जरा भी नहीं डिगे। वह हिमालय की तरह खड़े रहे। देखा जाए तो दृढ़ निश्चयी व्यक्ति कभी विचलित नहीं होता है और न वह टूटता है। हमारे सामने उदाहरण मौजूद

नोट

हैं, भगवान राम, श्रीकृष्ण, बुद्ध, ईसा, मुहम्मद, गाँधी आदि का। लोगों ने उन्हें भगवान, महामानव, पैगम्बर, महात्मा आदि कहा तो उनको बुरा भी कहा। किंतु ये सब महान् व्यक्ति महान ही बने रहे। शरत बाबू ने जीवन में तरह-तरह के कष्ट उठाए थे। लगता था जैसे प्रकृति ने उनको इसीलिए बनाया है। लेकिन शरत बाबू ऐसी मिट्टी के बने थे जिस पर दूसरा रंग चढ़ ही नहीं सकता था। उनमें बात को समझने और उसका मार्गान्तरीकरण करने की शक्ति थी। इसलिए वह अंत तक अपने मार्ग पर डटे रहे। उन्हें कोई डिगा नहीं सका।

4.5 सारांश (Summary)

- मनुष्य एक ऐसा प्राणी है जिसे समाज में रहकर पग-पग पर अनेकानेक बाधाओं और विरोधों का सामना करना पड़ता है। इसके बावजूद उसे जीवित रहना पड़ता है क्योंकि उसे प्रकृति ने जीवित रहने के लिए ही बनाया है।
- शरत एक भावुक और संवेदनशील व्यक्ति था। वह दूसरों के दुख को देखकर द्रवित हो जाता था। चूँकि वह साहित्यकार था इसलिए उसके पास किसी भी बात को समझने के लिए गहरी दृष्टि थी।
- शरत पशु, पक्षी और मानव सभी से अटूट प्रेम करता था। इसी विशिष्ट गुण के कारण शरत बाबू ने शास्त्री जी की कन्या को अपनी जीवन संगिनी बना लिया जबकि उस समय उनकी चित्तवृत्ति ग्रहस्थी बसाने की नहीं थी।
- शरत बाबू की बुद्धि बचपन से ही तीक्ष्ण थी। वह जिस व्यक्ति को एक बार देख लेते थे उसे कभी नहीं भूलते थे। वह व्यक्ति यदि वर्षों बाद भी उन्हें दिखाई दे जाता था तो वह बड़ी सहजता से उसका नाम पता बता दिया करते थे।
- परमात्मा ने मानव को मानव बने रहने के लिए बनाया है, दानव नहीं। इसलिए मनुष्य को मनुष्य से घृणा कभी नहीं करनी चाहिए। घृणा पाप को जन्म देती है और पाप से मनुष्य की प्रवृत्ति अपराधी बन जाती है।
- शरत बाबू को अपने देश से अटूट प्रेम था। वह देश सेवा के लिए बड़े से बड़ा कार्य भी छोड़ने के लिए तैयार हो जाते थे। वह राजनीति के क्षेत्र में लोगों को सक्रिय होने की प्रेरणा देते थे और चाहते थे कि भारत से दुष्ट और धूर्त अंग्रेजों के राज्य का हर दशा में अंत होना चाहिए।
- राजू एक ऐसा लड़का है जो शरत बाबू को एक नई दिशा प्रदान करता है। इससे प्रेरित होकर शरत बाबू एक दुःसाहसी लड़के से साहित्यकार और समाज सेवक बन गए। यदि राजू शरत बाबू के जीवन में नहीं आता तो शरत बाबू शायद साहित्यकार न बनकर कुछ और बन जाते।
- राजू के हृदय में निर्धन मित्रों के प्रति बड़ी दया का भाव रहता था। वह जब-तब निर्धन छात्रों की सहायता करता रहता था। उसने जीवन के हर क्षेत्र में शरत की सहायता की। शरत ने राजू से ही सीखा था कि दया क्यों आती है?
- शरत बाबू जिस स्त्री से प्रेम करते थे उसका नाम हिरण्यमयी देवी था। हिरण्यमयी देवी शरत बाबू की पत्नी थी लेकिन समाज की दृष्टि में शरत बाबू ने उसे अपनी जीवन संगिनी बना लिया था।
- हिरण्यमयी देवी एक सीधी-सादी और सरल हृदय स्त्री थी। वह शरत का बहुत सम्मान करती थी। वह हमेशा उसके कार्यों को प्राण-पण से पूर्ण करती थी। शरत बाबू को उसने कभी शिकायत का अवसर नहीं दिया।
- शरत बाबू एक निर्भीक और महान व्यक्ति थे। उस समय के क्रांतिकारी लोग शरत बाबू के साहित्य को पढ़कर अति प्रसन्न होते थे। शरत बाबू ने कभी भी स्वार्थी पुरुष का समर्थन नहीं किया और न वह अवसरवादी पुरुष को अच्छा समझते थे।

4.6 शब्दकोश (Keywords)

1. प्रतिबंध – पाबंदी

2. निकम्मा – कामचोर

नोट

- | | |
|------------------------|---------------------|
| 3. विद्रोही – बागी | 4. संध्या – शाम |
| 5. सांत्वना – तसल्ली | 6. निरंतर – लगातार |
| 7. जीवन-संगिनी – हमसफर | 8. अभिनंदन – स्वागत |
| 9. पराधीन – गुलाम | 10. शील – इज्जत। |

4.7 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. शरत के नटखट स्वभाव का वर्णन कीजिए।
2. शरतचंद्र की विद्रोही प्रकृति किन बातों से व्यक्त होती है?
3. राजू का चरित्र-चित्रण अपने शब्दों में कीजिए।
4. स्त्री जाति के प्रति शरत के मन में किस प्रकार की भावना थी?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

- | | | | |
|------------|------------|---------------|---------------|
| 1. साहित्य | 2. बदमाश | 3. पर्यवेक्षण | 4. पाण्डुलिपि |
| 5. (ग) | 6. (क) | 7. (ख) | 8. सत्य |
| 9. सत्य | 10. असत्य। | | |

4.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)



पुस्तकें आवारा मसीहा—विष्णु प्रभाकर, राजकमल एंड संस, दिल्ली।

नोट

इकाई-5: 'चीड़ों पर चाँदनी' : कथावस्तु एवं उद्देश्य

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

- 5.1 कथावस्तु का सार
- 5.2 ब्रेख्त और एक उदास नगर
- 5.3 रोती हुई मर्मेट का शहर
- 5.4 उत्तरी रोशनियों की ओर
- 5.5 सफेद रातें और हवा
- 5.6 लिदित्से : एक संस्मरण
- 5.7 बर्त राम्का : एक शाम
- 5.8 पेरिस : एक स्टिल लाइफ (एक रुका हुआ जीवन)
- 5.9 वियना
- 5.10 चीड़ों पर चाँदनी
- 5.11 देहरी के बाहर
- 5.12 काफ़का और चापेक
- 5.13 देहरी के भीतर चेखव का पत्र
- 5.14 उद्देश्य
- 5.15 मानवतावादी दृष्टिकोण से युक्त यात्रा-संस्मरण
- 5.16 सारांश (Summary)
- 5.17 शब्दकोश (Keywords)
- 5.18 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
- 5.19 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- 'चीड़ों पर चाँदनी' के संस्मरण को समझने में;
- यात्रा के दौरान अनेक स्थानों की सभ्यता को जानने में;

- संस्मरण में निहित निर्मल वर्मा के उद्देश्य की व्याख्या करने में;
- मानवतावादी दृष्टिकोण से युक्त यात्रा-संस्मरण पर टिप्पणी करने में।

नोट

प्रस्तावना (Introduction)

‘चीड़ों पर चाँदनी’ श्री निर्मल वर्मा के यात्रा संस्मरणों का संकलन है जिसमें उन्होंने प्राग, बर्लिन, कोपेनहेगन, आइसलैंड आदि स्थानों की यात्रा के अपने अनुभव एवं प्रतिक्रियाएँ व्यक्त की हैं। श्री निर्मल वर्मा मुख्य रूप से अपने उपन्यासों और कहानियों के माध्यम से जाने जाते हैं परन्तु उन्हें प्राच्य विद्या संस्थान और चेकोस्लोवाकिया लेखक संघ ने चेकोस्लोवाकिया आमंत्रित किया। वह वहाँ 7 वर्ष तक रहे, इस दौरान उन्होंने अनेक स्थानों की यात्रा भी की।

5.1 कथावस्तु का सार

‘चीड़ों पर चाँदनी’ एक सजग व्यक्ति की अपने वातावरण के प्रति सहज प्रतिक्रिया है। वहाँ वह अनेक व्यक्तियों से भी मिले और अनेक साहित्यकारों के व्यक्तित्व से प्रभावित हुए। उसका एक विस्तृत विवरण है ‘चीड़ों पर चाँदनी’ के संस्मरण। यात्रा की दृष्टि से देखा जाए तो ‘ब्रेख्त और एक उदास नगर’, ‘रोती हुई मर्मेट का शहर’, ‘उत्तरी रोशनियों की ओर’ तथा ‘सफेद रातें और हवा’ ही शुद्ध रूप में यात्रा संस्मरण हैं। शेष निबंध, संस्मरण, इन्टरव्यू तथा साहित्य का इतिहास विधाओं से संबंधित हैं। इन विविध विधाओं का सम्मिलित रूप ही है ‘चीड़ों पर चाँदनी’। अब हम प्रत्येक का उपखंड के आधार पर सार प्रस्तुत करेंगे।

5.2 ब्रेख्त और एक उदास नगर

लेखक प्राग के एक ‘होस्पोदा’ में बैठा था। ‘होस्पोदा’ शब्द को व्याख्यायित करते समय उसने कहा है कि न उसमें वह उच्चवर्गीय भद्रता है जो ‘बार’ में आती है और न आधुनिक युग का सस्ता छिछलापन जो ‘रेस्तराँ’ शब्द से जुड़ा है। ‘होस्पोदा’ की अपनी गरम स्निग्ध-सी आत्मीयता है जो संभवतः लंदन के ‘टेवर्न’ के अधिक निकट है। मालास्त्राना के होस्पोदा में बैठा लेखक अपने मित्र ‘थोर्गियेर’ के साथ बियर पी रहा था। थोर्गियेर का प्राग में यह अंतिम दिन था। वह एक घुमक्कड़ व्यक्ति था। मूलतः वह आइसलैंडी था। आइसलैंडी यायावर प्रकृति के होते हैं। अतः थोर्गियेर भी किसी स्थान पर एक साथ अधिक समय तक नहीं रह सकता था। वह हमेशा के लिए आइसलैंड जा रहा था। बियर पीते हुए अचानक उसने लेखक से पूछा—“तुम्हें कोई आपत्ति होगी, यदि तुम भी मेरे साथ आइसलैंड चलो।” उस रात वह बात आई गई हो गई परन्तु लेखक के मन में सुदूर उत्तर में समुद्र से घिरे इस अकेले देश को देखने की उत्सुकता अवश्य थी अतः वह मान गया। कुछ ही दिनों में वीजा आदि की औपचारिकताएँ पूरी करके वह प्राग-बर्लिन की इन्टरनेशनल ट्रेन में बैठ गए। मित्र उन्हें स्टेशन पर छोड़ने आये। लेखक को एक मित्र मारिया ने यह सुझाव दिया कि उसे यात्रा की डायरी लिखनी होगी। यात्रा के समय लेखक को तालस्ताय की प्रसिद्ध पंक्तियाँ याद आई कि “जब हम किसी सुदूर यात्रा पर जाते हैं—आधी यात्रा पर पीछे छूटे हुए शहर की स्मृतियाँ मंडराती हैं, केवल आधा फासला पार करने के बाद ही हम उस स्थान के बारे में सोच पाते हैं जहाँ हम जा रहे हैं।” लेखक के मन में भी प्राग की स्मृतियाँ छाई हुई थीं। उनकी यात्रा का पहला पड़ाव था बर्लिन में। उनका वास वहाँ एक रात से अधिक का नहीं था क्योंकि पूर्वी जर्मनी में ‘ट्रांसिट वीजा’ केवल चौबीस घंटे का ही मिलता है। इस अल्प समय में बर्लिन में क्या देखा जा सकता है? लेखक की धारणा थी कि कम से कम बर्गोमान म्यूजियम अवश्य देख लिया जाए। थोर्गियेर ने सूचना दी कि स्टेशन पर उसके मित्र मिलेंगे और उन्होंने ‘बर्लिन एन्सेम्बल’ थियेटर के टिकट लेकर रखे होंगे। लेखक की एक असें से इच्छा रही थी परन्तु वह इस प्रकार पूरी होगी, लेखक इसे चमत्कार ही मानता है। पूर्व जर्मनी से लेखक कई बार गुजरा परन्तु कभी उसका उतरने का मन नहीं हुआ। उसके मन में यह आशंका थी कि उतरते ही द्वितीय विश्वयुद्ध के अनुभव उसे घेर लेंगे। अतः लेखक जब भी किसी जर्मनी को देखता तो उसके भीतर फिजूल-सी बेमानी, बेचैनी भर जाती। लेखक ट्रेन में बैठा बाहर के दृश्यों को देख रहा

नोट

था। उसे आबादी के चिह्न नज़र आने लगे परंतु साथ ही कहीं सिर्फ मलबे और ईंटों के ढूँह, आधे टूटे हुए मकान और सूनी कंकाल-सी आँखों की खिड़कियाँ दिखाई दे जातीं। उन पर बमों और गोलियों के निशान अब भी वैसे ही हैं। बर्लिन पहुँचने पर उन्हें सूचना मिली कि आज ब्रेख्त का नाटक मंचित हो रहा है। ब्रेख्त बीसवीं शती के महान् नाटककार थे जो नात्सी सत्ता स्थापित होने पर जर्मनी से चले गये। उस रात उनका 'टेरर एंड मिजरी आफ थर्ड रायख' नामक नाटक दिखाया जा रहा था। बहुत प्रयास करने के बाद भी वह थियेटर में 15 मिनट देर से पहुँचे। जब प्रबंधकों को ज्ञात हुआ कि लेखक भारतीय है तो उन्होंने चुपचाप उन्हें अंदर प्रवेश करने की आज्ञा दे दी। फिर भी वे अपनी सीटों पर नहीं जा सके। एक महानुभाव उन्हें एक बाक्स की तरफ ले गये जहाँ पहले से एक महिला बैठी थी। बाद में पता चला कि ब्रेख्त की पत्नी हैलेन वेगेल थी। वही इस एन्सेम्बल की प्रधान निर्देशिका थीं।

ब्रेख्त के विषय में लेखक ने जानकारी देते हुए कहा है ब्रेख्त कम्युनिस्ट थे क्योंकि उनके लिए कम्युनिस्ट होने के मायने बहुत सहज थे— समकालीन होना। दूसरे शब्दों में, अपने निजी घरे के बाहर उन सब आवाजों का साक्षी होना जो बीसवीं सदी के अँधेरे से टकराती हुई हमारे पास आती हैं। इसी कारण लेखक को ब्रेख्त के नाटक देखते हुए लगा कि थियेटर की दीवार के परे कुछ आवाजें भटक रही हैं, दरवाजा खटखटा रही हैं और दर्शक, अभिनेता, समूचा मंच और ऑडिटोरियम एक अजीब दबाव के तले धँसने लगते हैं। सिर्फ एक उपाय है मुक्ति पाने का, व्यक्ति बाहर निकल आए और इन आवाजों का साक्षी हो सके।

थियेटर से बाहर निकलने पर उन्हें चिंता हुई कि होटल तलाश लिया जाए, परंतु थोर्गियेर विचित्र प्रकृति का जीव था, उसे चिंता नहीं थी। उसके विचार में ब्रेख्त के बाद बियर पीनी चाहिए। बहुत खोजने पर उन्हें एक रेस्तराँ में खाली जगह मिल पाई। लेखक ने कहा है कि आइसलैंडियों को दो चीजों से प्यार है—बीयर और अपनी भाषा। आइसलैंड की भाषा का एक शब्द है 'संबंध' जिसका वही अर्थ है जो हिंदी के 'संबंध' शब्द का है। जब उसने थोर्गियेर को यह बताया तो वह बड़ा प्रसन्न हुआ और इसी बात पर उन्होंने भारत-आइसलैंड मैत्री के प्रतीक 'संबंध' पर बियर का टोस्ट किया। देर रात तक वे वहाँ बैठकर बियर पीते रहे और उनके मित्र ने फोन पर ही होटल की व्यवस्था कर दी थी। वहाँ से उठने के समय तक थोर्गियेर के आइसलैंड मित्र लेखक से अनौपचारिक हो गए थे। यद्यपि आइसलैंड अत्यंत संकोची और शर्मिले होते हैं परंतु संभवतः उनके मन में यह भाव आता था कि एक भारतीय इतनी दूर हमारे देश जा रहा है, अतः सारा संकोच थोड़ी ही देर में समाप्त हो गया। मित्रों ने कहा कि वहाँ जाकर 'विलियन' से अवश्य मिलिएगा। लेक्सनेस विलियन आइसलैंड का नोबल पुरस्कार प्राप्त उपन्यासकार है। लेखक कहता है कि आइसलैंड के अलावा कोई दूसरा नहीं देखा जहाँ लोग इतने खुले मुक्त ढंग से अपने सबसे महान् लेखक के संबंध में बातचीत करते हों।

दूसरे दिन वे बर्लिन से पश्चिमी जर्मनी के बर्लिन जा रहे थे। जाते समय लेखक को शीतयुद्ध के प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई दिए। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद बर्लिन दो हिस्सों में बँट गया था। लोगों का आधा परिवार पूर्वी भाग में था और आधा पश्चिमी में। वहाँ के वासियों का परस्पर प्रेम तथा एक दूसरे के प्रति आकर्षण राजनीतिक दबावों की अवहेलना करता-सा प्रतीत होता था। फिर भी राजनीति धीरे-धीरे लोगों के दिल में घर करती जा रही थी। पश्चिमी बर्लिन में पूर्वी जर्मनी की व्यवस्था के प्रति कोई अवसर यदि प्राप्त होता तो लोग उस व्यवस्था की खिल्ली अवश्य उड़ाते। परंतु लेखक कहता है कौन सी सीमा पर जाकर कम्युनिज्म का विरोध फासिज्म का चेहरा अपना लेता है मुझे नहीं मालूम किंतु यह वह सीमा है जो पूर्वी जर्मनी को पश्चिमी जर्मनी से अलग करती है।



टास्क 'ब्रेख्त और एक उदास नगर' की लेखक ने किन शब्दों में व्याख्या की है?

5.3 रोती हुई मर्मेट का शहर

कोपेनहेगन पहुँचकर लेखक ने अनेक होटलों में पता किया परंतु किसी होटल में उन्हें रहने का स्थान नहीं मिला।

नोट

उन दिनों वहाँ सैलानी विद्यार्थी आए हुए थे जिस कारण भीड़ हो गई थी। अचानक थोर्गियर को उसका एक मित्र मिल गया एंगुई। वह उन्हें एक होटल में ले गया जहाँ उन्हें एक कमरा मिल गया। एंगुई ने बताया कि आप पूर्वी जर्मनी से आए हैं, अतः पासपोर्ट देखते ही प्रत्येक होटल वाला कमरा देने से इंकार कर देता था परंतु एंगुई ने अपने परिचय का लाभ उठाकर उन्हें कमरा दिला दिया। लेखक के मन में अचानक भाव आया कि शीतयुद्ध का प्रभाव जर्मनी में कितना अधिक है। प्राग का नाम लेते ही वहाँ के लोग चौंक जाते और आने वाले व्यक्ति को संदेह की दृष्टि से देखने लगते थे। दूसरे दिन लेखक सारे शहर में घूमा। कोपनहेगन में उसने पाया कि परंपरागत नैतिक रूढ़ियाँ अन्य यूरोपीय देशों की तुलना में बहुत कम हैं और इससे यह सिद्ध होता है कि बिना किसी कानून अथवा राज्य शक्ति का प्रयोग किए कैसे अप्राकृतिक, असामाजिक वृत्तियों का उन्मूलन किया जा सकता है। वहाँ अनेक युवक थे। पूछने पर पता चला कि ये सब नार्वे के छात्र हैं जो अपनी पुरानी परंपरा को निभाते हुए हर साल यहाँ आते थे और परीक्षा शुरू होने से एक दिन पूर्व अपने देश चले जाते थे। हर वर्ष वे एक नारा लेकर आते थे। इस साल उनका नारा था कि “रूसियों के पास यौन बम नहीं है तो हम क्यों रखें?” नार्वे जाति की रसिकता का बोध लेखक को हुआ। लेखक को पता चला कि नार्वे जाति की यह रसिकता एक निश्छल भोलेपन, सादगी और बहुत ही कोमल संवेदनशीलता का प्रतीक है, ऐसे गुण जो दुनियाभर के पहाड़ी लोगों में सहज ही मिल जाते हैं। लेखक थोर्गियर के साथ शहर घूम रहा था। वहाँ वे एक रेस्तराँ में पहुँचे, जहाँ एक विशेष कोने में आइसलैंड ही बैठते थे। कोपनहेगन में यदि किसी मित्र से मिलना हो तो वे लोग उसके घर न जाकर शाम को इसी कोने में आकर उसकी प्रतीक्षा करते थे। एक अजनबी व्यक्ति ने लेखक को बताया कि यदि वह आइसलैंड जा रहा है तो स्वयं को कम्युनिस्ट ही घोषित करे। आइसलैंड की कम्युनिस्टों से जितनी नफरत करते हैं, उससे ज्यादा उनकी इज्जत करते हैं। इसका कारण यह है कि आइसलैंड के सबसे ईमानदार राजनीतिज्ञ के रूप में वहाँ के कम्युनिस्ट नेता ‘ओल्फेयर ओल्फेयर सॉन’ प्रसिद्ध हैं। लेखक को आभास हुआ कि कम्युनिस्ट देशों के बाहर आइसलैंड ही एक ऐसा देश है जहाँ लोग कम्युनिस्ट विचारधारा से तीव्र मतभेद होते हुए भी कम्युनिस्ट नेता के प्रति गहरी निष्ठा और आस्था रखते हैं। वहीं लेखक को आइसलैंड और डेनमार्क के बीच राजनीतिक मतभेदों का भी पता चला।



क्या आप जानते हैं? आइसलैंड जब डेनमार्क का उपनिवेश था तो 13वीं-14वीं शताब्दी में आइसलैंड में अनेक श्रेष्ठ और महत्वपूर्ण साहित्यिक और ऐतिहासिक ग्रंथों की सर्जना हुई जिनमें ‘सागा ग्रंथों’ को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है।

‘सागा ग्रंथ’ शुद्ध धर्म निरपेक्ष संस्कृति के अनुरूप निरपेक्ष ईसाई दर्शन एवं चिंतन से बिल्कुल अछूते हैं। इस दृष्टि से उनकी तुलना यूनानी नाटकों से की जाती है। डेनमार्क के आधिपत्य में आने के बाद कोपनहेगन ही संस्कृति का केंद्र बन गया। अनेक आइसलैंड लेखकों ने सागा ग्रंथों की रचना कोपनहेगन में रहकर ही की। इन ग्रंथों की पाण्डुलिपियाँ आज डेनमार्क के संग्रहालयों तथा पुस्तकालयों में सुरक्षित हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आइसलैंड सरकार ने डेनमार्क से इन पाण्डुलिपियों को वापस लौटाने की माँग की जिसे आज तक स्वीकार नहीं किया गया। पाण्डुलिपियों का यह विवाद आज आइसलैंड का राष्ट्रीय प्रश्न बन गया है।

जब लेखक ने वहाँ अन्य लोगों से बात की तो उन्होंने कहा “हमें मालूम नहीं था कि डेनमार्क वाले हमारी संस्कृति से इतनी मुहब्बत करते हैं।” इस ज्वलंत प्रश्न पर इस प्रकार का फिकरा सुनकर लेखक दंग रह गया। बाद में उसे समझ आया कि यह आइसलैंड के लोगों की असाधारण आदत है कि जिस विषय पर वे बहुत संजीदा ढंग से सोचते हैं उसके बारे में उनकी ही विरल और व्यंग्यात्मक रूप से बात करते हैं। उसकी तुलना में भारतीय प्रत्येक प्रश्न पर गंभीर होने का ढोंग करते हैं। काफी रात तक उस रेस्तराँ में बिताकर वे अपने कमरे में आये। अभी डेनमार्क में उनकी पहली ही रात थी परंतु उन्हें ऐसा लग रहा था कि वे कई दिनों से वहाँ रह रहे हैं। होटल के पैसे बचाने के लिए वे जहाज के केबिन में रहने का विचार बनाकर चले। जहाज पर एक दिन से पहले पहुँचना नियम-विरुद्ध था परंतु जब जहाज के कप्तान को लेखक के भारतीय होने की सूचना मिली तो उन्होंने आदरपूर्वक अपने केबिन में रहने

नोट

का स्थान दे दिया। दिन भर लेखक म्यूजियम तथा आर्ट गैलरी में घूमता और रात को जहाज के केबिन में आकर विश्राम करता। जहाज का नाम गुलफॉस (स्वर्ण प्रपात) था। जब वह चलने लगा तो लेखक के मन में यह लालसा उपजी कि चुपचाप केबिन में जाकर सो जाए और जब जहाज बीच समुद्र में पहुँच जाए तो बाहर निकले। जहाज में उनके पहले दो तीन दिन बहुत अच्छे बीते, फिर यात्रियों को सी-सिकनेस ने घेर लिया जिसे लेखक ने एक नया नाम दिया था मृत्यु-शय्या। आइसलैंडी लोगों को पढ़ने का चाव बहुत है। उनके मित्र एंगुई ने भी इसका समर्थन करते हुए कहा—“दिन भर स्टीमशिप कम्पनी में काम करता हूँ, शाम बकेट को पढ़ता हूँ, बड़ी सात्वना मिलती है।” इसी तरह बातें करते हुए उनके तीन दिन बीत गए।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. थोर्गियेर घुमक्कड़ प्रकृति का था।
2. ब्रेख्त बीसवीं शती के महान थे।
3. ब्रेख्त की पत्नी हैलेन वेगेल, ऐन्सेम्बल की प्रधान थीं।
4. कोपनहेगन में परम्परागत नैतिक रूढ़ियाँ अन्य देशों की तुलना में बहुत कम हैं।

5.4 उत्तरी रोशनियों की ओर

चारों ओर अंतहीन समुद्र का पानी। उनका काम था कंबलों में सिकुड़े बण्डलों की तरह लेटे रहना, खाना खाना और सो जाना। जहाज के साथ-साथ समुद्री पक्षी उड़ रहे थे। किचन से जब बेकार बचा हुआ खाना बाहर समुद्र में फेंका जाता तो वे उसे खा लेते फिर उस प्रतीक्षा में उड़ते रहते कि फिर कब खाना मिलेगा। जहाज के डेक पर सर्दी बहुत थी फिर भी लेखक वहीं रहना अधिक श्रेयस्कर मानता था।

समुद्र का यह नशा और उल्लास ज्यादा दिन तक नहीं रह पाया। अचानक जहाज को प्रागैतिहासिक काल की बनैली आदिम लहरों ने लपेट लिया। ऐसा होता था जैसे कोई अदृश्य दानव ‘गुलफॉस’ को एक नन्हे से खिलौने के समान ऊपर नीचे उछाल रहा था। धीरे-धीरे सभी लोग ‘मृत्यु-शय्या’ से ग्रस्त हो गये। लीथ की बंदरगाह पहुँचते ही यात्रियों के तीन दल बन गए—

1. वे यात्री जिनके लिए समुद्र का होना न होना बराबर था। वे अक्सर आराम से अपने बिस्तर पर सोते रहते या ‘बार’ में जाकर बियर पीते।
2. डैकवासी केबिन में जाते ही जिनका सिर चकराने लगता। रात दिन कड़कड़ाती सर्दी में भी वे डेक पर ही रहना पसंद करते क्योंकि वहाँ ताजी हवा आती थी।
3. मृत्यु शय्यावासी, जो डैक के कष्टों से घबराकर अपने गरम बिस्तरों में सोने का मोह संवरण नहीं कर सके और वहीं के होकर रह गए।

तीसरे दिन जब जहाज लीथ की बंदरगाह पहुँचा तो पृथ्वी पर पैर रखकर अजीब-सा सुखद अनुभव हुआ। उतरते ही लेखक स्कॉटलैंड के शहर एडिनबरा गए। स्कॉट जाति के विषय में लेखक ने कहा है—जीने और मरने की भूखी हठीली चाह, हर अन्याय के विरुद्ध सुलगता विद्रोह, दूर पहाड़ियों की पुकार और शहरी पबों की पियक्कड़ चीखें, यह सब था एडिनबरा की गलियों में। समय सीमित था अतः लेखक को फोर्ट और आर्ट गैलरी देखने में से एक का चुनाव करना पड़ा। वहाँ ‘तितितियान’ के चित्र देखे। उन्हें देखकर लेखक को ऐसे लगा कि जैसे मानव आत्मा अपने सब बंधनों को तोड़कर सुनहरे असीम आलोक के ज्वलंत रंगों में फैल गई हो। पृथ्वी का संस्पर्श पाकर सभी यात्रियों में मानो पुनः जीवन आ गया हो। उस रात सभी आपस में घुलमिल गये।

नोट

जहाज अटलाण्टिक सागर के बीच में आ गया था। जितना ही अधिक वह उत्तर की ओर सरकता जाता रातें ज्यादा सफेद होती जाती थीं। रात और दिन की सीमा रेखा दिन पर दिन धुँधली होती जा रही थी। जहाज में स्कॉटलैंड से अनेक यात्री चढ़े थे। उनमें से एक था बर्ट जो डॉ॰ राधाकृष्णन की ‘दि हिंदू व्यू आफ लाईफ’ पढ़ रहा था। उसने लेखक को बताया कि उसे भारत से बहुत प्यार है। उसे भारत बहुत अच्छा और आकर्षक प्रतीत होता है। वह सोचता था कि आज के संकट का हल भारत में अवश्य मिल जाएगा।

समुद्र के छोर पर क्षितिज के संग-संग एक बहुत ही हल्की, मटमैली-सी रेखा दिखाई दी, यह आइसलैंड का पहला ग्लेशियर था। कुछ ही देर बाद दूसरा ग्लेशियर दिखाई दिया। सबके चेहरों पर अजीब-सी चमक और ताजगी आ गई। सारी थकावट, अकुलाहट, अकेलापन, उनींदापन दूर हो गया। अब सबको एक आशा थी कि आइसलैंड अब दूर नहीं है। हवा का वेग भी एकदम कम हो गया था। उस रात सूर्योदय बिल्कुल अचानक हो गया। रिक्याविक के आउट हार्बर में पहुँचते ही हल्की-हल्की बारिश होने लगी थी। सभी कोई एक दूसरे से मिल रहे थे। नोटबुकों में पते नोट कर रहे थे। दूर सुबह की धुँध के ऊपर रिक्याविक की लाल, नीली, हरी छतें दिखाई देती थीं। लगता था कि यह शहर दुनिया के एक छोर पर बसा हुआ है, इसके आगे कुछ नहीं है। थोर्गियेर ने उँगली से अपना घर दिखाया—नेशनल थियेटर के पास। वे जहाज से उतर कर शहर में आ गये।

5.5 सफेद रातें और हवा

आइसलैंड की राजधानी का नाम है रिक्याविक (धुएँ का शहर)। नार्वे से जब पहले पहल ‘वाइकिंग्स’ यहाँ आए तो गरम पानी के झरनों से उठते हुए धुएँ को देखकर उन्होंने शहर का नामकरण किया था। लेकिन इस शहर का धुएँ से कोई संबंध नहीं था। इस शहर के निवासी कोयले का प्रयोग नहीं करते। गरम पानी के झरनों से समूचे शहर को बिजली बैठे बिठाए मिल जाती थी। आइसलैंड में बर्फ भी इतनी अधिक नहीं पड़ती थी, बल्कि वहाँ हरियाली थी। इसलिए लेखक के मन में आया कि आइसलैंड का नाम बदलकर ग्रीनलैंड और ग्रीनलैंड का नाम आइसलैंड रखना चाहिए। संस्मरण लिखते समय लेखक याद कर रहा है—समुद्र की लहरों से घुलता शहर, बासी खट्टी गंध से घिरे बंदरगाह, एक पहाड़ी कस्बा जो मध्यरात्री के जामुनी आलोक में सोया पड़ा है पर इन सब से अधिक याद आती है रिक्याविक की हवा। वहाँ के लोग लंबे और सुंदर हैं, भारतीय उनके सामने बौने प्रतीत होते हैं किंतु स्वभाव से वे अत्यंत विनम्र, शालीन और चुपे थे। पिछले हजारों वर्षों से जो देश आसपास की दुनिया से अलग सिर्फ ग्लेशियर और ज्वालामुखी पर्वत से घिरा हुआ है उसकी वीरानी और खामोशी की छाया यदि वहाँ के निवासियों में चुप्पी बनकर आए तो कोई आश्चर्य नहीं। आइसलैंड की स्त्रियाँ संसार की सभी देशों की स्त्रियों से अधिक उन्मुक्त, स्वतंत्र एवं निर्द्वन्द्व हैं। निपट, ग्रंथिहीन, कुण्ठारहित। वहाँ नैतिकता जीवन पर थोपी नहीं गई अपितु वह जीवन क्रिया का अदृश्य अंग है।



क्या आप जानते हैं? आइसलैंड यूरोप में अकेला देश है जिसकी अपनी कोई सेना नहीं। इस देश की जनसंख्या 1962 में एक लाख सत्तर हजार थी जो दिल्ली के करोल बाग में रहने वाले लोगों का एक चौथाई है। उनके लिए सेना और सैनिक अनुशासन हास्यास्पद-सा प्रतीत होता है।

लेखक के एक आइसलैंडी मित्र ने बताया कि पिछले तीस या चालीस वर्षों में चोरी या डाके जैसी घटना नहीं हुई। किसी व्यक्ति की हत्या तो प्रागैतिहासिक चीज बन गई है। इसका कारण उन्होंने बताया आइसलैंड की आबादी। इस देश की आबादी इतनी कम है कि मुश्किल से कोई ऐसा व्यक्ति मिलेगा जो दूसरे को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से न जानता हो। उनके बीच कोई पुराना रिश्ता आसानी से निकाला जा सकता है। ऐसी एक स्थिति में बैंक में डाका डालना हो तो परिचितों से ही धन छीनना पड़ेगा। यह दुविधापूर्ण स्थिति चोर डाकुओं के लिए ही नहीं वहाँ के निवासियों को भी झेलनी पड़ती है। यहाँ शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति हो जिसके जीवन की छोटी से छोटी तफसील से दूसरा

व्यक्ति परिचित न हो। ज्यादातर इन व्यक्तिगत भेदों को लोग घरेलू राज की भाँति अपने तक ही सीमित रखते हैं। दिलचस्पी इससे आगे नहीं जाती। एक दूसरे की जिंदगी में कोई दखल नहीं देता।

दूसरे दिन लेखक आइसलैंड के तीर्थस्थान 'थिंगविलियर' देखने गए। इसका संबंध धर्म से नहीं है। इसका अर्थ है प्रथम लोकतंत्र। वहाँ अब उजाड़ जमीन पड़ी है फिर भी रिक्वाविक वालों का इस स्थान के प्रति बहुत आदर है। फिर वे गर्म झरनों को देखने गये। वहाँ पर लावा उगलने वाले ज्वालामुखी थे परंतु प्रतीक्षा करने पर भी उस समय उसमें विस्फोट नहीं हुआ। हवीता नदी के बाद रास्ता ऊबड़-खाबड़ हो गया था, अतः कई स्थान पर उन्हें उतरकर बस को धक्का लगाना पड़ा। वहाँ का मौसम ऐसा था कि अचानक बारिश हो जाती थी और फिर धूप निकल आती थी। उसी सुनसान स्थान पर एक झोंपड़ीनुमा सुंदर मकान था जहाँ आइसलैंडी लेखक हॉलदार विलियन लैक्सनेस रहते थे। आइसलैंड को वास्तुकला से कोई ज्यादा दिलचस्पी नहीं थी क्योंकि वहाँ कोई पुराना किला या ऐतिहासिक स्मारक नहीं था। उसके स्थान पर वहाँ मूर्तिकला के प्रति अत्यंत लगाव था। सीमित साधनों और भौगोलिक अलगाव के बावजूद भी मूर्तिकला के प्रति लगाव विस्मयकारी था। वे दूसरे दिन आइसलैंड के प्रमुख मूर्तिकार आस्मुन्दुर स्वेनसॉन से मिलने गए उन्होंने लेखक को अपनी कई नई मूर्तियाँ दिखाईं। वे आधुनिक युग के मूर्तिकारों के समकक्ष ही बैठते थे। आइसलैंड में पुस्तकों की अत्यधिक माँग थी। रिक्वाविक की आबादी 75000 है परंतु वहाँ अनेक पत्रिकाएँ छपती हैं। वहाँ लिखे हुए शब्द से प्यार किया जाता है। किसी के घर जाओ तो वह व्यक्ति खाना खिलाने के बाद यह अवश्य पूछता है कि आप कौन-सा सागा सुनना पसंद करेंगे? आइसलैंड में संस्कृति का अर्थ है 'लोक-संस्कृति'। किसी भी समय वह किसी वर्ग विशेष की संपत्ति नहीं रही। इस प्रकार लेखक धूप में लेटकर ताजी हवा में साँस लेता हुआ रिक्वाविक में अपने दिन बिता रहा था।

5.6 लिदित्से : एक संस्मरण

लेखक सात वर्षों तक प्राग में रहा। अतः चेकोस्लोवाकिया के एक छोटे से गाँव लिदित्से की जो दुर्गति द्वितीय विश्वयुद्ध में हुई उसके संस्मरण लिख रहा है। बचपन में उसने पढ़ा था 'लिदित्से विल लिव'। स्थान जानने की इच्छा से उसने एटलस उठाई परंतु लिदित्से उसमें न मिला। प्राग में वह अनेक देशों के युवकों के साथ आमंत्रित थे तथा दर्शनीय स्थल देख रहे थे। प्रत्येक ऐतिहासिक स्थल दिखाते समय डॉ० फ्रीड उसके विषय में कुछ अवश्य बताते परंतु लिदित्से की दुखद घटनाओं को वे भी वर्णित न कर सके। लिदित्से फैक्टरी मजदूरों का गाँव था जो प्राग से बीस पच्चीस मील के फासले पर होगा। कुछ दिन पहले एक बड़े जर्मन अफसर को किसी ने गोली मार दी। चारों ओर तनाव और आतंक का वातावरण छा गया। चेकोस्लोवाकिया के हर शहर में हत्यारे को पकड़ने के लिए इश्तेहार छापे गए किंतु बहुत छानबीन के बाद भी फासिस्ट हत्या के संबंध में कोई सुराग नहीं मिला। धीरे-धीरे यह संदेह पक्का हो गया कि हत्यारा लिदित्से में ही छिपा है। बच्चे से लेकर बूढ़े तक से पूछा गया परंतु किसी ने कुछ नहीं बताया। जर्मन हाईकमान ने एक घोषणा पत्र जारी किया कि "आने वाली पीढ़ियाँ कभी नहीं जानेंगी कि इस धरती पर किसी ऐसे गाँव का अस्तित्व था जिसने जर्मन राज्य के शत्रु को आश्रय दिया था।" 10 जून 1942 को प्राग से मिलिटरी ट्रकें लिदित्से आईं, देखते-देखते सारा गाँव आग की लपटों में घिर गया और एक भी निवासी नहीं बचा। आज भी लोग वहाँ टूटी दीवार का मलबा, जली हुई ईंटों का ढेर, सूने खामोश पत्थर, प्राइमरी स्कूल की जली हुई इमारत देख पाते हैं। सूने गिरजे का कोर्टयार्ड, वहाँ सामूहिक कब्रें। उस गाँव में कोई भी साबुत इमारत नहीं है। म्यूजियम में उन लोगों के पासपोर्ट रखे हैं, बच्चों की अधजली गुड़िया, शराब की बोतलें, शेव का सामान आदि रखा है। यही लिदित्से की कहानी है। म्यूजियम की विजिटर बुक में लेखक हस्ताक्षर करके उदास मन से बाहर आ गया। लेखक विचारमग्न हो गया कि भारतीय यद्यपि इस दुर्घटना से अछूते रहे परंतु कोई सहृदय मानव इस दृश्य को देखकर भावुक हुए बिना नहीं रह सकता। युद्ध की विभीषिका प्रत्येक व्यक्ति को अपने भीतर खींच लेती है। अभी तक लेखक स्वयं को बाहर का आदमी महसूस करता था परंतु आज वही फासिज्म का रूप लेखक की आत्मा में गहरे बैठ गया है। अब अपने लिए आउट साइडर शब्द बेमानी लगने लगा। उसे लगा जैसे टूटी हुई दीवारों के मलबे के

नीचे हम सब की आत्मा का एक अंश दब गया है, क्योंकि जिस सदी में हम जीते हैं, हममें से हर व्यक्ति उसका गवाह है और गवाह होने के नाते जवाबदेह भी।

नोट



टास्क द्वितीय विश्वयुद्ध में लिदितसे गांव की क्या दुर्गति हुई?

5.7 बर्त राम्का : एक शाम

प्राग का एक कोना माला-स्त्राना (लिटिल क्वार्टर) शहर से जरा अलग है। वल्तावा नदी के दूसरी ओर, छोटी-सी पहाड़ी तले सिमटा है। पहाड़ी पर जरा पीछे ‘लारेंटों चेपल’ सताईस घण्टियों का बारोक चर्च है। रात के नीरव वातावरण में जब ये घंटियाँ बोलती हैं तो बड़ा विचित्र मायावी संगीत रिसने लगता है। लेखक अपने अन्य मित्रों के साथ स्थानीय महत्त्वपूर्ण स्थल देखने जा रहा था। एक अँधेरी-सी गली में छोटा सा नाला पार करके वे सूनी, सुनसान सड़क पर आ गये। बाँयी ओर ‘पेत्रशिन’ की पहाड़ी पर निरीक्षण बुर्ज का लाल सितारा तिमिराच्छन्न आकाश में चुपचाप चमक रहा था। अगली कतार वाले व्यक्ति सीधी सड़क की ओर मुड़ गये और किसी ने सूचना दी यह है ‘बर्त राम्का प्रसिद्ध संगीतज्ञ मोत्सार्ट का निवास स्थान।’ अंदर से एक अधेड़ व्यक्ति निकले जो अब इस घर ‘म्यूजियम’ की देखरेख करते थे, आये और इनका स्वागत करते हुए अंदर ले गये। मोत्सार्ट यद्यपि वियना निवासी थे परंतु उन्हें प्राग से बहुत प्यार था। वे अक्सर कहा करते थे प्राग के लोग जितना अधिक उन्हें समझते थे, शायद उतना कहीं और नहीं। इस घर में एक खिड़की थी। उसके साथ एक अजीब सी घटना जुड़ी हुई थी।

इन दिनों मोत्सार्ट का प्रसिद्ध आपेरा ‘डान-जुआन’ प्राग में प्रस्तुत किया जाने वाला था। सब तैयारी हो चुकी थी। अंतिम रिहर्सल सफलतापूर्वक समाप्त हो गया था। शहर में चारों ओर पोस्टर लग गये थे। प्राग वासियों का यह सौभाग्य था कि ‘डान-जुआन’ का प्रथम उद्घाटन वियना में नहीं प्राग में होने जा रहा था किंतु आपेरा का निर्देशक बहुत परेशान था। उसके बहुत आग्रह अनुनय के बावजूद मोत्सार्ट ने अभी तक अपने आपेरा का पूर्वरंग नहीं लिखा था। वे हमेशा उसे कल पर टाल देते। हताश होकर एक रात उनके मित्रों ने उन्हें इस कमरे में बंद कर दिया और बाहर दरवाजे पर ताला लगा दिया। उन्हें साफ-साफ कह दिया गया था कि जब तक वे पूर्वरंग नहीं लिखेंगे दरवाजा नहीं खुलेगा। रातभर उनके मित्र कमरे के बाहर चिंतामग्न घूमते रहे। उन्हें मालूम था कि जब तक कमरे की बत्ती जलती रहेगी, मोत्सार्ट लिखते रहेंगे, कहते हैं रस्सी पर भोजन की पोटली और शराब की बोतल उन्हें इसी खिड़की से भीतर भिजवाई गई थी।

मोत्सार्ट प्राग वासियों में इतने लोकप्रिय थे कि उनकी मृत्यु का संवाद सुनकर हजारों निवासी यहाँ जमा हो गये किंतु वियना में उनकी अर्धी के साथ उनके इने-गिने मित्र ही गये थे। एक साधारण से कब्रिस्तान में उन्हें दफना दिया गया था। इस मकान में आगे एक हाल था जहाँ कन्सर्ट हुआ करता था। समर स्कूल के छात्रों के लिए विशेष रूप से कन्सर्ट की व्यवस्था की गई थी। चेक फिलोहार्मोनिक आर्केस्ट्रा के कुछ सदस्य वहाँ स्वयं मौजूद थे। तीन अलग-अलग संगीत अंश-यानाचेक, द्वोर्शाक और सबसे अंत में मोत्सार्ट। इन संगीत रचनाओं को सुनकर लेखक भावविभोर हो उठा।

5.8 पेरिस : एक स्टिल लाइफ (एक रुका हुआ जीवन)

फ्राँस में लेखक अपने मित्र दुबुआ के साथ रहता था। एक दिन दुबुआ सुबह बाहर जाते समय दरवाजे पर अनजाने में कुंडा लगा गया। अब लेखक सारा दिन उस कमरे में बंद हो गया। उस दिन उसे टार्चर चेम्बर की यातना का अनुभव हुआ। उसे अपनी स्थिति बारबूस के उस ‘इन-साइडर’ सी लगी जो दिनभर अपनी कोठरी में बंद रहकर सिर्फ

नोट

दरवाजे के की-होल से बाहर झाँका करता था। शाम को जब दुबुआ लौटे और पहली स्पेस यात्रा की खुशी में नाचने लगे। रूस के यात्री यूरी गैगरीन प्रथम बार अंतरिक्ष गये थे। इसलिए वह प्रसन्न थे और एक अच्छे से होटल में जाकर उन्होंने शोप्पेन पी। लेखक ने एक संस्मरण का हवाला देते हुए कहा कि किसी से पूछा गया कि फर्ज करो अणुयुद्ध में तुम्हें किसी शहर को बचाने के लिए कहें तो किसे बचाओगे? उसने बिना सोचे उत्तर दिया पेरिस, क्योंकि यदि यह जीवित रहता है तो मानव संस्कृति को अणुबम के बाद भी पुनः जीवित होने में अधिक समय नहीं लगेगा। पेरिस में एक चीज सबसे पहले आकर्षित करती है और वह है यहाँ के रंग। उन्होंने अपने घूमे हुए स्थानों की एक-एक चीज इस प्रकार बताई रिव्याविक की हवा, प्राग के पुल, वियना के बाग और पेरिस के रंग। लेखक एक दिन अकेला ही पेरिस देखने निकल पड़ा। सेन नदी के किनारे हेनरी चतुर्थ की मूर्ति, पुल पार करने पर पेरिस का मौन द्वीप, पैलेस आफ जस्टिस की विशाल इमारत जिसमें मारी आन्तेय नेत बंदी थी। घर आकर अपने मित्र के साथ बैठा शराब पीता रहा और संगीत सुनता रहा। पेरिस से टाल्सताय भी प्यार करते थे। वह भी अंतिम समय में सेन नदी के किनारे जाकर अंतिम उपन्यास लिखना चाहते थे। लेखक ने फ्रेंच लोगों के विषय में कहा है कि वे अपने में निलिप्त बिल्कुल उदासीन होते हैं, वे एक संग बहुत रसज्ञ और रूखे होते हैं। लेखक को हमेशा यह दुख रहेगा कि वह पेरिस कम समय ही रह सका।



टास्क लेखक ने पेरिस की विशेषताओं की व्याख्या किन शब्दों में की है?

5.9 वियना

लेखक वियना के कार्ल सकिर्चे के चर्च में बैठा रहा, जहाँ जाने कितनी सदियों का मौन जमा था। चर्च खाली था। एक बूढ़ी स्त्री मोमबत्ती के आगे बैठी थी। चर्च से बाहर आने पर सबकुछ चमकीला-सा दिखने लगा। आज छुट्टी का दिन था। वियना निवासी पार्क में कुर्सियाँ डाले धूप सेंक रहे थे। लेखक वहाँ यूथ फेस्टीवल में गया था, अतः दिनभर सेमिनार होते थे और रात को संगीत और नाच गाना। अनेक देशों के युवक-युवतियाँ वहाँ एकत्रित थे। चारों तरफ मित्रता का वातावरण था। उस रात लेखक के मन में वियना से संबंधित स्मृतियाँ जगने लगीं जिनमें चलते हुए मोत्सार्ट का संगीत, आर्थर श्लीजर की कहानियाँ साकार हो उठीं। इस सौहार्द्रपूर्ण वातावरण को देखकर लेखक को लगा कि लड़ाई खत्म होने के बाद पहली बार ऐसा लगा कि शीतयुद्ध की वर्षा धीरे-धीरे पिघलने लगी है।

5.10 चीड़ों पर चाँदनी

लेखक शिमला में अपने निवास का स्मरण करता हुआ कह रहा है कि बचपन में हम एक प्रश्न किया करते थे—“इन पहाड़ों के पीछे क्या होगा?” आज पता चला चाहे स्विटजरलैंड हो या शिमला सब के पहाड़ लगभग एक जैसे हैं। रात को सोते समय आकाश साफ होता था, सुबह उठने पर चारों ओर घनी वर्षा छाई होती थी, सभी कुछ बर्फ से ढक जाता। उसी प्रकार अप्रैल की रातों में फीकी-सी चाँदनी चारों ओर फैल जाती। खिलनमर्ग की हिमाच्छादित चोटियों पर चाँदनी के छुईमुई से झिलमिलाने कण ऊपर से नीचे तक बर्फ पर फिसल रहे थे। सबकुछ एक दूसरे में चुपचाप सिमट आया था। लगता था जैसे सफेद संगमरमर के चूरे की हल्की-हल्की बारिश हो रही है। बादल, बर्फ, चाँदनी, तीनों के अलग-अलग रंग थे, अलग-अलग लय थी। उस क्षण उसे लगा मानो किसी मायावी संगीत के चमकीले सुरों ने समस्त वन्य स्थल को अपने स्वप्निल, निष्पंद पंखों के भीतर समेट लिया हो। पहाड़ों पर अद्भुत मायाजाल लेखक ने पहली बार देखा था। यही सौंदर्य उन्हें आखू की पहाड़ी पर दिखाई दिया। उन्हें लगा पहाड़ों में भी साँप की आँख जैसा एक अविस्मृत, जादुई सम्मोहन होता है। एक भुतैला-सा सौंदर्य जो एक साथ हमें आतंकित और आकर्षित करता है। यही सौंदर्य उन्होंने नैनीताल की झील में भी देखा। सुबह, दोपहर, शाम के पल दिन बदलते

नोट

रंगों के संग झील अपना आवरण उतारती है निरावृत होकर स्तब्ध भाव से चारों ओर झाँकती है और फिर सबकी आँख बचाकर धीरे से चुपचाप नया रंग ओढ़ लेती है। दोपहर की उनींदी खाड़ी में ताम्रवर्णी जल ठहर जाता है। झील के भी अनेक चेहरे होते हैं या चेहरा एक होता है परंतु भंगिमाएँ अनेक होती हैं। रात होने पर झील के दो चेहरे हो जाते हैं, एक हँसता हुआ दूसरा सोया था। पानी बँट जाता है आधा जल गहरा हरा, आधा सफेद जैसे किसी ने चूने का चिट्ठा चूरा पानी में घोल दिया हो।

5.11 देहरी के बाहर

लेक्सनेस : एक इंटरव्यू

आइसलैंड के रिक्याविक नगर में रहने वाले नोबल पुरस्कार विजेता महान् उपन्यासकार हॉलदार विलियन लेक्सनेस से मिलने की इच्छा लेखक की बर्लिन से ही थी। जब वे आइसलैंड पहुँचे तो लेक्सनेस का इंटरव्यू लेने का मोह संवरण न कर पाये। लेक्सनेस का व्यक्तित्व बहुत ही गैर रोमांटिक और नार्मल था। शायद वह हमारे युग के सबसे नार्मल साहित्यकार हैं। लेखक ने उनसे पूछा कि क्या उनकी रचनाओं पर सागा ग्रंथों का प्रभाव है? उन्होंने स्वीकार किया कि आइसलैंड का शायद ही कोई ऐसा लेखक हो जो इन महान् कृतियों से स्वयं को असंपृक्त रख पाये। उनके उपन्यास ‘हैपी वरियर्स’ पर सागा ग्रंथों का गहरा प्रभाव है। उन्होंने यह स्वीकार नहीं किया कि भौगोलिक स्थिति से अलग होने पर भी आइसलैंड यूरोपीय प्रभाव से अछूता हो। सत्रहवीं शताब्दी से पहले इंग्लैंड, फ्रांस और मध्य युग में जर्मनी के सांस्कृतिक और धार्मिक आंदोलन का आइसलैंड की जीवनधारा पर गहरा प्रभाव पड़ा। लेकिन हजारों साल डेनमार्क के आधिपत्य में रहने के बाद भी डेनिश साहित्य या संस्कृति का गहरा प्रभाव नहीं पड़ा। उन्होंने एक प्रश्न के उत्तर में कहा कि उन्हें अकेलेपन या अलगाव की स्थिति ने कभी प्रभावित नहीं किया। लेखक ने सत्री को उद्धृत करके कहा कि आज के युग में कोई भी प्रतिगामी लेखक महान् साहित्य की रचना नहीं कर सकता। लेक्सनेस इस मत से सहमत नहीं थे। उनके अनुसार इलियट, काम्यू ने महान् साहित्य की रचना की। टैगोर की धार्मिक कविताएँ पढ़कर आज भी उन्हें आनंद आता है। उनका मत था कि आज के प्रकार के युग में लेखकों की आवाज का कोई विशेष महत्त्व या प्रभाव नहीं है। छोटे से छोटे देश में भी राजनीतिज्ञों का ही बोलबाला है। उनका विचार था कि अणु युद्ध नहीं होगा। पहले या दूसरे युद्ध से पूर्व युद्ध के प्रति कई देशों में उत्साह पाया जाता था परंतु आज किसी देश में यह उत्साह नहीं है। लेखक वस्तुस्थिति में अधिक अंतर नहीं डाल सकता। दूसरे युद्ध से पूर्व भी जर्मनी के अनेक साहित्यकारों ने फासिज्म का विरोध किया था परंतु राजनीतिज्ञों की चालों के आगे उन्हें सफलता नहीं मिली। भारत के विषय में अनेक विचार थे कि नेताओं और जनता के आर्थिक स्तर में बहुत अधिक अंतर है। आधुनिक भारतीय लेखक उनकी दृष्टि में आधुनिक नहीं थे। उनकी शैली यूरोप के पुराने लेखकों का स्मरण दिलाती है। ह्यूगो, लफ़ीत और रोलॉ से आगे शायद उनकी जानकारी नहीं जाती। लेखक का अनुभव था कि ऐसे लेखकों की संख्या दिन पर दिन कम होती जा रही है जो अपनी आस्था कमीज की आस्तीन पर लटका कर नहीं चलते। हर आइसलैंड की तरह वे भी जिस चीज को जितनी गहराई और संवेदना से महसूस करते थे उसके संबंध में उतने ही रूखे और अनमने-भाव से बातचीत करते थे।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

5. ब्रेख्त का नाटक देखने के लिए लेखक थियेटर में कितने विलम्ब से पहुँचे?

(क) 15 मिनट	(ख) 45 मिनट
(ग) 30 मिनट	(घ) इनमें से कोई नहीं।

6. आइसलैण्ड की भाषा के 'संबंध' शब्द का अर्थ हिन्दी के किस शब्द से मिलता है?
- (क) रिश्ते-नाते (ख) संबंध
(ग) परम्परा (घ) इनमें से कोई नहीं।
7. युद्ध के कितने वर्ष बाद तक भी चेक साहित्य युद्ध की विभीषिका से मुक्त नहीं हो पाया?
- (क) 12 वर्ष (ख) 19 वर्ष
(ग) 16 वर्ष (घ) इनमें से कोई नहीं।

5.12 काफ़्का और चापेक

समकालीन चेक साहित्य

लेखक ने चेक साहित्य का संक्षिप्त इतिहास लिखने का प्रयास किया है। चेक साहित्य के एक सीमांत पर हैं यारोस्लाव हाशेक और दूसरे सीमांत पर हैं काफ़्का। एक अपने युग के सबसे प्रखर व्यंग्यकार थे और दूसरे महान् ट्रैजिक लेखक। दोनों को चेक संस्कृति से बाहर करके देखना असंभव है। चेक संस्कृति पर रूसी प्रभाव कोई आज की बात नहीं है। पिछले सौ वर्षों से चेक संस्कृति और साहित्य के पुनरुत्थान के युग में चेक लेखक और दार्शनिक बौद्धिक चेतना और आध्यात्मिक संबल के लिए रूस को ही तीर्थस्थान मानते आए हैं। यह एक संस्कार बन गया है परन्तु आधार नहीं। चेक साहित्य में पूर्व पश्चिम की द्विविधा सदा बनी रही है। आधुनिक चेक साहित्य की मूल प्रवृत्ति है मानवीयता। सन् 1620 का वर्ष चेक इतिहास में एक निर्णायक काल बिंदु माना जाएगा। इस वर्ष सफेद पर्वत के युद्ध में चेक सेनाएँ पराजित हुई थीं। चेकोस्लोवाकिया अपनी स्वतंत्रता खोकर हैप्सबुर्ग साम्राज्य का एक प्रांत बनकर रह गया था। ये वर्ष चेक संस्कृति के लिए अंधकार युग थे। 18वीं शताब्दी में शायद ही कोई लेखक अपनी भाषा में लिख सकता था। हिटलर पहला व्यक्ति नहीं था जिसने चेक साहित्य और संस्कृति की स्वतंत्र सत्ता को नष्ट करने का बीड़ा उठाया था वह तो जर्मनीकरण की प्रक्रिया को अंतिम स्टेज पर ले जाना चाहता था।

चेक भाषा में अद्भुत सूक्ष्मता, लचीलापन, अनेक स्तरों पर अर्थ देने की अद्भुत क्षमता है। यह उसे कई सदियों के संघर्ष के बाद मिली। साहित्य में पुनरुत्थान तथा राष्ट्रीय जागरण के लक्षण 1810 में प्राप्त होते हैं, जब काटेल हिनेक मारवा ने चेक साहित्य को नया मोड़ दिया था। कविता में रोमांटिक परिवर्तन आया, कथा साहित्य में व्यापक यथार्थवाद। इस परिवर्तन को लाने का श्रेय है बोजेना न्यमसोवा के उपन्यास 'दादी माँ' को। उपन्यास साहित्य यान नेरूदा (1834-91) के आने तक परिपक्व हो चुका था। आधुनिक चेक साहित्य का विश्लेषण करते समय काफ़्का की अवहलेना नहीं की जा सकती। काफ़्का का युग बीसवीं शताब्दी के आरंभ में एक संक्रान्ति काल से गुजर रहा था। यारोस्लाव हाशेक ने अपने उपन्यास 'अच्छा सिपाही श्वायक' में एक अमर पात्र 'श्वायक' दिया। चेक लोग कहते हैं कि विदेशी चेक के बारे में केवल तीन चीजें जानते हैं, चेक डम्पलिंग, पिल्सन बियर और श्वायक। प्रथम युद्ध की समाप्ति और द्वितीय युद्ध के प्रारंभ के बीच का काल चेक साहित्य के लिए स्वर्ण काल माना जाता है। इन बीस वर्षों में लेखकों ने चेक साहित्य को अकेलेपन और उपेक्षित अवस्था से मुक्त करके उसे अंतर्राष्ट्रीय मंच पर स्थापित कर दिया। इर्शी वोल्कर, न्यूमान, जोसेफ होरा, नजवल ईवान, ऑल ब्राख्त इसी पीढ़ी के लेखक हैं। मानवतावादी मूल्यों की स्थापना करने में काटेल चापेक का प्रमुख स्थान है। वे उपन्यासकार, कहानी लेखक, नाट्यकार होने के अलावा निबंध और यात्रा-संस्मरण भी सुंदर रूप से लिखते थे। द्वितीय विश्वयुद्ध में चापेक की हत्या हो गई ब्लादीस्लाव वाँचूरा को भी गोली से उड़ा दिया गया। इन कठिन परिस्थितियों में भी चेक साहित्य जीवित रहा। युद्ध के बाद भी 16 वर्ष तक (जब लेखक प्राग में थे) चेक साहित्य युद्ध की विभीषिका से मुक्त नहीं हो पाया। आधुनिक काल में यानविस, लुदविक, अश्केनाजी और इर्शी मारेक की रचनाएँ अपने नवीन प्रयोगों वैविध्य और ताजगी के कारण महत्वपूर्ण हैं। लेखक कहते हैं कि यदि मुझसे कोई पूछे कि चेक कथा साहित्य में कौन-सी

नोट

चीज ने सबसे अधिक आकर्षित किया तो मैं कहूँगा उसका एक विचित्र ढंग का एस्थेटिक ग्रेस, एक सुरुचि संपन्न गरिमा जो आज के पोलिस और अंग्रेजी युवा साहित्यकारों की झुँझलाहट और आक्रोश से भिन्न है और उसकी सब से बड़ी और आँखों को खटकने वाली कमजोरी है, उसमें इसी आक्रोश और झुँझलाहट का अभाव। किंतु इन दोनों चीजों को एक साथ चाहना शायद लेखक की लोभी प्रवृत्ति का प्रतीक है।



टास्क लेखक द्वारा लिखे गये चेक साहित्य के संक्षिप्त इतिहास का उल्लेख कीजिए।

5.13 देहरी के भीतर चेखव का पत्र

जब हम किसी व्यक्ति के पत्र पढ़ते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि हम उसके व्यक्तिगत कमरे में प्रवेश कर गये हैं। पत्रों की अपनी विशिष्ट परिधि है। जिसकी सीमा रेखा एक ओर डायरी को छूती है, दूसरी कहानी को। कहानी निरपेक्ष है आत्मानुभूति के स्तर पर, डायरी आत्मानुभूत लेखा है निरपेक्षता के स्तर पर। पत्रों में, विशेष रूप से लेखकों के पत्रों में डायरी की आत्मानुभूति और कहानी की निरपेक्षता आधी-आधी बँट जाती है, इसलिए वे इतने दिलचस्प और आकर्षक लगते हैं। डायरी की निरावृत्त स्थिति पत्रों में ढक जाती है, उसी तरह जैसे कहानी के ढके हुए अंग उनमें खुल जाते हैं। पत्रों में भी अंतर है। साधारण व्यक्ति पत्र लिखते समय चिंता करता है अतः उसके पत्र गंभीर होते हैं और लेखक चिंतन से मुक्त होने के लिए पत्र लिखता है, उनमें वे प्रायः हल्का फुलका अंदाज बनाये रखते हैं। चेखव के पत्रों को पढ़कर ऐसा लगता है कि उल्लास, व्यंग्य विनोद के पीछे हल्की-सी किरकिरी छिपी रह गई है। चेखवन ने अपनी मृत्यु से पूर्व जो पत्र अपनी बहन को लिखा था उसमें अपनी बीमारी के बारे में बहुत कम लिखा था। साहित्य के बारे में एक शब्द भी नहीं। अपने शारीरिक दुख-दर्द को दो-चार लाइनों में रफा-दफा कर दिया था। चेखव दूसरों के सामने अपने दुख-दर्द व्यक्त करने से घबराते थे। जिंदगी की हर खूबसूरत चीज उन्हें आकर्षित करती थी। वे तपेदिक के रोगी थे परंतु अपनी बीमारी के संबंध में वे अक्सर मौन साध लेते थे। अपनी कृतियों के विषय में चेखव ने बहुत कम लिखा, अक्सर वे उनका मजाक उड़ाते थे। ऐसे बहुत कम लेखक मिलेंगे जिन्होंने कला को नये, क्रांतिकारी मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया परंतु जो स्वयं अपनी इस अभूतपूर्व देन से असंतुष्ट थे। चेखव के पत्र संकल्प, विकल्प, व्यंग्य और विरोधाभास से भरे हुए हैं। वह अपने पत्रों में सदा एक केज्यूअल भाव रखते थे। किंतु इस केज्यूअल टोन, इस अधूरेपन में ही उनकी सहज आत्मीयता उनकी सार्थकता निहित है। पत्रों का कोई शाश्वत सत्य है तो वह उनकी तत्कालिकता में और चेखव के पत्र इस संबंध में खरे उतरते हैं।

5.14 उद्देश्य

प्रसिद्ध आलोचक स्काट जेम्स ने साहित्य को दो भागों में बाँटा है—

1. ज्ञान का साहित्य
2. शक्ति का साहित्य।

प्रथम प्रकार का साहित्य हमें सिखाता है, दूसरे प्रकार का साहित्य हमें द्रवित करता है। संस्मरण को हम शक्ति के साहित्य के अंतर्गत रखते हैं। अर्थात् संस्मरण हमें कुछ सिखाता है, उस व्यक्ति अथवा स्थान का बोध कराता है। वहाँ की विभिन्न परिस्थितियों से अवगत कराता है। साथ ही हमें मानवीयता से युक्त करके मन में करुणा के भाव भरकर हमें द्रवित भी करता है। ठीक अर्थों में कला का अर्थ मनोरंजन मात्र नहीं, अपने उच्चतम अर्थों में कला का उद्देश्य होता है—ईश्वर के गौरव का दर्शन करना और तज्जन्य आह्लाद को अपनी अभिव्यक्ति के माध्यम से दूसरों को भी उस दिव्य आनंद का साझीदार बनाना, अतः स्वाभाविक रूप से लेखक का उद्देश्य जीवन की व्याख्या करना

हो जाता है। यह व्याख्या दो प्रकार से हो सकती है। एक तो इसका व्यक्तिगत रूप होता है जिसमें प्रायः मनुष्य का आंतरिक भावनाओं का विश्लेषण किया जाता है, दूसरे प्रकार में वह जीवन की समस्याओं आदि का विश्लेषण करता है। अच्छे लेखक चिंतक और पर्यवेक्षक दोनों ही होते हैं। किंतु उसकी चिंता का विषय अमूर्त प्रश्न न होकर जीवन के ठोस तत्व होते हैं। वह इन तथ्यों को नैतिक अर्थ देने का प्रयास करता है। वास्तव में मानव अपनी सचेतन अवस्था में कभी भी निरुद्देश्य नहीं रह सकता। अतः कोई भी सर्जनात्मक साहित्य किसी उद्देश्य से ही रचा जाता है। साहित्य का एकमात्र उद्देश्य है कि वह मनुष्य की अपने समस्त आयामों और समग्र परिवेश के साथ साहित्यिक भूमि पर अवतारणा कर उसके समस्त उलझे हुए सूत्र, फैले हुए सीमांत और गति तथा प्रसार के अतिरिक्त गहराई के आयाम का चित्रण करके मानव जीवन का सर्वथा संपूर्ण प्रतिपादन करे।

निर्मल वर्मा का संकलन 'चीड़ों पर चाँदनी' एक संस्मरण गुम्फ है, जिसमें उन्होंने यूरोप के विभिन्न देशों की यात्रा के विवरण प्रस्तुत किए हैं। उनका उद्देश्य मूलरूप से स्मृति को पुनर्जागृत करके पाठक को उन सभी स्थानों से परिचित कराना है जहाँ-जहाँ वह गए, परंतु मात्र इतना ही कर देना उनका उद्देश्य नहीं। साथ ही यूरोप की सामाजिक, राजनीतिक आदि स्थितियों का विश्लेषण करते हुए मानवीयता के आधार पर उनका विश्लेषण करना भी उनका उद्देश्य रहा है। युद्धोत्तर कालीन यूरोप ने इतनी विभीषिकाएँ देखी हैं कि एक 'बाहर' का व्यक्ति यदि उसे देखे तो वह विचलित हुए बिना नहीं रह सकता। उसके हृदय में निरंतर प्रश्न उठते रहते हैं कि क्या युद्ध किन्हीं स्थितियों में उपादेय भी हो सकता है? और प्रत्यक्षदर्शी होने के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि युद्ध कभी भी मनुष्य का हित नहीं कर सकता।

5.15 मानवतावादी दृष्टिकोण से युक्त यात्रा-संस्मरण

लेखक का मुख्य उद्देश्य अपने यात्रा-संस्मरणों के माध्यम से पाठक की मानवीय भावनाओं को जगाना है। उसे यूरोपवासियों के विचारों से अवगत कराना है। इस उद्देश्य को लेकर लेखक के मन को आलोकित कर देने वाले तथ्यों का उन्होंने मानवतावादी दृष्टिकोण से चिंतन के आधार पर विश्लेषण किया है। वास्तव में 'चीड़ों पर चाँदनी' एक भारतीय लेखक के रूप में अपने से बाहर निकलकर स्वयं अपने को गवाह बनाने का प्रयत्न है। लेखकीय अनुभवों का जीता जागता शब्द-सागर है जिसमें से सुधी पाठक यदि चाहे तो करुणा, प्रेम, अहिंसा, मानवता के रत्न खोज सकता है। लेखक ने एक स्थान पर कहा है—“सिर्फ साँस लेना, जीवित रहकर धरती के चेहरे को पहचान पाना, यह भी अपने में एक सुख है।” उन्होंने अपनी यात्राओं से यही सीखा। अतः अपनी यात्राओं के अनुभवों को करुणा मिश्रित करके मानवतावादी दृष्टिकोण के आधार पर पाठक के समक्ष प्रस्तुत करना ही उनका मुख्य उद्देश्य था।

सर्वप्रथम लेखक अपने सूक्ष्म वर्णनों द्वारा उस वर्णित स्थान का शब्द-चित्र प्रस्तुत करते हैं बाद में वह स्वयं चिंतन में लीन हो जाते हैं तथा पाठक के सामने अनेक प्रश्न छोड़ जाते हैं। इस स्थानीय वातावरण का एक दृश्य देखें—

“सेन के जिस छोर पर मैं खड़ा हूँ, वहाँ चेस्टरन की शाखाएँ बहते भूरे पानी पर झुक गई हैं। बहुत कम फासले पर पोंत न्यूफ है और उसके परे मधुमक्खियों के छत्ते-सा द्वीप एवं पानी के बीच एक भूखंड जहाँ नात्रेदाम की मीनारें धूप में झिलमिलाती हैं। पुल के पास हेनरी चतुर्थ की मूर्ति है और उसके नीचे, सेन से सटा एक छोटा-सा बाग ‘किनारे पर इक्के-दुक्के मछुए दिखाई दे जाते हैं। ऊपर पुल की सबसे ऊँची सीढ़ी पर एक कैनवस रखा है...आँखें उठती हैं उस दृश्य की ओर, जो न जाने कितने टूरिस्ट पोस्टकार्डों पर अंकित है...आगे की ओर पोंत न्यूफ, किनारे पर ऊँघते मछुए, सेब के एम्बेकमेंट पर सेकंड हैंड किताबें और घटिया चित्रों की दुकान...हवा में फरफराते पिक्चर पोस्टकार्ड और इन सब को रिलीफ देता हुआ नात्रेदाम। विश्वास नहीं होता कि वह लड़की हजार बार दोहराये गये इस लैंडस्केप को नये सिरे से छेड़ने का प्रयत्न करेगी।”

इस प्रकार स्थान वर्णन के माध्यम से पाठक को उस स्थान का पूरा परिचय देकर उसकी कल्पना में वह चित्र-विशेष उभारना लेखक का उद्देश्य रहा है। परंतु लेखक यहीं तक रुक नहीं जाता अपितु तुरंत विचारशील हो जाता है और अपनी भावनाओं को भी पाठक तक पहुँचाता है—

नोट

“ब्रेख्त भी यही करते हैं, बिल्कुल दूसरे ढंग से। बाह्य परिस्थिति उनके लिए ऐतिहासिक है। सूक्ष्म अर्थ में नहीं, समय के हाड़-माँस, ठोस पिंजर में आबद्ध, जिस सदी में हम जीते हैं, उसके संदर्भ में बेहद इंटेंस, राजनीतिक। फासिज्म बंदी-शिविर, नर-संहार...ये महज दीवार की छायाएँ नहीं, जिन्हें एक आत्मपरक प्रतीक दिया जा सके, क्योंकि ये स्वयं प्रतीक है एक विघटन प्रक्रिया के जिसमें हम सब अलग-अलग व्यक्ति की हैसियत से शामिल हैं। यह आकस्मिक नहीं कि ब्रेख्त का नाटक देखते हुए अचानक एक ऐसा क्षण आता है जब लगता है, जैसे थियेटर की दीवार के परे बरबस कुछ आवाजें भटक रही हैं। दरवाजा खटखटा रहा है, और हम दर्शक और अभिनेता, समूचा मंच और यह ‘ऑडिटोरियम’ एक अजीब दबाव तले धँसने लगते हैं। सिर्फ एक उपाय है मुक्ति पाने का। हम बाहर निकल आयेँ और इन आवाजों के साक्षी बन सकें।”



टास्क ‘चीड़ों पर चाँदनी’ का लेखक ने मानवतावादी दृष्टिकोण से किस आधार पर विश्लेषण किया है?

इसी प्रकार चेकोस्लोवाकिया के गाँव लिदित्से में नर-संहार एवं हिंसा के स्मृति-चिह्नों को देखकर भी लेखक विचारशील हो उठता है और कहता है कि—

“क्या अर्थ है हमारे लिए लिदित्से का? हम जो दुनिया के दूर-सुदूर देशों से यहाँ आए हैं? हम सबने अलग-अलग शहरों में अरसा पहले लिदित्से का नाम सुना था। अपने-अपने ढंग से उसके संबंध में सोचा था। किंतु इस क्षण लगता है, एक उड़ती हुई धुँधली अनुभूति हम सबको छू गई है। ऐसा कुछ जो, जब कभी महसूस होता है, हम हठात् चौंक से जाते हैं। एक अजीब-सी छाया जो अब सरसराती सी हमें छूती हुई निकल जाती है, हमें लगता है जैसे हमारे भीतर एक अँधेरा खोखला-सा खुल गया है। यूरोप के शहरों में घूमते हुए मुझे यह अक्सर महसूस हुआ कि इन लोगों के बीच मैं महज एक ‘आउटसाइडर’ हूँ—एक बाहर का आदमी। यूरोप के लिए फासिज्म का जो अर्थ रहा है क्या मैं उसे कभी सही-सही समझ सकूँगा? महसूस कर पाऊँगा? आज वह उसकी आत्मा का एक हिस्सा है—पूरे अर्थ में एक पाप, जो सिर्फ अतीत की विरासत ही नहीं, किंतु जिसे हर व्यक्ति कमोबेश अपने में लिये जीता है और तब लिदित्से के खंडहरों के बीच भटकते हुए मुझे पहली बार अपने लिए ‘आउटसाइडर’ शब्द अजीब बेमानी-सा लगा। टूटी हुई दीवार के मलबे के नीचे हम सबकी आत्मा का एक अंश दब गया है क्योंकि जिस सदी में हम जीते हैं, हममें से हर व्यक्ति उसका गवाह है, और गवाह होने के नाते जवाबदेह भी...।”

इस प्रकार हमने देखा कि लेखक मात्र यात्रा-विवरण ही प्रस्तुत नहीं कर रहा अपितु मानवीय संवेदना से युक्त करके उन दृश्यों के माध्यम से एक प्रश्न भी उठा रहा है। यही वह कारण है जिससे संस्मरण मात्र तथ्यात्मक विवरण न होकर साहित्यिकता को प्राप्त करते हैं। एक सहज आत्मीयता से युक्त होने पर संस्मरण जीवंत हो उठता है। जिस प्रकार महादेवी के संस्मरण उनकी करुणा व सहानुभूति से ओतप्रोत हैं उसी प्रकार निर्मल वर्मा के संस्मरणों का उद्देश्य भी अपने अनुभवों को करुणा से युक्त कर पाठक को आंदोलित करना है।

उपर्युक्त मूलोद्देश्य के साथ ही लेखक ने सामाजिक यथार्थ के विभिन्न संदर्भ भी प्रस्तुत किए हैं जिनको देखते हुए कहा जा सकता है कि उनका चित्रण करना भी निर्मल वर्मा का उद्देश्य रहा है। इस उद्देश्य को सामाजिक यथार्थ के संदर्भ में निम्नलिखित रूपों में देखा जा सकता है—

1. सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण
2. राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण
3. सांस्कृतिक परिस्थितियों का चित्रण।

1. सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण—‘चीड़ों पर चाँदनी’ में यूरोप के अनेक देशों में सामाजिक परिस्थितियों को देखते हुए लेखक ने उनका यथावत् चित्रण किया है। युद्धोत्तर यूरोप में सामाजिक अव्यवस्था रही थी। जर्मनी के

नोट

दो भाग हो चुके थे। लोग हिंसा के दौर से मुक्त होकर पुनर्निर्माण में लगे हुए थे फिर भी यूरोप का समाज जीवंत था। उसमें जिजीविषा थी तभी तो किसी के द्वारा यह पूछने पर कि यदि सारा विश्व तबाह हो जाए और एक शहर बच जाए तो आप कौन-सा शहर बचाना चाहेंगे। इसके उत्तर में 'पेरिस' को ही सभी ने वरीयता दी क्योंकि वह सांस्कृतिक गतिविधियों का केंद्र है। समाज में आए विभिन्न परिवर्तनों एवं विभिन्न आंदोलनों को उसने स्वीकार किया था। लेखक ने विस्तार से आइसलैंड की सामाजिक स्थितियों का वर्णन किया है परंतु साथ ही प्राग, पेरिस, बर्लिन आदि स्थानों के विषय में भी अपने विचार व्यक्त किए हैं।

“हर स्टेशन पर गाड़ी रुकती है कुछ लोग भीतर आते हैं। पूर्वी बर्लिन के निवासी जो दूसरे क्षेत्र में जा रहे हैं। पूर्व से पश्चिम और पश्चिम से पूर्व, बिना किसी औपचारिकता या रुकावट के आया जाया जा सकता है। आज ये पंक्तियाँ लिखते समय बर्लिन में अनेक परिवर्तन आ चुके हैं। पहले जैसा मुक्त यातायात आवागमन संभव नहीं। आइसलैंड से वापस आते समय मैं बर्लिन में चार दिन ठहरा था। और इस थोड़े समय में मैं जो कुछ देख, समझ पाया वह इस अभिशप्त नगर की असाधारण झाँकी देने के लिए काफी था। शीतयुद्ध की इतनी गंभीर, बेतुल तस्वीर शायद यूरोप के किसी शहर में नहीं दिखाई देती। हजारों लोग ऐसे हैं जिनके घर पूर्वी बर्लिन में हैं और जो हर रोज काम करने के लिए पश्चिमी बर्लिन जाते हैं। अनेक ऐसे परिवार हैं जो इस विभाजित शहर का आईना हैं। आधा परिवार पूर्वी भाग में, आधा पश्चिमी भाग में। मैं किसी पत्रकार की हैसियत से बर्लिन नहीं गया था। अतः किसी प्रकार की निश्चित सूचना देना न मेरा लक्ष्य है न बस की बात। आर्ट गैलेरीज और म्यूजियम देखने के लिए अक्सर मुझे शहर के दोनों ओर जाना पड़ता था और इस दौरान जो कुछ आँखों के सामने पड़ जाता था, उससे बहुत कुछ खुले-छिपे संकेत मिल जाते थे। अपने में बहुत साधारण और छोटे किंतु असाधारण स्थिति के द्योतक। कौन प्रभावित नहीं होगा? पश्चिमी बर्लिन की ऊँची भव्य दुकानों, होटलों और रेस्तराओं की तड़क-भड़क से। इन ऊँची और गगनचुंबी इमारतों ने युद्ध के भेदे अवशेषों को अपने अंदर छिपा लिया है। यह आकस्मिक नहीं कि पूर्वी बर्लिन से हर रोज सैकड़ों आदमी पश्चिमी भाग में सैर-सपाटे के लिए अथवा चीजें खरीदने के लिए आते हैं। अक्सर मैंने जू स्टेशन पर एक्सचेंज बैंक के आगे इन लोगों की लंबी कतारें देखी हैं जो पूर्वी जर्मनी के मार्क को पश्चिमी जर्मनी के मार्क में बदलने के लिए खड़े हैं। आश्चर्य नहीं आज पश्चिमी बर्लिन पश्चिमी यूरोप की जगमगाती 'शो विंडो' के रूप में पूर्वी यूरोप के सामने उपस्थित है—स्वतंत्र यूरोप के आदर्शों का एक स्वतंत्र-सा प्रतीक।

किंतु यह विरोधाभास अपने में अकेला नहीं। बर्लिन के दोनों भाग इस विचित्र विरोधाभास को अपने में प्रतिबिंबित करते हैं। अक्सर कहा जाता है कि पश्चिमी देशों की संस्कृति, स्वतंत्रता और न्याय जैसे आध्यात्मिक सिद्धांतों पर आधारित है, जबकि दूसरी ओर कम्युनिस्ट देश उनकी नितांत अवहेलना करते हैं तथा मनुष्य की निम्नतम भौतिक इच्छाओं पर जोर डालते हैं। शायद यह सच हो किंतु बर्लिन में लगता है जैसे ये रोल आपस में बदल लिये गये हैं। पश्चिमी जर्मनी की सबसे बड़ी आध्यात्मिक अपील अमरीकी सिगरेट, स्काच, ह्विस्की, फ्रेंच कोन्याक, नायलन कमीजें तथा हेनरी मिलर और वात्स्यायन की पुस्तकें जिन्हें देखने और खरीदने हजारों लोग पूर्वी जर्मनी से आते हैं। जहाँ तक इन चीजों के प्रति आकर्षण का प्रश्न है, मैंने पूर्वी और पश्चिमी बर्लिन के लोगों में कोई भेद नहीं देखा। उनके राजनीतिक सिद्धांत या आध्यात्मिक मान्यताएँ एक-दूसरे से कितनी भी भिन्न क्यों न हों?

इसलिए एक प्रश्न बार-बार मंडराता है—क्या पश्चिमी यूरोप बर्लिन में 'स्ट्रिपटीज' और 'नाइट क्लबों' के अलावा अपनी सांस्कृतिक स्वतंत्रता प्रदर्शित करने का कोई दूसरा बेहतर माध्यम नहीं प्रस्तुत कर सकता? और दूसरा प्रश्न, क्या इन सब चीजों का आकर्षण पूर्वी बर्लिन निवासियों के लिए इतना अधिक गहरा है कि वे कम्युनिस्ट व्यवस्था के सम्मुख आर्थिक संकट उपस्थित कर देंगे? एक दृष्टि से परिचय की तुलना में पूर्वी जर्मनी की कम्युनिस्ट सरकार अपने भौतिक दर्शन के बावजूद अत्यंत आदर्शवादी जान पड़ती है। जहाँ पश्चिमी जर्मनी में नाइट क्लबों के भड़कीले इशतहार दिखाई देते हैं, वहीं पूर्वी बर्लिन के चौराहों पर, स्टेशन की दीवारों पर अक्सर बड़ी-बड़ी सुर्खियों में चेतावनी के ये शब्द आँखों को रोक देते हैं—'फासिज्म नेवर अगेन'। यह आकस्मिक नहीं कि पश्चिमी बर्लिन में मैंने आइखमैन के खिलाफ एक भी इशतहार नहीं देखा।”

नोट

इसी प्रकार आइसलैंड के समाज का वर्णन करते हुए लेखक ने लिखा है कि वहाँ स्त्रियों को पूरी आजादी है और वह आजादी केवल दिखावे की नहीं अपितु व्यवहार में भी प्रयुक्त होती है। यह स्वाधीनता बराबरी के अधिकार तथा वोट तक ही सीमित नहीं अपितु बहुत ही सहज और अनायास रूप से उनके जीवन का एक अंग बन गई है। वहाँ स्त्रियों में एक अजीब सी उच्छलता है जो परंपरागत नैतिकता से बिल्कुल अदूषित है। बहते पानी की तरह नैसर्गिक व्यवहार, आधुनिक समाजों में भी अनैतिक माना जाएगा परंतु आइसलैंड में इस संबंध में भिन्न विचार है। यदि कोई स्त्री माँ बनती है तो सभी उसे बधाई देने आते हैं परंतु कोई यह प्रश्न नहीं पूछता कि वह विवाहित है या अविवाहित। यही कारण है कि आइसलैंड में अवैध बच्चों की संख्या यूरोप में सबसे अधिक है परंतु यह आश्चर्य की बात है कि अवैध की कुंठा या अपराध भावना उनमें कहीं भी नहीं दिखाई देती। अहिंसा की भावना उनके जीवन का एक अंग है। इसीलिए पिछले तीस-चालीस वर्षों से वहाँ चोरी अथवा डाके की एक घटना भी नहीं घटी। हत्या के संबंध में लोग भूल ही गये हैं। वहाँ का समाज इतना घनिष्ठ है कि एक दूसरे के व्यक्तिगत जीवन की अनेक बातों का पता होते हुए भी उन्हें वे व्यक्तिगत घरेलू राज की तरह ही रखते हैं। कोई किसी के जीवन में दखल नहीं देता।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

8. आइसलैंड यायावार प्रकृति के होते हैं।
 9. लेक्सनेस विलियन को अथक प्रयासों के बावजूद नोबल पुरस्कार की प्राप्ति नहीं हो सकी।
 10. आइसलैंड के तीर्थस्थान ‘थिंगविलियर’ का अर्थ ‘प्रथम लोकतन्त्र’ से है।
 11. सन् 1630 में सफेद पर्वत के युद्ध में चेक सेनाएँ पराजित हुई थीं।
- 2. राजनीतिक परिस्थितियाँ**—लेखक ने अपनी यात्रा 1959 में की जो कि द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त होने के 14 वर्ष बाद ही थी। इतनी अल्प-अवधि में अभी इस युद्ध की विभीषिका से लोग मुक्त नहीं हुए थे। उसके साथ ऐसी अनेक घटनाएँ घटित हुईं जिससे उसे वहाँ की राजनीतिक परिस्थितियों का बोध हो गया। उन घटनाओं का वर्णन करके लेखक पाठक को भी वहाँ की राजनीतिक परिस्थितियों से अवगत कराना चाहता है। बर्लिन में आकर लेखक जहाज पकड़ने के लिए एक दिन ठहरा परंतु उसे होटल में कमरा नहीं मिला परंतु उसके मित्र थोर्गियेर के कहने पर कमरा मिल गया। इस घटना का वर्णन लेखक इस प्रकार करता है—

“क्लाक रूम” से अपना सामान लाने के लिए हम स्टेशन की ओर खाना हो गये। “देखा आपने, कमरा कितनी जल्दी मिल गया?” एंगुई ने मुस्कराते हुए हमारी ओर देखा। “लेकिन माजरा क्या है? हम अभी कुछ देर पहले गये थे और मैनेजर ने विवशता प्रदर्शित करते हुए कहा था कि सब कमरे पहले से ही बुक हो गये हैं।” मैंने कहा। “ठीक तो है”, एंगुई ने कहा, “कमरा आपको नहीं मुझे मिला है, कोपेनहेगन में रहता हूँ, इसलिए वे मुझ पर संदेह नहीं करते।” “कैसा संदेह?” थोर्गियेर ने पूछा, “हम पर संदेह करते हैं?” आपने अपना पासपोर्ट दिखाया होगा?” एंगुई ने कहा। “दो वर्ष से आप प्राग में रह रहे हैं, आयरन कर्टेन के पीछे, क्या यह कम सबूत है कि आप खतरनाक लोग हैं?” एंगुई हँसने लगा था।

पहले क्षण में इस कड़वे सत्य को आसानी से गले के नीचे नहीं उतार सका था। मैं भारतीय हूँ। यह इतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना यह कि मैं एक कम्युनिस्ट देश से आ रहा हूँ। शीतयुद्ध की यह नई बीमारी छुआछूत यूरोप की दैनिक चर्चा का अभिन्नतम अंग बन गई थी। इसका भयानक अनुभव मुझे लंदन में भी हुआ था। टामसकु कंपनी से प्राग का टिकट लेने गया था। टिकट माँगने पर एक बहुत ही शालीन और भद्र अंग्रेज बाबू ने मिचमिचाती आँखों से मेरी ओर देखा—“प्राग?” गले में साँस अटक गई। “बट डॉट यू नो इट इज बिहाइंड आयरनकर्टेन?” (लेकिन क्या आप नहीं जानते कि वह लौह दीवार के पीछे है?)

“ओह रियली?” (क्या सचमुच) मैंने कहा।

एक अन्य स्थान पर जब लेखक से यह कहा गया कि वह यदि स्वयं को कम्युनिस्ट घोषित करेगा तो आइसलैंड में उसका सम्मान होगा क्योंकि आइसलैंडी कम्युनिस्टों से जितनी नफरत करते हैं, उससे ज्यादा उनकी इज्जत करते हैं। उस व्यक्ति ने कहा कि मैं उनका कट्टर विरोधी हूँ। हर चुनाव में मैंने उनके खिलाफ वोट दिया है। इसके बावजूद यदि कोई मुझसे पूछे कि आइसलैंड में सबसे ईमानदार राजनीतिज्ञ कौन है, तो मैं कहूँगा—आल्थेयर सॉन। लेखक ने कहा है “यह पहला अवसर था जब आइसलैंड की राजनीति के भीतर झोंकने का मौका मिला था। आल्थेयर सॉन के नाम से पहले भी परिचित था किंतु एक कम्युनिस्ट विरोधी व्यक्ति भी उनके प्रति इतने सम्मान की भावना रख सकता है, इसका परिचय पहली बार मिला। बाद में यह अनुभव अनेक बार हुआ। शीतयुद्ध की राजनीति में जहाँ हर चीज काले और सफेद रंगों में देखी जाती है, यह अपने में विलक्षण और असाधारण घटना थी। कम्युनिस्ट देशों के बाहर आइसलैंड ही एक ऐसा देश है जहाँ लोग कम्युनिस्ट विचारधारा से तीव्र मतभेद रखते हुए कम्युनिस्ट नेता के प्रति इतनी गहरी निष्ठा और आस्था प्रकट कर सकते हैं।”

3. सांस्कृतिक परिस्थितियाँ—लेखक एक साहित्यिक व्यक्ति है। अतः किसी स्थान पर जाकर उस स्थान की सांस्कृतिक गतिविधियों से परिचित होना स्वाभाविक ही है। उन्होंने अनेक नाटक देखे, म्यूजियम, कला संग्रहालय आदि का भ्रमण किया और उसका वर्णन सुंदर रूप से किया है। बर्लिन में ब्रेख्त का नाटक ‘टेरर एंड मिजरी’ देखा जिसे देखकर लेखक अत्यंत रूप से प्रभावित हुआ। आइसलैंड के नोबल पुरस्कार विजेता लेक्सनेस से तो उनकी विस्तार से बातचीत हुई। कोपेनहेगन में वे स्कैन्डेनेवियन चित्रकारों की प्रदर्शनी देखने गए। फर्नीचर के डिजाइन, दस्तकारी का सूक्ष्म काम तथा नई वास्तुकला में विचित्र प्रयोग करने वाले डेन लीग चित्रकला के क्षेत्र में ‘पास्तेश’ और उथलेपन में सार्थकता खोजेंगे, यह देखकर लेखक को आश्चर्य हुआ। उन्होंने लिखा है कि सीमित साधनों और भौगोलिक अलगाव के बावजूद आइसलैंडियों का मूर्तिकला के प्रति जो लगाव रहा है वह विस्मयकारी है। रिक्याविक में उन्नीसवीं शताब्दी के मूर्तिकार आइनर थोहोन्सोन की कृतियों का एक अलग संग्रहालय है। यद्यपि उनकी अत्यधिक रोमांटिक शैली मुझे अधिक रुचिकर नहीं प्रतीत हुई परंतु उनकी मूर्तियों में उत्तरी देशों की पौराणिक गाथाओं का अद्भुत चित्रण मिलता है। चेकोस्लोवाकिया में वे मोत्सार्ट का संगीत संग्रहालय देखने गये। उस संगीत को सुनने के बाद लेखक पर जो प्रभाव पड़ा उसका वर्णन उन्होंने बहुत काव्यात्मक ढंग से किया है—

“जो सच है, जो रात की उस घड़ी में सच था, वह अब महज अर्धस्वप्नों, स्मृतियों का पुंज रह गया है, आकारहीन, स्वरहीन, धुँधली धुँध के लौंदे सा। वह एक पुल था। हजारां सदियों के कुहरे को काटता हुआ, अतीत के उस सीमांत को छूता हुआ, जहाँ मौन, शब्दों के अभाव से नहीं, उनके अधूरेपन से उत्पन्न होता है। ऐसा पुल जो कितना कुछ जोड़ता है, उतने में ही टूट जाता है। सोचता हूँ, आज नहीं, उस रात सोचा था, जैसे वह लौ बिल्कुल अकेली, बिल्कुल नंगी हो गई है जिसे हम अपने अस्तित्व से ढके रहते हैं। कितनी जल्दी वह आसपास के घेरे को निगल रही है, भूखी प्यासी लौ, लपलपाती, हाँफती हवा में साँस लेती है। कुछ भी ऐसा नहीं रहा जिस पर उँगली रखकर कह सकें यह आज है, यह कल।

फिर आखिरी लम्हा और तब उसके इर्द-गिर्द सबकुछ डूब जाता है। हमारा प्यार, आधी रात में जागे पसीने से लथपथ दुःस्वप्न, एक पगली सी धड़कन और फिर वह भी नहीं। जो शेष रह जाता है, देर तक हवा में टँगा रहता है, वह है एक अजनबी अपनापन, जिसे हमने पहले कभी नहीं देखा था।”

निष्कर्ष

इस विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि ‘चीड़ों पर चाँदनी’ में लेखक निर्मल वर्मा का क्या उद्देश्य है? मानवीय संवेदना से युक्त करके घूमे हुए स्थानों के सुंदर शब्द-चित्रों के माध्यम से वे स्थान पाठक की कल्पना में साकार किए गए हैं। साथ ही यूरोप की राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का भी लेखक ने सुंदर रूप से चित्रण किया है। कहना न होगा कि लेखक अपने इस उद्देश्य में सफल रहा है।

5.16 सारांश (Summary)

नोट

- ‘चीड़ों पर चाँदनी’ श्री निर्मल वर्मा के यात्रा संस्मरणों का संकलन है जिसमें उन्होंने प्राग, बर्लिन, कोपेनहेगन, आइसलैंड आदि स्थानों की यात्रा के अपने अनुभव एवं प्रतिक्रियाएँ व्यक्त की हैं। श्री निर्मल वर्मा मुख्य रूप से अपने उपन्यासों और कहानियों के माध्यम से जाने जाते हैं।
- थोर्गियेर का प्राग में यह अंतिम दिन था। वह एक घुमक्कड़ व्यक्ति था। मूलतः वह आइसलैंडी था। आइसलैंडी यायावर प्रकृति के होते हैं। अतः थोर्गियेर भी किसी स्थान पर एक साथ अधिक समय तक नहीं रह सकता था।
- कोपेनहेगन पहुँचकर लेखक ने अनेक होटलों में पता किया परंतु किसी होटल में उन्हें रहने का स्थान नहीं मिला। उन दिनों वहाँ सैलानी विद्यार्थी आए हुए थे जिस कारण भीड़ हो गई थी। अचानक थोर्गियेर को उसका एक मित्र मिल गया एंगुई।
- समुद्र का यह नशा और उल्लास ज्यादा दिन तक नहीं रह पाया। अचानक जहाज को प्रागैतिहासिक काल की बनैली आदिम लहरों ने लपेट लिया। ऐसा होता था जैसे कोई अदृश्य दानव ‘गुलफॉस’ को एक नन्हे से खिलौने के समान ऊपर नीचे उछाल रहा था।
- समुद्र के छोर पर क्षितिज के संग संग एक बहुत ही हल्की, मटमैली-सी रेखा दिखाई दी, यह आइसलैंड का पहला ग्लेशियर था। कुछ ही देर बाद दूसरा ग्लेशियर दिखाई दिया। सबके चेहरों पर अजीब-सी चमक और ताजगी आ गई।
- मोत्सार्ट प्राग वासियों में इतने लोकप्रिय थे कि उनकी मृत्यु का संवाद सुनकर हजारों निवासी यहाँ जमा हो गये किंतु वियना में उनकी अर्थी के साथ उनके इने-गिने मित्र ही गये थे। एक साधारण से कब्रिस्तान में उन्हें दफना दिया गया था।
- लेखक शिमला में अपने निवास का स्मरण करता हुआ कह रहा है कि बचपन में हम एक प्रश्न किया करते थे—इन पहाड़ों के पीछे क्या होगा? आज पता चला चाहे स्विटजरलैंड हो या शिमला सब के पहाड़ लगभग एक जैसे हैं।
- ऐसे लेखकों की संख्या दिन पर दिन कम होती जा रही है जो अपनी आस्था कमीज की आस्तीन पर लटका कर नहीं चलते। हर आइसलैंडी की तरह वे भी जिस चीज को जितनी गहराई और संवेदना से महसूस करते थे उसके संबंध में उतने ही रूखे और अनमने भाव से बातचीत करते थे।
- जब हम किसी व्यक्ति के पत्र पढ़ते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि हम उसके व्यक्तिगत कमरे में प्रवेश कर गये हैं। पत्रों की अपनी विशिष्ट परिधि है। जिसकी सीमा रेखा एक ओर डायरी को छूती है, दूसरी कहानी को।
- निर्मल वर्मा का संकलन ‘चीड़ों पर चाँदनी’ एक संस्मरण गुम्फ है, जिसमें उन्होंने यूरोप के विभिन्न देशों की यात्रा के विवरण प्रस्तुत किए हैं। उनका उद्देश्य मूलरूप से स्मृति को पुनर्जागृत करके पाठक को उन सभी स्थानों से परिचित कराना है।
- अहिंसा की भावना उनके जीवन का एक अंग है। इसीलिए पिछले तीस-चालीस वर्षों से वहाँ चोरी अथवा डाके की एक घटना भी नहीं घटी। हत्या के संबंध में लोग भूल ही गये हैं।
- वह यदि स्वयं को कम्युनिस्ट घोषित करेगा तो आइसलैंड में उसका सम्मान होगा क्योंकि आइसलैंडी कम्युनिस्टों से जितनी नफरत करते हैं, उससे ज्यादा उनकी इज्जत करते हैं।

5.17 शब्दकोश (Keywords)

- | | |
|-------------------|------------------|
| 1. अर्सा — समय | 2. फिजूल — बेकार |
| 3. विचित्र — अजीब | 4. हताश — परेशान |

नोट

5. खिल्ली – मजाक
7. संजीदा – गंभीर

6. सैलानी – घूमने वाले
8. फर्ज करो – सोचो।

5.18 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

1. वर्मा जी ने 'रोती हुई मर्मेट का शहर' किसको कहा है?
2. 'धीरे-धीरे सभी लोग मृत्यु-शय्या से ग्रस्त हो गये।' इस पंक्ति का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।
3. प्रसिद्ध संगीतज्ञ मोत्सार्ट के निवास स्थान बर्त राम्का का लेखक ने किस प्रकार वर्णन किया है?
4. 'चीड़ों पर चाँदनी' से लेखक का क्या तात्पर्य है?
5. लेखक द्वारा लिये गये 'लेक्सनेस' के इन्टरव्यू के कुछ अंशों का अपने शब्दों में उल्लेख कीजिए।
6. निर्मल वर्मा के संकलन 'चीड़ों पर चाँदनी' का क्या उद्देश्य है?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

- | | | | |
|-------------|------------|---------------|------------|
| 1. आइसलैण्ड | 2. नाटककार | 3. निर्देशिका | 4. यूरोपीय |
| 5. (क) | 6. (ख) | 7. (ग) | 8. सत्य |
| 9. असत्य | 10. सत्य | 11. असत्य। | |

5.19 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)



पुस्तकें चीड़ों पर चाँदनी-निर्मल वर्मा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

नोट

इकाई-6: ‘चीड़ों पर चाँदनी’ : भाषा-शैली एवं गद्यांशों की व्याख्या

अनुक्रमणिका (Contents)

उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तावना (Introduction)

- 6.1 ‘चीड़ों पर चाँदनी’ की भाषा
- 6.2 भाषा सम्बंधी विशेषताएँ
- 6.3 वाक्य रचना सम्बंधी विशेषताएँ
- 6.4 शब्द-शिल्प सौन्दर्य
- 6.5 ‘चीड़ों पर चाँदनी’ की शैली
- 6.6 प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या
- 6.7 सारांश (Summary)
- 6.8 शब्दकोश (Keywords)
- 6.9 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)
- 6.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)

उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- ‘चीड़ों पर चाँदनी’ की भाषा-शैली को समझने में;
- भाषा एवं वाक्य संबंधी विशेषताओं को जानने में;
- ‘चीड़ों पर चाँदनी’ के शब्द-शिल्प सौंदर्य की व्याख्या करने में;
- प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या की जानकारी प्राप्त करने में।

प्रस्तावना (Introduction)

‘चीड़ों पर चाँदनी’ संस्मरण विधा का एक महत्वपूर्ण संकलन है। संस्मरण की भाषा पत्रकारिता से उपजी है और पत्रकारिता की भाषा सीधी, वर्णन क्षम और अधिकांश रूप से अभिधा वाचक होती है जिससे उसे अधिक-से-अधिक व्यापक परिवेश मिल सके।

6.1 ‘चीड़ों पर चाँदनी’ की भाषा

भाषा भावों की वाहिका है अर्थात् संस्मरणकार की स्मृति की अभिव्यक्ति भाषा के माध्यम से ही होती है। ‘चीड़ों पर चाँदनी’ की भाषा की समीक्षा करते समय हमें दो दृष्टियों से विचार करना होगा। लेखक की अपनी भाषा तथा

नोट

दूसरे उसके पत्रों द्वारा प्रयुक्त भाषा। दूसरे प्रकार की भाषा भी लेखक की अपनी ही भाषा होती है परंतु संस्मरणकार यथासंभव स्मृति के माध्यम से परिचित पात्रों की भाषा को यथावत् रखने का प्रयास करता है जिससे उनके मनोभावों, व्यक्तिगत गुणों एवं चारित्रिक विशेषताओं के दर्शन हो ही जाते हैं। जो भाषा लेखक वर्णन में प्रयोग करता है वह निश्चित रूप से उसकी अपनी भाषा होती है। किसी भी साहित्यिक रचना का मूल्य उसके अन्य गुणों के साथ ही भाषा-शैली से भी आँका जाता है। रचना में यदि भाषा प्रभावी मार्मिक एवं सहज संप्रेषणीय नहीं होगी उसे शब्दाडंबर की ही अभिव्यक्ति माना जाएगा जिससे रचना अपनी अर्थवत्ता खो बैठेगी।

‘चीड़ों पर चाँदनी’ की भाषा का अध्ययन करते समय उसके निम्नलिखित रूप सामने आते हैं—

(क) वस्तु-वर्णन में प्रयुक्त भाषा-रूप

1. सरल एवं स्वाभाविक बोलचाल की भाषा
2. अलंकृत एवं काव्यात्मक भाषा
3. गंभीर चिंतन-प्रधान भाषा।

(ख) संवादों में प्रयुक्त भाषा-रूप

1. साधारण बोलचाल की भाषा
2. शुद्ध, परिनिष्ठित भाषा
3. गंभीर चिंतन-प्रधान भाषा
4. अलंकृत और काव्यात्मक भाषा।

अब आगे इन पर सोदाहरण ‘चीड़ों पर चाँदनी’ के परिप्रेक्ष्य में विचार किया जाएगा।

(क) वस्तु-वर्णन में प्रयुक्त भाषा-रूप

1. सरल एवं स्वाभाविक बोलचाल की भाषा—सरल एवं स्वाभाविक बोलचाल की भाषा संस्मरण की भाषा का महत्वपूर्ण गुण है। यद्यपि लेखक ने ऐसी भाषा का प्रयोग सर्वत्र किया है फिर भी, एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

“वह कई दिनों से हमारे आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे, किंतु उन्हें यह नहीं मालूम था कि हम आज ही उन्हें इतने अचानक तरीके से पकड़ लेंगे। उन्हें जब हमारी परेशानी का पता चला, तो चुपचाप सिर हिला दिया। अपने संग हमें बीच शहर के एक छोटे से होटल में ले गये। थोर्गियर ने उनसे कहा कि यहाँ पूछताछ करना बेकार है, हमें पहले ही जवाब मिल चुका है कि कोई कमरा खाली नहीं। एंगुई ने कुछ नहीं कहा, सीधा होटल के दफ्तर में घुस गया। पाँच मिनट बाद आकर कहा कि हम अपने पासपोर्ट भीतर जमा करा दें, कमरा हमें मिल गया है।

इस यात्रा में चमत्कारों से पीछा नहीं छूटेगा। मैं आश्चर्य से एंगुई को देखता रहा। पाँच मिनट पहले हम सब आशा छोड़ बैठे थे। अब हमारे पास अपना कमरा था, दो गुदगुदे बिस्तर, ऊपर छत और ढेरमी नींद, जो प्राग से कोपेनहेगन आने तक रफ़्तार-रफ़्तार इकट्ठी होती गई थी।”

2. अलंकृत एवं काव्यात्मक भाषा—संस्मरण में आत्मीयता का तत्व विद्यमान रहता है। इसी रागात्मकता के कारण अभिव्यक्ति भी काव्यात्मक हो जाती है। लेखक के व्यक्तिगत संबंध उसमें भावनात्मक आंदोलन उपस्थित करते हैं और उस भावावेश की स्थिति में भाषा में काव्यात्मक गुणों का समावेश होना स्वाभाविक है। श्री निर्मल वर्मा एक लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार हैं अतः किसी रचना में शास्त्रीय अलंकृत भाषा का आना भी स्वाभाविक है। ‘चीड़ों पर चाँदनी’ में उन्होंने अधिकांशतः प्रकृति दृश्यों को ही वर्णित किया है। प्रकृति वर्णन करते समय अभिव्यक्ति का काव्यात्मक होना अत्यंत स्वाभाविक है। लेखक ने कालका शिमला की पहाड़ियों का वर्णन करते समय काव्यात्मक भाषा का प्रयोग सुंदर रूप से किया है। जिसका एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

नोट

“कमरे में हल्की, फीकी-सी चाँदनी बिखर आई थी। आँखें खिड़की के पार बीच के तरल अंधेरे को लाँघती हुई खिलनमर्ग की हिमाच्छादित चोटियों पर जा टिकीं। चाँदनी के छुईमुई से झिलमिलाते कण ऊपर से नीचे तक बर्फ पर फिसल रहे थे। सबकुछ एक दूसरे में चुपचाप सिमट आया था। लगता था जैसे संगमरमर के सफेद चूरे की हल्की-हल्की बारिश हो रही है। एक पीला उजला सा आलोक होटल के बाहर पोलोग्राउंड की घास पर फैलता हुआ हवा में बार-बार काँप उठता था। बादल, बर्फ, चाँदनी...तीनों के अलग-अलग रंग थे, अलग-अलग लय थी। उस क्षण मुझे लगा मानो किसी मायावी संगीत के चमकीले सुरों ने समस्त वन्य-स्थल को अपने स्वप्निल निस्पंद पंखों के भीतर समेट लिया हो, लगा था जैसे चाँदनी के रेशमी डोरों में खिंचती हुई खिलनमर्ग की बर्फीली पहाड़ियाँ होटल के कमरे के पास तक सरक आई हैं और खिड़की के बाहर हाथ फैलाते ही मैं उन्हें छू लूँगा।

पहाड़ों पर चाँदनी का यह अद्भुत मायाजाल मैंने पहली बार देखा था और एक अलौकिक विस्मय से मेरी आँखें अनायास मुँद गई थीं। उस रात मुझे लगा था कि पहाड़ों में भी साँप की आँख जैसा एक अविस्मृत जादुई सम्मोहन होता है...एक भुतैला-सा सौंदर्य, जो एक साथ हमें आर्तकित और आकर्षित करता है। जिसके मोहपाश में बँधना उतना ही यातनामय है जितना उससे मुक्त होना।”

काव्य में किस प्रकार प्रकृति का मानवीकरण किया जाता है उसका एक संक्षिप्त-सा उदाहरण प्रस्तुत है—

“खिड़की के सामने पुराना चिर-परिचित देवदार का वृक्ष था, जिसकी नंगी शाखा पर रूई के मोटे-मोटे गोले-सी बर्फ चिपक गई थी। लगता था जैसे वह ‘सान्ता क्लाज’ हो। एक रात में ही जिसके बाल सन-से सफेद हो गये हैं। टेलीग्राफ की तार बर्फ की पतों में लिपटकर मोटी सफेद रस्सियों की तरह आकाश में खिंच आई हो—हर क्षण बाद इन रस्सियों की बर्फ के ‘आइसिकल’ फर में लिपटी सफेद गिलहरियों से नीचे लटक आते थे।

कुछ देर बाद धूप निकल आती है। नीले चमचमाते आकाश के नीचे बर्फ से ढकी पहाड़ियाँ धूप सेंकने के लिए अपना चेहरा बादलों के बाहर निकाल लेती हैं।”

3. गंभीर चिंतन-प्रधान भाषा—जहाँ संस्मरण लेखक विचारों की अभिव्यक्ति करता है तो उसका चिंतन पक्ष प्रबल हो जाता है, वहीं भाषा भी विचारों के अनुरूप गंभीर, परिष्कृत एवं चिंतन-प्रधान हो जाती है। इस प्रकार की भाषा का प्रयोग भी ‘चीड़ों पर चाँदनी’ में अनेक स्थानों पर हुआ है। लिदित्से के विषय में संस्मरण लिखते समय लेखक की विचार-प्रक्रिया का क्रम चालू हो जाता है और वह इस प्रकार सोचता है—

“सोचता हूँ क्या अर्थ है हमारे लिए लिदित्से का? हम जो दुनिया के दूर-सुदूर देशों से यहाँ आए हैं? हम सबने अरसा पहले अपने-अपने शहरों में लिदित्से का नाम सुना था। अपने-अपने ढंग से उसके विषय में सोचा था, किंतु इस क्षण लगता है, एक उड़ती हुई धुँधली अनुभूति हम सबको छू गई है। ऐसा कुछ जो जब कभी महसूस होता है, हम हठात् चौंक से पड़ते हैं। एक अजीब-सी छाया, जो जब सरसराती-सी हमें छू जाती है तो हमें लगता है जैसे हमारे भीतर एक अँधेरा खोखल-सा खुल गया है...।

क्या यह मृत्यु की छाया है? जिसने हमें लिदित्से की वीरान बस्ती में इतने नजदीक से स्पर्श किया है? किंतु अगस्त के इस दिन जब चारों ओर घनी शांत धूप फैली है, दूर पहाड़ियों पर अलसाये से इक्के-दुक्के बादल बिखर आए हैं? ऐसी शांत सुनहरी घड़ी में मृत्यु बहुत दूर की चीज लगती है, उसके बारे में कुछ भी सोचना असंभव-सा प्रतीत होता है।

यूरोप के शहरों में घूमते हुए मुझे यह अक्सर महसूस हुआ है कि इन लोगों के बीच मैं महज ‘आउटसाइडर’ हूँ—एक बाहर का आदमी। यूरोप के लिए फासिज्म का जो अर्थ रहा है, क्या मैं उसे कभी सही-सही समझ सकूँगा, महसूस कर पाऊँगा? आज वह उसकी आत्मा का एक हिस्सा है, पूरे अर्थ में ‘एक पाप’ जो सिर्फ अतीत की विरासत ही नहीं अपितु जिसे हर व्यक्ति कमोबेश अपने में लिये जीता है।

और तब लिदित्से के खंडहरों के बीच भटकते हुए मुझे पहली बार अपने लिए ‘आउटसाइडर’ शब्द अजीब-सा बेमानी लगा है। टूटी हुई दीवारों के मलबे के नीचे हम सबकी आत्मा का एक अंश दब गया है...क्योंकि जिस सदी

में हम जीते हैं, हममें से हर व्यक्ति उसका गवाह है और गवाह होने के नाते जवाबदेह भी... शायद मैं गलत हूँ, किंतु लिदित्से से वापस लौट आने बाद मैं इस पर विश्वास करना चाहूँगा।”



टास्क 'चीड़ों पर चाँदनी' की भाषा पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।

(ख) संवादों में प्रयुक्त भाषा-रूप

1. **साधारण बोलचाल की भाषा**—वर्णनों में निर्मल वर्मा ने कहीं-कहीं परिवेश के ध्वनन हेतु विचार प्रधान परिनिष्ठित भाषा का प्रयोग किया है परंतु सवाद प्रायः सहज, सरल बोलचाल की भाषा में ही लिखे हैं। हम देखते हैं कि वे बड़े ही सहज भाव से वार्तालाप में प्रयुक्त होते हैं। वर्णनों की अपेक्षा संवादों में भाषा की सहजता अधिक स्पष्ट होकर सामने आई है। इससे संस्मरणकार के संपर्क में आने वाले व्यक्ति भी जीवंत और स्वाभाविक होकर सामने आए हैं। उदाहरण के लिए निम्न संवाद प्रस्तुत हैं—

रायरवस्टैक की इमारत के सामने पहुँचने पर उसका स्वर फिर जीवंत हो उठा—“आपको मालूम होगा।” उसने कहा, “बल्गेरियन कम्युनिस्ट दित्रिट्रोव ने रायरवस्टैक को जलाने का षड्यंत्र किया था, किंतु हिटलर ने उसका भंडाफोड़ कर दिया।” उसके सुंदर सलोंने चेहरे पर विजय मुस्कान खिल गई।

“लेकिन यह सच नहीं है।” मैंने कहा। बस में बैठे सब लोग मेरी ओर आश्चर्य से देखने लगे। मुझे लगा, जैसे उसका विरोध करके मैंने अत्यंत अपराध कर डाला है।

“क्या कहा आपने?” उसने मेरी ओर घूरते हुए कहा।

“दित्रिट्रोव के खिलाफ कोई सबूत नहीं मिला और उसे बाद में छोड़ दिया गया।” मैंने कहा।

“शायद, मुझे यह सबकुछ नहीं मालूम।” उसने लापरवाही से कहा। “बट वाजप्ट ही ए ब्लडी कम्युनिस्ट?”

जाहिर है मैं इससे इंकार नहीं कर सका। वह फिर जीत गया था। सब लोगों ने चैन की साँस ली।

2. **शुद्ध, परिनिष्ठित भाषा**—लेखक के साथ दुविधा यह है कि वह विदेशों में यात्रा करने निकला था अतः स्वाभाविक रूप से उसके सभी वार्तालाप अंग्रेजी अथवा अन्य किसी विदेशी भाषा में हुए होंगे। संस्मरणों में उसने उन संवादों को स्मरण करके उनका हिंदी अनुवाद प्रस्तुत किया है। अनुवाद को सहज स्वाभाविक बनाने का उन्होंने यथासंभव प्रयास किया है परंतु फिर भी उसमें परिनिष्ठिता आ ही गई है। अनुवाद करते समय लेखक अपने हिंदी की शान को परे नहीं रख सका और भाषा की परिनिष्ठिता बनी रही।

साथ ही उसका संबंध अधिकांश रूप से साहित्यिक व्यक्तियों से ही हुआ। साहित्यकार किसी भी भाषा का प्रयोग करे उसके शुद्ध रूप पर ही अधिक बल देगा। एक उदाहरण इसी के अनुरूप देखें—

“उनके होंठों पर हल्की-सी व्यंग्य भरी मुस्कराहट उभर आई। आपका मतलब है डेन्मार्क का आइसलैंड पर प्रभाव? शायद यह बात आपको अजीब लगे, लेकिन यह सच है कि आइसलैंड पर सैकड़ों वर्षों से डैनिश राजनीतिक प्रभुत्व के बावजूद डैनिश साहित्य या संस्कृति का हमारे देश पर कोई गहरा या स्थायी प्रभाव नहीं पड़ा। लेकिन यह कहना सत्य के काफी निकट होगा कि साहित्य और कला के क्षेत्र में डेन्मार्क को आइसलैंड से निरंतर प्रेरणा मिलती रही। यह तनिक आश्चर्य की बात है कि राजनीतिक प्रभुत्व और सांस्कृतिक प्रभाव हमेशा संग नहीं जाते।”

“आपने सृजन-प्रक्रिया में लेखक के अलगाव का प्रश्न उठाया है। अंततः यह मनुष्य के अकेलेपन की समस्या है। मैं समझता हूँ यह समस्या पश्चिम के आधुनिक लेखकों को काफी पीड़ित करती रही है लेकिन मैंने आज तक

जिंदगी में यह अलगाव और अकेलापन महसूस नहीं किया। मैंने कभी यह महसूस नहीं किया कि मेरे और दूसरे लोगों के बीच ऐसी कोई खाई है, जिसे पार नहीं किया जा सकता है।”

“अकेलापन...” एक लंबे क्षण तक वे चुप रहे। मैंने देखा उनके माथे पर तीखी रेखाएँ खिंच आई हैं। फिर सहसा निर्णयात्मक लहजे में उन्होंने कहा, “नहीं, मैं नहीं समझता कि इस समस्या ने मुझे कभी पीड़ित किया है।”

“कुछ अरसा पहले अंग्रेजी नाट्य आलोचक टॉयनन से बातचीत करते हुए सार्त्र ने कहा था कि आज के युग में कोई भी प्रतिगामी लेखक महान् साहित्य की रचना नहीं कर सकता। इस संबंध में आप क्या सोचते हैं?”

“इस कथन से सहमत होना मुश्किल है। वैसे मैं स्वयं एक ऐसा लेखक हूँ जिसे लोग ‘वामपंथी’ या ‘समाजवादी’ कहते आए हैं। इसके बावजूद मैं सोचता हूँ अपने प्रतिगामी विचारों के रहते भी इलियट और काम्यू ने महान् रचनाओं की सृष्टि की है।”

3. गंभीर चिंतन-प्रधान भाषा—संस्मरणों में लेखक के सामने ऐसे कई क्षण आए हैं जब वह धर्म, राजनीति, व्यक्ति, फासिज्म आदि को लेकर गंभीर चिंतन करता है। साथ ही इस संबंध में विचार-विमर्श भी करता है, परंतु उसके अधिकांश विचारात्मक संवाद लेक्सनेस के साथ बातचीत करने पर ही स्पष्ट होते हैं। ऐसे अवसरों पर संवादों की भाषा भी गंभीर एवं चिंतन प्रधान हो जाती है। इसी आधार पर निम्न उदाहरण प्रस्तुत है—

“आज के प्रचार के युग में लेखकों की आवाज कोई विशेष महत्व या प्रभाव रखती है मुझे इसमें संदेह है। गंभीर साहित्य की ओर भला कितने लोग ध्यान देते हैं? ‘लाइफ’ और ‘टाइम्स’ की पत्रिकाएँ मेरी पुस्तकों से कहीं ज्यादा लोकप्रिय हैं। सस्ती फिल्में, रेडियो, टेलीविजन का गोरखधंधा लोगों के दिमागों पर इस कदर हावी है कि कुछ भी सोचने समझने का अवकाश इन्हें शायद ही कभी मिल पाता हो। मेरे विचार में आज भी प्रत्येक छोटे-बड़े देश में राजनीतिज्ञों का ही बोलबाला है। आम लोगों की नियति उनके दाँव-पेंच द्वारा ही नियोजित होती है। वैसे मेरे विचार में शुद्ध निश्चित रूप से नहीं होगा, इसलिए नहीं कि लेखक अपनी शक्ति से उसे टालने में सफल होंगे बल्कि इसलिए कि आज राजनीतिज्ञ भी अणु अस्त्रों की संहार शक्ति से डरते हैं। पहले या दूसरे विश्वयुद्ध से पूर्व कई देशों में युद्ध के प्रति काफी उत्साह पाया जाता था। आज मुझे कहीं किसी देश में वह दिखाई नहीं देता...”

“आपका अभिप्राय है कि इस युग के लेखक एक असहाय गवाह होने के अतिरिक्त कुछ कर पाने में असमर्थ हैं?”

“मुझे संदेह है कि वह वस्तुस्थिति में कोई बुनियादी परिवर्तन कर सकता है। दूसरे युद्ध के आरंभ होने से पूर्व जर्मनी में अनेक ऐसे साहित्यकार थे, जिन्होंने फासिज्म का तीव्र विरोध किया था किंतु क्या उन्हें राजनीतिज्ञों की चालों के आगे कुछ भी सफलता मिल सकी?”

4. अलंकृत और काव्यात्मक भाषा—संस्मरण में काव्यात्मकता आना स्वाभाविक ही है परंतु संवादों में अलंकृत भाषा का प्रयोग कम हुआ है। प्रायः ऐसी भाषा स्वगत कथनों में ही प्रयुक्त हुई है। स्वगत-कथन भी एक प्रकार के संवाद हैं। वहाँ स्वयं व्यक्ति अपने निज से बात करता है अतः संवादों के अंतर्गत आत्मकथनों को लेना समीचीन ही होगा। एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

“उस रात ‘टेरर ऐंड मिजरी’ देखते हुए मैं पहली बार समकालीन शब्द से परिचित हो पाया। यदि उसका कोई अर्थ है तो सिर्फ एक प्रयोग, जब आदमी के अस्तित्व की हर तह एक नये स्तर पर अप्रत्याशित अर्थ ग्रहण कर लेती है...जब बाह्य परिस्थिति एक बेडोल, विकृत छाया है (एक गूँगे दैत्य की मानिंद) जो न कुछ कहती है, न हमारे सामने से हटती है, एक असह्य-सा दबाव जिसे हर मनुष्य सोते जागते अपने पर महसूस करता है। कुछ लेखक हैं जो इस दैत्य से मुक्ति पाने के लिए उसे अपने एक आत्मपरक प्रतीक में ढाल लेते हैं। तब बाह्य इतना पराया, इतना डरावना नहीं रहता। काफ़का और एक दूसरे अर्थ में सार्त्र ऐसे ही लेखक हैं। यह एक रास्ता है, इस भयावह सुरंग से बाहर आने का, एक अमानवीय ‘दैत्य’ को निजी प्रतीक द्वारा साधारण औसत वास्तविकता में ढालने की प्रक्रिया।”

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें (Fill in the blanks) :

1. संस्मरण में का तत्व विद्यमान रहता है।
2. संस्मरणों की भाषा सरल, रोचक तथा है।
3. पेरिस में घूमते समय लेखक की गलती से कमरे में बंद हो गया।
4. बोझिलता को कम करने के लिए लेखक ने अरबी, फारसी के शब्दों का प्रयोग किया है।

6.2 भाषा संबंधी विशेषताएँ

निर्मल वर्मा की भाषा विशेषताओं का पर्यवेक्षण करने पर हम पाते हैं कि उसमें निम्नांकित विशेषताएँ मुख्य रूप से मिलती हैं—

1. सरलता, रोचकता एवं प्रवाहपूर्णता—कोई भी रचना पूरी तरह से पढ़े जाने के लिए लिखी जाती है। इसलिए उसके प्रत्येक वाक्य और अनुच्छेदों में कुछ ऐसी व्यवस्था की जाती है कि पाठक रुचिपूर्वक उसे पढ़ता चले। इसके लिए आवश्यक है कि संस्मरण की भाषा सरल एवं प्रवाहपूर्ण हो। संस्मरण स्मृति को आधार बनाकर लिखा जाता है। उस स्मृति को काँट-छाँट कर रोचक बनाकर प्रस्तुत करना लेखक का कौशल है। संस्मरणकार लिखते-लिखते कभी कोई वाक्य या प्रसंग छोड़, जोड़ देता है, डोट देता है, विस्मयादि चिह्न लगाता है, प्रसंग बदलता है। इस प्रकार से वह वर्णन को रोचक, सरल एवं प्रवाहपूर्ण बनाता है। ‘चीड़ों पर चाँदनी’ की भाषा में यह गुण हमें सर्वत्र मिलता है। संस्मरणों की भाषा सरल, रोचक तथा प्रवाहपूर्ण है। इसीलिए अपने परिवेश के ध्वनन में पूर्णतया सार्थक रही है और इन्हीं गुणों के कारण हमें सर्वत्र स्वाभाविकता परिलक्षित होती है और प्रत्येक प्रसंग को भली-भाँति समझने में सहायक भी हुई है। भाषा की ये विशेषताएँ वर्णन और संवाद दोनों में मिलती हैं। इसीलिए वर्णन एवं संवाद दुरूह न होकर सहज संवेद्य बन पड़े हैं।

2. प्रसंगानुकूलता—निर्मल वर्मा की भाषा की एक अन्य विशेषता उसकी प्रसंगानुकूलता है। प्रसंग के अनुरूप ही वह बदल जाती है। उस परिवेश का पूर्णरूपेण अनुभव पाठक को हो जाता है। चिंतन-प्रधान क्षणों में उसकी भाषा गंभीर, विचार प्रेरक तथा तत्सम शब्दावली युक्त होती है तथा भावुक क्षणों में भाषा चित्रात्मक एवं प्रतीकात्मक। इसी प्रकार के एक वर्णन में उनकी भावना प्रधान भाषा का अवलोकन करें—

“कितने कम याद रह पाते हैं चित्र, दीवार पर टँगें फ्रेमों में बंद खून और पसीने से लिथड़े स्वप्न और हम हैं कि हर कदम पर सदियों को पार करते जाते हैं। संग रह जाता है एक आभास। रंगों और आकृतियों से उत्पन्न हुई किंतु उससे अलग एक स्मृति। शून्यता को काटती हुई एक उड़ान, एक चीख, बंद सदियों की कुछ चाभियाँ, जिन्हें हम अपने संग ले आते हैं और बाद में खोलते हैं, अकेले में, अपने ही अकेलेपन को।”

3. प्रसाद एवं माधुर्य गुण संपन्नता—संपूर्ण पुस्तक को देखा जाए तो उसकी भाषा में प्रसादत्व एवं माधुर्य पाते हैं। कहीं-कहीं तो लेखक पूर्णतः कवि के सामने झुक गया है, वहाँ भाषा में माधुर्य का भाव स्वयंमेव आ जाता है। भावपूर्ण क्षणों में माधुर्य गुण की अजस्र धारा प्रवाहमान होती परिलक्षित होती है। उदाहरणार्थ एक वर्णन देखें—

“चट्टानों के शिखरों पर घास के कुछ टुकड़े हैं जिन पर सागर पक्षियों का झुंड चक्कर काट रहा है, उनकी छाया नंगी चट्टानों पर मँडराती है और गायब हो जाती है। रात के धुंधले आलोक में उनके फड़फड़ाते डैने जैसे किसी बहुत पुराने दुःस्वप्न के स्मृति अंश हों। मध्यरात्री की डूबती धूप में डबडबाये द्वीप ... एक जबरदस्त चाह। सबकुछ एक स्वप्निल, अशरीरी छायालोक में लिपटा जान पड़ता है लेकिन देखें तो कुछ भी स्वप्निल नहीं, कुछ भी अशरीरी नहीं। अपने अनुभव पर ही अविश्वास होता है ... क्या हम छू सकते हैं (पकड़कर रख सकते हैं?) उसको जो कभी दिबूसी की सिंपानी ‘सागर’ में छलछला आया था, स्वर्णों का फेनिल आलोक, फड़फड़ाहट (दिल की, पंखों की), क्रंदन

अपने निजत्व की सीमाओं को तोड़ता हुआ एक मदमाता ज्वार।

नोट

फिर एक अजीब-सी चाह, जिसका कोई तुक कोई अर्थ नहीं।

एक चाह, उस सीमा तक, जहाँ मृत्यु है।



टास्क निर्मल वर्मा के संस्मरण की भाषा की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

4. चित्रात्मकता—संस्मरणकार अपने भोगे हुए क्षणों की स्मृतियों को साकार करता है और पाठक से यह अपेक्षा रखता है कि उसके अनुभवों का सहभागी बने। अतः यह अत्यंत आवश्यक है कि अपने वर्णनों में चित्रात्मकता का समावेश करे जिससे दृश्य पाठक की कल्पना में साकार हो उठें। ‘चीड़ों पर चाँदनी’ में प्रकृति तथा वातावरण के दृश्य चित्रोपमता से युक्त हैं। एक उदाहरण इस संदर्भ में प्रस्तुत है—

“हवा सचमुच धुले काँच की तरह पारदर्शी है, इतनी साफ और हल्की कि उसे जेब में ठूँसकर दिल्ली ले जाने का मन करता है। दुख इतना ही है कि आसपास कहीं भी एक पेड़, हवा में सरसराता एक भी पत्ता नहीं दिखाई देता। चारों ओर वनहीन नंगी धरती का फैलाव। जन्म से मैं पहाड़ी हूँ, वृक्षों के बिना हमेशा मुझे अजीब-सी रिक्तता का आभास होता है। किंतु जंगल नहीं है, इस अभाव की पूर्ति मानो आसपास फैला मांसल, लगभग मन-स्पर्शी वायुमंडल कर देता है। धरती खुली और अबाध धरती की रूपरेखा इतनी कोमल और सुडौल हो सकती है, इसकी कल्पना कभी नहीं की थी। पेड़ों का होना, यह अपना सुख है, लेकिन इस सुख से मैं परिचित हूँ। उनके न होने से जो एक विशाल हल्कापन चाकू की-सी चमकीली धार सी, हवा में तिरते रंग, दूरी को निकट से देखने का मायावी चमत्कार, यह एक अलग अनुभूति थी, जिसका परिचय पहले कभी नहीं मिला। इसलिए मैं कहता हूँ कि हर यात्री को अपनी झोली खोलकर यात्रा करनी चाहिए। जो न मिले उसका दुख न करके जो मिले उसे समेटकर ही अपने भाग्य की सराहना करनी चाहिए क्योंकि यह मैं अपने अनुभव से जानता हूँ कि सुख का अभाव कभी दुख का कारण नहीं बनता, उल्टे एक नये अपरिचित सुख को जन्म देता है।”

5. पात्रानुकूलता—‘चीड़ों पर चाँदनी’ के संवादों की भाषा पात्रानुकूल है। प्रत्येक पात्र अपनी ही भाषा बोलता दिखाई देता है। अधिकांश पात्र विदेशी हैं अतः उनके संवादों में स्वभावतः अंग्रेजी के शब्द आ जाते हैं। साथ ही लेखक का परिचय अधिकांशतः साहित्यिक लोगों से हुआ था अतः भाषा में साहित्यिक पुट भी दिखाई अवश्य पड़ता है। उदाहरणार्थ—

और तब मैंने सुना, पीछे से कोई कह रहा है—

“हैलो, एन इंडियन?”

“या”, मैंने कहा।

“वांट सम बियर?”

“मे बी समा।”

उसने अपने गिलास से थोड़ी-सी बियर मेरे गिलास में उड़ेल दी। उसका उच्चारण अमरीकी लड़कियों सा था। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि मुझे उसके संग इशारों से बात नहीं करनी पड़ेगी।

“प्योर इंडिया” उसने अपना गिलास हवा में उठाया और मेरे गिलास से छू दिया “प्योर?” मेरी प्रश्नभरी निगाहें उसके चेहरे पर उठ गईं। मैंने सोचा था वह इंग्लैंड या अमेरिका कहेगी। उसने फिर अपना गिलास उठाया और धीरे से कहा—“कैनाडा।”

नोट

इस तरह लेखक के साहित्यिक मित्रों की बातचीत की भाषा उनके अनुकूल ही है—

“दो साल पहले मैं कुछ भी नहीं समझती थी। महज दिन-रात एक फिजूल-सी बेचैनी महसूस करती थी और अब” वह क्षणभर रुकी मानो शब्दों को टटोल रही हो। “और अब कभी-कभी लगता है जैसे मैं अपनी तरफ से जिंदगी को माने दे सकी हूँ”

“अपनी तरफ से?”

“हाँ, क्योंकि सूक्ष्म अर्थ में मुझे अपने काम से ज्यादा सुकून नहीं मिलता।”

उसकी आवाज हल्के से सिहर गई।

“पिछले साल मैं अल्जीरिया गई थी सिर्फ चंद हफ्तों के लिए। गाँव के गाँव तबाह हो गए हैं वहाँ हजारों आदमी बिना घर-बार के, सड़कों पर भूखे और बीमार बच्चे। ‘मानव उत्पीड़न’, पहली बार मुझे इस शब्द के सही माने पता चले।”

6. वर्णन विचित्रता—निर्मल वर्मा की भाषा कई स्थलों पर विस्तार को समेटने के लिए घटनाओं को आगे सरका देती है। उससे एक तो पाठकीय श्रम बचता है, दूसरे भाषा में वर्णन वैचित्र्य आ जाता है। पेरिस में घूमते समय वह एक दिन दुबुआ की गलती से कमरे में बंद हो गया परंतु उसने उस बात को अधिक विस्तार नहीं दिया। पूरे एक दिन वह कमरे में बंद रहे परंतु लौटकर आने पर उसने दुबुआ से शिकायत या बंद करके जाने की अधिक व्याख्या नहीं की।

“जब दुबुआ लौटे, तो रंग दूसरा ही था। इससे पेशतर कि मैं कुछ कह पाता, वह मुझे बिस्तर पर घसीट कर नाचने लगे थे। पीकर आए थे और पूरी आवाज में गा रहे थे। उनके मित्र प्लूम कोने में कुर्सी घसीटकर बैठ गए थे और बराबर हँसते जा रहे थे। जब वह कुछ बोलने लायक हुए तो पहली बार गेगरीन का नाम कानों में पड़ा। दुबुआ के उत्साह की कोई सीमा नहीं थी। पहली ‘स्पेस यात्रा’ की खुशी कहाँ और किस तरह मनायी जाए, देर तक इसी पर विवाद होता रहा। सीढ़ियों के नीचे उतरते हुए भी हम चीखते-चिल्लाते इसी विषय पर बहस कर रहे थे। प्रस्ताव रखने की देर न होती कि उसे ठुकरा दिया जाता।”

6.3 वाक्य रचना संबंधी विशेषताएँ

1. संक्षिप्त और चुस्त वाक्य रचना—‘चीड़ों पर चाँदनी’ का वाक्य रचना का स्वरूप प्रायः संक्षिप्त और चुस्त है। न तो उसमें शैथिल्य है न ही अधिक विस्तार। इस कारण उसमें अर्थ गाम्भीर्य एवं कसाव आ गया है। निर्मल वर्मा की वाक्य रचना संबंधी यह विशेषता वर्णन में भी है और संवादों में भी। सुविधा के लिए दोनों प्रकार की वाक्य रचना के उदाहरण प्रस्तुत हैं—

“स्काउल!” अचानक मेरे सामने बियर का गिलास उठाया गया। मेरे गिलास को अपने गिलास से टकराते हुए उनकी अजनबी आँखें मुझ पर उठ आयीं। छोटी सी ‘गोरी’ दाढ़ी बियर के सफेद भाग में भीग रही थी।

“कहाँ के रहने वाले हो?”

“हिंदुस्तानी।”

“यहाँ कैसे आना हुआ?”

“जहाज की प्रतीक्षा कर रहा हूँ ... आइसलैंड के लिए।”

“आइसलैंड!” एक अजीब विस्मय का भाव चेहरे पर सिमट आया, जैसे उन्हें मेरी बात पर विश्वास ना हुआ हो।

“क्या करोगे आइसलैंड जाकर?”

“खास कुछ नहीं।”

नोट

“मेरा मतलब है ... आइसलैंड ही क्यों?” और मैंने पहली बार उनकी ओर ध्यान से देखा ... भूरी दाढ़ी के बीच दो आँखें एक अर्थहीन मुस्कराहट में चमक रही थीं। वह कुर्सी खींचकर मेरे निकट खिसक आए और दबे स्वर में लगभग फुसफुसाते हुए उन्होंने पूछा, “तुम कम्युनिस्ट हो?”

इस प्रकार मेरी रूखी उत्सुकता एक गहरे कौतूहल में बदल गई। बियर का घूँट लेकर मैंने जानबूझकर रहस्य-भरे लहजे में उनसे पूछा, “यदि हूँ तो ... ?”

“यदि न भी हो तो आइसलैंड जाकर जरूर बहाना करना होगा कि तुम कम्युनिस्ट हो ... यह मेरी नेक सलाह है और कुछ नहीं।”

“लेकिन क्यों?”

“यह ज्यादा इज्जत की बात मानी जाती है। आइसलैंडी कम्युनिस्टों से जितने नफरत करते हैं, उससे ज्यादा उनकी इज्जत करते हैं। विरोधाभास है न?”

इसी प्रकार वर्णन में भी संक्षिप्त वाक्य रचना का प्रयोग किया गया है। एक उदाहरण प्रस्तुत है—

“स्मृतियों में वे जिप्सी स्मृतियाँ हैं, जिनका कोई घर ठिकाना नहीं। भीतर हमें बच-बचकर रास्ता बनाना पड़ा। बियर के गिलास से आँखें ऊपर उठीं। एक हल्की-सी मुस्कराहट उनके होंठों पर आसिमटी। मैंने सोचा उन्हें शायद कोई नई हँसी-मजाक की बात सूझी है। किंतु वे चुप रहे। सिर्फ गिलास पर मुस्कराहट की छाया झूलती रही।”



टास्क लेखक को दुबुआ द्वारा कमरे में बंद कर दिये जाने की घटना का वर्णन कीजिए।

2. प्रभाववात्मक लंबे-लंबे वाक्य—प्रभाव की सृष्टि करने के लिए निर्मल वर्मा ने अनेक स्थानों पर लंबे-लंबे वाक्यों की संयोजना की है। इन लंबे-लंबे वाक्यों द्वारा लेखक की मनःस्थिति एवं वातावरण की सृष्टि सुंदर रूप ले सकी है। जैसे—

“चट्टानों के शिखरों पर घास के कुछ टुकड़े हैं, जिन पर सागर पक्षियों का झुंड चक्कर काट रहा है, उनकी छाया नंगी चट्टानों पर मँडराती है और गायब हो जाती है, रात के धुंधले आलोक में उनके फड़फड़ाते डैने जैसे किसी बहुत पुराने दुःस्वप्न के स्मृति अंश हों। मध्य रात्री में डूबती धूप में डबडबाये द्वीप एक जबरदस्त चाह। सबकुछ एक स्वप्निल, अशरीरी छायालोक में लिपटा जान पड़ता है, लेकिन देखो तो कुछ भी स्वप्निल नहीं, कुछ भी अशरीरी नहीं अपने अनुभव पर ही विश्वास होता है क्या हम छू सकते हैं (पकड़कर रख सकते हैं)?”

3. कलात्मकता और सुघड़ता—निर्मल वर्मा की वाक्य रचना बड़ी कलात्मक और सुघड़ दृष्टिगत होती है। कहीं-कहीं काफी छोटे वाक्यों द्वारा लेखक ने कलात्मकता की सृष्टि की है जिससे प्रभाव क्षमता में वृद्धि हुई है। कहीं-कहीं लंबे वाक्यों द्वारा इस कलात्मकता को उत्पन्न किया गया है। चूँकि यह गुण पुस्तक में सर्वत्र उपलब्ध होता है इसका उदाहरण देना इसीलिए उचित नहीं।

6.4 शब्द-शिल्प सौंदर्य

निर्मल वर्मा की भाषा के शब्द सौंदर्य का वर्णन करने के लिए हमें रचना में प्रयुक्त शब्दों, मुहावरों, अलंकारों आदि को देखना पड़ेगा। इस दृष्टि से निर्मल वर्मा जी की भाषा में प्रयुक्त शब्द प्रसंगानुकूल अनेक रूपों तथा भाषाओं के मिलते हैं। उनका संक्षिप्त आकलन नीचे दिया जा रहा है—

1. हिंदी के तत्सम शब्दों का प्रयोग—‘चीड़ों पर चाँदनी’ की भाषा में तत्सम के अनेक शब्दों का प्रयोग किया गया है जिससे भाषा में गरिमा एवं उदात्तता आ गई है। ये शब्द शुद्ध एवं परिनिष्ठित हिंदी का निर्माण करने में सहायक

हैं। जैसे-अयथार्थ, स्वप्निल, आलोक, विस्मय, मंत्र-मुग्ध, भीमकाय, प्रतिक्रिया, संस्कृति, अखंडित, प्रवाहित, विशिष्ट, संदर्भ, सम्पृक्त, वैविध्य, अर्थ, सूक्ष्मतम, पुनरुत्थान, जागरण, प्रस्फुटित, परिपक्व, सदिग्ध, भविष्य।

2. हिंदी के तद्भव शब्दों का प्रयोग—प्रभावोत्पादकता उत्पन्न करने एवं स्वाभाविकता, परिवेशगत स्वाभाविकता लाने के लिए कहीं-कहीं निर्मल वर्मा ने हिंदी के तद्भव शब्दों का प्रयोग भी किया है। इससे भाषा का रूप निखर आया है—उदाहरणार्थ : ‘अंधड़, घोटने वाला, दम उखाड़ना, हथियाना, दुतल्ला, उजड़ा, सिमटी, झुर्रियाँ, तपती, गर्माहट आदि।

3. अरबी, फारसी-शब्द—भाषागत बोझिलता को कम करने के लिए निर्मल वर्मा ने कई स्थानों पर अरबी, फारसी के शब्दों का प्रयोग किया है जिससे भाषा में सहजता तथा स्वाभाविकता आ जाती है। जैसे—फुरसत, होश, शामिल, दरवाजे, जिदगी, वक्त, गुजरना, खोयी-सी, हकीकत, चीज, अक्सर, सिर्फ, महसूस, औसत, बिल्कुल, सदी, हैसियत, दीवार, अजीब, लापरवाही, आबादी, निगाह, वीरान, मार्निंद, फासले, मलबा, मुद्दत, इमारतें, चारदीवारी, साबुत, महज, हैरत, बिस्तर आदि।

4. अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग—लेखक ने अपने यूरोप यात्रा के संस्मरण ‘चीड़ों पर चाँदनी’ में संकलित किये हैं, इसलिए अंग्रेजी भाषा के शब्दों का आना स्वाभाविक ही था। कहीं-कहीं तो लेखक ने संवादों में पूर्णतः अंग्रेजी भाषा का ही प्रयोग किया है। जैसे—थियेटर, फासिस्ट, फोटोग्राफी, प्लेटफार्म, स्काउल, एक्सप्रेसनिस्ट पेंटिंग इंडिपेण्डेन्ट पीपुल, ब्लैकडेथ, ट्रेन, कोन्याक, नॉयलान, पेम्फलेट, स्ट्रिपटीज, नाइट क्लब, बल्गेरियन, फासिज्म, नेवर अगेन, मिनिस्टरी, बट वाजंट ही ब्लडी कम्युनिस्ट, किस्टोपार, डफल बैग, हिच-हाइकिंग, लिफ्ट, रोमाटिक, वेटिंग रूम, मेरी गो एराउंड, आरियंटल, प्रिजर्वेटिव, पिक्चर पोस्टकार्ड, कंसर्ट, क्लॉक रूम, आयरन कर्टेन, बट डॉट यू नो इट इज बिहाइंड आयरन कर्टेन, रियली इत्यादि।

5. मुहावरे और लोकोक्तियाँ—निर्मल वर्मा ने यत्र-तत्र मुहावरों आदि का प्रयोग किया है जिससे भाषा में प्रवाह एवं चमत्कार उत्पन्न हो गया है। कुछ मुहावरे द्रष्टव्य हैं—उबल पड़ना, ताकना, खिल्ली उड़ाना, आँख दिखाना इत्यादि।

6. सूक्तियों का प्रयोग—भाव सबलता के लिए लेखक ने कई विचारकों के विचारों को उद्धृत किया है जिनमें से कुछ निम्न हैं—

1. हजारों मील की यात्रा एक छोटे कदम से आरंभ होती है।
2. ब्राथल्स ग्रो व्येहर सेलर्ज गो (जहाँ नाविक वहाँ वेश्यालय)।
3. हर जाति अपने जीवन-सौंदर्य को अभिव्यक्त करने का साधन चुन लेती है।
4. बीच यात्रा में मुहब्बत से बचना चाहिए।

7. अलंकारों का प्रयोग—निर्मल वर्मा कवि हृदय युक्त व्यक्ति हैं, अतः उनकी भाषा में काव्यात्मकता अधिक है। संस्मरण में काव्यात्मकता होना उसका एक आवश्यक गुण है। काव्यात्मकता आने से अलंकारों का सहज प्रयोग भी संभव है। अतः लेखक ने अनेक स्थानों पर अलंकारों का प्रयोग किया है जैसे—

1. रिक्याविक का शहर उस प्रेमिका की मानिन्द है जिसकी सही पहचान चेहरे में न होकर समूची देह में छिपी है।
2. ये ख्याल बादलों की तरह बह आते हैं।
3. दीवार पर टंगे फ्रेमों में बंद खून और पसीने में लिथड़े स्वप्न।

6.5 ‘चीड़ों पर चाँदनी’ की शैली

निर्मल वर्मा के संस्मरण संकलन में लेखक ने अनेक प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया है। यद्यपि संस्मरण की शैली संस्मरणात्मक वर्णन शैली ही अधिक होती है परंतु लेखक ने विविधता लाने के लिए इसमें अनेक शैलियों का

समावेश किया है जिससे रचना सरस और रोचक हो गई है। रचना में निम्न प्रकार की शैलियाँ मिलती हैं—

नोट

1. वर्णनात्मक शैली
2. नाटकीय शैली
3. पत्रात्मक शैली
4. भावात्मक-रसात्मक शैली
5. चित्रात्मक शैली।

अब आगे इन पर ‘चीड़ों पर चाँदनी’ के आधार पर सोदाहरण विचार किया जाएगा।

1. वर्णनात्मक शैली—संस्मरण पुरानी घटनाओं का स्मरण कर उसे पुनः प्रस्तुत करने की विधि है। अतः इसमें सबसे उपयोगी शैली यही वर्णनात्मकता ही है। इस शैली में लेखक घटनाओं, चरित्रों आदि का वर्णन करता चलता है। लेखक की विशेषता यह है कि इस शैली का प्रयोग करते हुए भी इसमें न तो शैथिल्य आया है न ही पुरानापन वर्णन इसमें सर्वत्र नयापन विद्यमान है। इसका एक उदाहरण प्रस्तुत है—

“आइसलैंड यूरोप का अकेला देश है, जिसकी अपनी कोई सेना नहीं। वैसे भी एक देश के लिए जिसकी जनसंख्या दिल्ली के एक इलाके करोल बाग की आबादी की भी चौथाई है, अलग से सेना रखना काफी अर्थहीन है। आइसलैंड के निवासियों के लिए सेना, सैनिक अनुशासन हमेशा उपहास का विषय रहे हैं। कई चीजें हैं जिसकी कल्पना मैं कभी नहीं कर सकता। आइसलैंड के फौजी पोशाक में ‘मार्च’ करते हुए देखना उनमें से एक है। तोपों और बंदूकों से कभी उन्हें अपने देश की रक्षा करने की आवश्यकता नहीं पड़ी। शायद इसी कारण जब अमरीकी सेनाओं ने उनकी रक्षा के लिए अड्डे स्थापित किए तो किसी आइसलैंड को उनकी उपयोगिता पर अधिक विश्वास नहीं हुआ। इस संदर्भ में लेक्सनेस का एक वाक्य याद आता है।”

“मुझे अमरीकी बहुत अच्छे लगते हैं, यदि उनसे फौजी पोशाक में अपने देश में न मिलना पड़े।”



टास्क ‘चीड़ों पर चाँदनी’ में वर्मा जी द्वारा प्रयुक्त शैली पर अपने मत प्रकट कीजिए।

2. नाटकीय शैली—संवादों में निर्मल वर्मा की नाटकीय शैली द्रष्टव्य है। संवादों में जहाँ भी कथा का पूर्वा से संबंध होता है नाटकीयता आ जाती है और वहाँ नाटकीय शैली का प्रयोग किया गया है। लेखक का एलिस से वार्तालाप इसी शैली में लिखा गया है—

“नाट डान्सिंग?” एलिस ने मेरी ओर देखा।

“और तुम?”

“मुझे बियर ज्यादा अच्छी लगती है।” एलिस उग्र में कुछ ज्यादा बड़ी है, लेकिन उसकी मुस्कुराहट में बच्चों की निरीहता झलकती है। एवलिन एक इराकी के संग नाचने के लिए कुर्सी से उठ खड़ी हुई किंतु उसके हाथ में बियर का गिलास अब भी झूल रहा है।

“मुझे डर है मेरे जाने के बाद तुम सारा गिलास खाली कर दोगे।” उसने मुझसे कहा।

“गुड लक एवलिन!” एलिस ने कहा।

पियानो पर नीग्रो युवक ने एक नई धुन छेड़ दी और एवलिन कुछ देर के लिए भीड़ में खो-सी गई।

मैं और एलिस बातें करने लगे। वह कैनाडा में सोशल वर्कर है और पहली बार यूरोप आई है।

नोट

“लगता है यह मेरा अपना फेस्टीवल है।” उसने कहा।

“कुछ दिनों के लिए एवलिन के साथ साल्जवर्ग जाऊँगी। फिर होम स्वीट होम ...।”

“यहाँ मैंने तुम्हें पहली बार देखा है क्या तुम रोज आती हो?”

“हाँ हर रात। जानते हो कैनाडा में मैं उतने लोगों से खुलकर नहीं मिल पाती थी। यहाँ अभी तक मैंने पचास इराकियों को मित्र बनाया है। हम हर रोज सोचते हैं, आज किस देश के प्रतिनिधियों को फ्रेटर्नाइज किया जाए, बट यू आर द फर्स्ट इंडियन।”

3. पत्रात्मक शैली—रचना यद्यपि स्वतंत्र संस्मरणों का समूह है फिर भी लेखक की शैली एक-सी रही है। कहीं पत्रों के माध्यम से वह अपनी बात को प्रस्तुत करते हैं। जैसे—

“तुम्हें मेरी कहानियों के पात्र बहुत उदास और दुखी जान पड़ते हैं। यह मैं जानबूझकर नहीं करता। लिखते समय स्वतः हो जाता है। मैं अपने को दुखी व्यक्ति नहीं मानता। कम से कम लिखते समय मैं अपने आप को हमेशा सुखद मनःस्थिति में पाता हूँ। यह बात हमेशा नोट की गई है कि लोग स्वभावतः दुखी और निराश होते हैं। वे बहुधा हल्की-फुल्की और हँसी-मजाक की चीजें लिखते हैं जबकि शांत और सुखी लेखकों की कृतियाँ अक्सर अवसादपूर्ण होती हैं। मैं एक ऐसा ही प्रसन्न व्यक्ति हूँ, कम से कम मैंने अपनी जिंदगी के आरंभिक तीस वर्ष आराम से बिताए हैं।”

4. भावात्मक-रसात्मक शैली—संस्मरणों का संबंध चूँकि प्रकृति से होता है, अतः उसमें काव्यात्मकता आना स्वाभाविक ही है। लेखक ने संस्मरण की वस्तु के साथ काव्यात्मकता का इस प्रकार सायुज्य बिठाया है कि उसकी भाषा गरिमापूर्ण ओज प्रधान बन गई है इसके लिए लेखक ने रसात्मक भावात्मक शैली को व्यवहृत किया है। एक उदाहरण इस प्रकार की शैली का द्रष्टव्य है—

“फिर आखिरी लम्हा—और तब उसके इर्द-गिर्द सबकुछ डूब जाता है—हमारा प्यार, आधी रात में जागे हुए पसीने में लथपथ स्वप्न, एक पगली-सी धड़कन और फिर वह भी नहीं जो शेष रह जाता है, देर तक हवा में टँगा रहता है वह है एक अजनबी अपनापन, जिसे हमने पहले कभी नहीं देखा जिसे हमने पिछले चंद क्षणों में पहली बार जाना था और जो अगले चंद क्षणों में दुबारा अजनबी बन जाएगा। एक स्वरहीन आलोक।”

5. चित्रात्मक शैली—इस प्रकार की शैली का प्रयोग ‘चीड़ों पर चाँदनी’ में बहुत हुआ है क्योंकि चित्रों के माध्यम से लेखक पाठक की स्मृति को जागृत कर उसके आगे दृश्य उपस्थित करने में सक्षम हो पाएगा। इसके द्वारा लेखक ने प्रकृति का वातावरण भी सुंदरतापूर्वक व्यक्त किया है। प्रस्तुत है चित्रात्मक शैली का एक उदाहरण—

“बीहड़ रास्ता, कहीं-कहीं बहुत तंग और छोटे पुलों पर हिचकोले खाते हुए हमारी लॉरी को घसीटना पड़ता था। कई बार ऐसा जान पड़ता था कि मोटर शेड को बीच में ही नाले परनाले ने ग़स लिया है। बीच नाली की धार में आकर बस के पहिए अड़ जाते थे। जूते-मोजों को उतारकर और पतलूनों के पहुँचे चढ़ाकर हम पानी के भीतर घुस पड़ते थे। बस को आगे धकेलते हुए जान पड़ता था जैसे पानी की बर्फीली धार काँच के टुकड़ों सी हमारे नंगे पैरों को छील रही है। खाँसती-खँखारती लॉरी आगे बढ़ती थी और हम हाथों से नीले सिकुड़े पैरों को सेंकते हुए खिड़की के बाहर देखने लगते थे—बाहर जहाँ दिन की मंद पड़ती हुई रोशनी अँधेरे को महज छू-भर लेती थी, लेकिन वास्तव में अँधेरा कहीं नहीं था। सिर्फ रोशनी की ही नरम, पीली-सी छाया थी जो दिन के आलोक पर पतले छिलके सी उतर आती थी।”

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि निर्मल वर्मा की भाषा-शैली अत्यंत उत्कृष्ट, सुघड़, कलात्मक एवं प्रवाहपूर्ण है। इसमें भाषा और शैली की विविधता दिखाई देती है किंतु जिस प्रकार अलग-अलग संस्मरण होते हुए भी उसमें ऐक्य है उसी प्रकार भाषा शैली की विविधता होते हुए भी आंतरिक संघटन है। संस्मरणों की भाषा क्लिष्ट, काव्यात्मक

है परंतु साधारण बोलचाल की भाषा एवं अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग करके लेखक ने उसे सरल बनाने का प्रयास किया है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि किसी साहित्यिक रचना की भाषा में गुण होने चाहिए वे सभी ‘चीड़ों पर चाँदनी’ में उपलब्ध हैं।

6.6 प्रमुख गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्या

1

“मुझे कई बार ऐसा लगता है कि जो समय सबके लिए, यहाँ के निवासियों के लिए बीत गया है, वह मेरे लिए अभी तक जीवित है, प्रतीक्षारत है और जब तक मैं उसे अन्य प्राणियों की तरह भोग नहीं लूँगा, वह मुझ से छूटेगा नहीं। गड़े मुर्दे? वह हर आदमी के भीतर होते हैं—जब कभी मध्य यूरोप से गुजरता हूँ मुझे उनका ठण्डा स्पर्श महसूस होने लगता है। मैं पूर्वाग्रह ग्रस्त नहीं हूँ किंतु आज भी मैं किसी जर्मन को देखता हूँ, तो मेरे भीतर एक फिजूल बेमानी-सी बेचैनी होने लगती है।”

प्रसंग—हिंदी साहित्य में संस्मरण विधा कतिपय नवीन विधाओं में से एक है। उसमें किसी व्यक्ति, स्थान अथवा घटना से जुड़ी स्मृतियों को पुनर्जीवित करके पाठक के समक्ष रखा जाता है। श्री निर्मल वर्मा ने ‘चीड़ों पर चाँदनी’ नामक संस्मरण संग्रह में अपनी यूरोप की यात्रा के अनुभव लिखे हैं। अलग-अलग स्थान पर उन्हें अलग तरह की अनुभूति होती है और वह उसकी उसी प्रकार से अभिव्यक्ति करते हैं। यहाँ वह आइसलैंड जाते हुए रास्ते में बर्लिन रुके तो उनके हृदय में द्वितीय विश्वयुद्ध की स्मृतियाँ उभर आईं और उन्होंने कहा—

व्याख्या—जब तक व्यक्ति किसी घटना को भोग नहीं लेता वह उसके लिए व्यतीत नहीं होती। लेखक बर्लिन में गया है और विभाजित बर्लिन को देखकर उसके हृदय में द्वितीय विश्वयुद्ध की विभीषिका का आतंक भर आया। वह मानते हैं कि वह युद्ध का समय संभवतः यूरोपवासियों के लिए बीत गया है क्योंकि वे उस अनुभव से गुजर चुके हैं। वह अनुभव इतना पीड़ादायक था कि वे उसे पुनः दोहराना नहीं चाहते परंतु लेखक ने उसके विषय में मात्र सुना था। वह उसके जीवन का सत्य नहीं है। अतः उसे यह प्रतीत होता है कि वह युद्ध का काल संभवतः अभी भी उसकी प्रतीक्षा कर रहा है। जब तक लेखक भी उसे पूरी तरह भोग नहीं लेगा, उसके लिए वह समय व्यतीत नहीं होगा, लेखक यह मानता है कि हर व्यक्ति के भीतर गड़े मुर्दे होते हैं। वे मुर्दे स्मृतियों के होते हैं कि अनचाही स्मृतियों का उसने दमन कर लिया होता है। परंतु उचित सहचर्य मिलने पर वे स्मृतियाँ पुनः जागृत हो जाती हैं। उन गड़े मुर्दों का ठण्डा स्पर्श लेखक को तब महसूस होता था जब वह मध्य यूरोप में जाता था। इसकी स्मृति में वे दृश्य जागृत हो जाते थे जब लाखों यहूदियों की सामूहिक निर्मम हत्या की गई थी। लेखक कहते हैं कि उनके मन में जर्मनी के लोगों के प्रति कोई दुर्भावना नहीं है परंतु वह जब भी किसी जर्मन को देखते हैं उनके हृदय में अजीब-सी-निरर्थक सी व्याकुलता भर जाती है कि यही वह जाति है जिसके एक सदस्य ने विश्वविजय का झूठा स्वप्न देखा और उसे पूरा करने के लिए लाखों लोगों की नृशंस हत्या की।



टास्क लेखक ने ‘ठण्डा स्पर्श’ शब्द का प्रयोग किसके लिए किया है?

विशेष—प्रस्तुत पंक्तियाँ लेखक की राजनीतिक जागरूकता तथा मानवीय संवेदना की द्योतक हैं। यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि अनुभव से गुजरना ही व्यक्ति को अनुभवी बनाता है। कोई भी बात व्यक्ति की अपनी नहीं होती जबतक कि वह उसका भोगा हुआ यथार्थ न बने। ‘गड़े मुर्दे’ के माध्यम से लेखक ने ‘अचेतन’ सिद्धांत की मान्यता को स्पष्ट किया है। अचेतन विस्मृत स्मृतियों का पुंज है। उचित साहचर्य (associations) मिलने पर वे स्मृतियाँ पुनः जागृत हो जाती हैं इसीलिए लेखक ने उन भयावह स्मृतियों के लिए ‘ठण्डा स्पर्श’ शब्द का प्रयोग किया है।

नोट

संस्मरण व्यक्तिगत अनुभूतियों को स्थानीय अनुभवों से युक्त करके प्रस्तुत करने की कला है। इन पंक्तियों में लेखक की संवेदनशीलता एवं विचारशीलता के दर्शन होते हैं। शास्त्रीय ढंग से यदि भाषा का विश्लेषण करें तो पाएंगे कि प्रस्तुत गद्यांश की भाषा सहज, बोधगम्य एवम् साधारण बोलचाल की भाषा है जो प्रसाद गुण युक्त है। गड़े मुर्दे रूपकातिशयोक्ति अलंकार है तथा बेमानी-सी बेचैनी में आनुप्रासिकता है जिससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि लेखक की प्रवृत्ति काव्यात्मक अभिव्यक्ति की है। अपनी आत्मीयता को काव्य के माध्यम से प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति लेखक में है जिसके उदाहरण हमें अन्य संदर्भों में उपलब्ध होंगे। मूल रूप से समकालीन होने तथा इसी कारण गवाह होने और फिर जवाबदेही होने की स्थिति लेखक की तत्कालीन मनःस्थिति की द्योतक है।

2

“धूल का अंधड़ आने से पूर्व जैसे समूचे शहर में एक पीला, दम घोटने वाला आशंकित धुंधलका, धुंधलका भी नहीं उजाले का गिलगिला-सा फैल जाता है, जब हम सूनी सड़क पर किसी अज्ञात घर की दीवार से सटे खड़े रहते हैं और हर वह चीज जो बहुत साधारण और परिचित है, एक भयावह विकृत छाया लिये सामने से गुजर जाती है, मेरे लिए मध्य यूरोप का यह बहुत पुराना, परिचित स्मृति चित्र है जो आज भी रेल की खिड़की के बाहर देखते हुए उभर आता है।”

प्रसंग—‘चीड़ों पर चाँदनी’ श्री निर्मल वर्मा द्वारा लिखित यात्रा विवरणात्मक संस्मरण संग्रह है। लेखक की चेकोस्लोवाकिया से आइसलैंड तक की यात्रा के अनुभव इनमें संकलित हैं। बर्लिन में से गाड़ी गुजर रही है और लेखक जर्मनी के अतीत के प्रेम से भयभीत है। उसकी भावनाएँ काव्यात्मक होकर इस प्रकार व्यक्त हो रही हैं।

व्याख्या—लेखक कह रहा है कि वह लंदन और पेरिस जाते समय कई बार जर्मनी के बीच से गुजरा है किंतु यहाँ उतरने का मन नहीं हुआ। सदैव उसके सामने कोई अदृश्य-सा भय, अजीब सी झिझक आकर खड़ी हो जाती है। उस अमूर्त भय का मूर्तिकरण करने का प्रयास करते हुए लेखक कह रहा है—जिस प्रकार धूलभरी आँधी आने से पूर्व वातावरण में एक अजीब-सा सूनापन, एक धुंधलका-सा छा जाता है, एक दम घोटने वाला, पीला (दुखपूर्ण) धुंधलका छा जाता है, मध्य यूरोप में प्रवेश करते समय लेखक को यही महसूस होता है कि उजाला नहीं उजाले का आभास है। अभी तक युद्ध, आतंक, भय का वातावरण है और उस भय के वातावरण में सभी चीजें अस्पष्ट हो जाती हैं। उस स्थिति में जब व्यक्ति उस अंधड़ से बचने के लिए सूनी सड़क पर किसी अज्ञात घर की सूनी दीवार का सहारा लेकर खड़े रहते हैं, वहीं स्थिति उसे मध्य यूरोप में घूमते हुए महसूस होती है कि युद्ध के इस वातावरण से बचने का कोई उपाय नहीं है। एक दीवार का सहारा आँधी से बचने के लिए काफी नहीं, उसी प्रकार यह विचार उसे निरंतर भयभीत करता रहता है। उस आँधी में साधारण-सी चीजों की छाया भी अत्यंत विकृत और भयावह हो जाती है। वही भयावह चित्र लेखक की आँखों में, उसकी स्मृति में छाया हुआ है जो रेल में बैठे हुए भी उसका पीछा नहीं छोड़ रहा।

विशेष—लेखक ने गद्य में काव्यात्मकता का समावेश कर दिया है। एक उपमा के माध्यम से अमूर्त को मूर्त कर देने का प्रयास किया गया है। एक अजीब-सा भय उन्होंने धूल के अंधड़ के माध्यम से मानो साकार कर दिया हो। साथ ही उसके अंतर्मन की भावनाओं का स्पष्ट निरूपण हमें इन पंक्तियों के द्वारा मिलता है। उनकी संवेदना उन्हें विश्वयुद्ध की विभीषिका का स्मरण दिलाती रहती है।

पद्यांश की भाषा संस्कृतनिष्ठ तथा अलंकारयुक्त है जिससे वैचारिक गरिमा का प्रभाव आ गया है। रेल की खिड़की के बाहर देखकर स्मृत चित्रों का उभरना चेतना प्रवाह शैली का सुंदर उदाहरण है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

बहुविकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Questions) :

5. लेखक के अनुसार उसने अपनी जिंदगी के कितने वर्ष आराम से बिताये हैं?

नोट

- (क) बीस (ख) तीस
(ग) पन्द्रह (घ) इनमें से कोई नहीं।
6. ‘चीड़ों पर चाँदनी’ में निर्मल वर्मा ने कहाँ की यात्रा के अनुभव लिखे हैं?
(क) अमेरिका (ख) इंग्लैण्ड
(ग) यूरोप (घ) इनमें से कोई नहीं।
7. अनेक साहित्यिक एवं ऐतिहासिक ग्रंथों में ‘सागा ग्रंथों’ को कौन-सा स्थान प्राप्त है?
(क) सर्वोच्च (ख) तृतीय
(ग) द्वितीय (घ) इनमें से कोई नहीं।

3

“नाटक की समस्त परंपरागत मान-मर्यादाओं को तोड़कर उसे बीसवीं सदी के विशिष्ट प्रतीक के रूप में सर्वथा नया मोड़ देने वाला यह जर्मन लेखक एक फासिस्ट विरोधी, कम्युनिस्ट भी हो सकता है, पश्चिम के आलोचकों के लिए यह सदा एक विवाद का विषय रहा है। आश्चर्य नहीं कि अभी तक समाजवादी देशों में भी उनके क्रांतिकारी प्रयोगों का ठीक से मूल्यांकन नहीं हो पाया।”

प्रसंग—प्रस्तुत गद्यांश श्री निर्मल वर्मा द्वारा लिखित संस्मरण संग्रह ‘चीड़ों पर चाँदनी’ में से लिया गया है। इस संस्मरण का शीर्षक है ‘ब्रेख्त और उदास नगर’। लेखक आइसलैंड जाते समय बर्लिन में रुके तथा वह वहाँ रहकर अपने समय का सदुपयोग करना चाहते थे। अतः उन्होंने यही उचित समझा कि इस रात को ब्रेख्त का नाटक देखकर गुजारा जाए। ब्रेख्त के विषय में अपनी राय व्यक्त करते हुए लेखक कहते हैं—

व्याख्या—ब्रेख्त जर्मनी के सबसे महान् नाटककार माने जाते हैं। उनकी तुलना शेक्सपीयर से की जाती है। नात्सी सत्ता स्थापित होने पर वह जर्मनी से बाहर चले गये। उन्होंने अपने सबसे महत्वपूर्ण और लोकप्रिय नाटकों की रचना देश से बाहर रहकर ही की। कम्युनिस्टों पर प्रायः संकीर्णता और कट्टरता का आरोप लगाया जाता है परंतु अपने नाटकों ‘गेलिलियो’ और ‘मदर करेज’ में जो उन्होंने प्रयोग किए हैं वे सराहनीय हैं। उन्होंने नाटक के समस्त स्थापित मानदंडों को तोड़ा तथा नाटक को अनेक प्रयोगों द्वारा युगानुरूप बनाने का प्रयास किया। उन्होंने शीतयुद्ध के रुग्ण वातावरण का विरोध करते हुए युद्ध के उपरांत पूर्वी जर्मनी में रहना स्वीकार किया। लेखक का मतव्य है कि यदि वह पश्चिमी जर्मनी में होते तो उनकी योग्यताओं का पूर्णरूपेण मूल्यांकन हो पाता परंतु ऐसा संभव नहीं। पश्चिम के आलोचक ‘लौह दीवार’ के कारण उनके साहित्य से पूर्णतया परिचित नहीं हो पाये, यही कारण है कि उन्हें सदा यह आश्चर्य रहा कि एक कम्युनिस्ट भी महान् साहित्यकार हो सकता है। वास्तव में ब्रेख्त के नवीन प्रयोगधर्मी नाटकों का सही मूल्यांकन पूर्वी जर्मनी में भी नहीं हो सका। पश्चिम के आलोचक उनके साहित्य की सराहना करते हैं जब कि पूर्वी जर्मनी में उनके कम्युनिस्ट होने से ही उनका आदर हुआ, साहित्य के कारण नहीं। यह एक विडंबना है जो कम्युनिस्ट देशों के साथ लगी रहती है। वहाँ व्यक्ति के कृतित्व का निरपेक्ष रूप से मूल्यांकन नहीं होता अपितु उन सभी स्थितियों को भी देखा जाता है जिनमें वह लेखक रहता है। यदि उसके विचार सत्ता पक्ष के विचारों से मेल नहीं खाते, तो फिर वह कितना ही महान् लेखक हो, उसे स्वीकृति, मान्यता एवं सम्मान नहीं मिलेगा। लेखक ने इसे शीतयुद्ध का परिणाम कहा है जबकि यह वास्तव में कम्युनिस्ट शासकों की पूर्वाग्रहपूर्ण नीतियों का परिणाम है।

विशेष—लेखक ने इन पंक्तियों के द्वारा अपनी बहुज्ञता का परिचय दिया है। ब्रेख्त के विषय में उनकी जानकारी उनके नाटकों के प्रति उनकी रुचि, उनकी सांस्कृतिक अभिरुचि का परिचायक है। संस्करण में आत्मीयता का तत्व आना स्वाभाविक है। उस आत्मीयता से ही वह अपने निजी विचारों को प्रस्तुत कर रहे हैं। पूर्वी और पश्चिमी यूरोप में साहित्यिक मानदंडों में जो अंतर है, उसका विश्लेषण लेखक ने सुंदरतापूर्वक किया है। यह उनकी विश्लेषण क्षमता का द्योतक भी है। गद्यांश की भाषा सरल, प्रवाहमय एवं सारगर्भित है जिससे लेखक व्यक्तिगत मान्यताएँ आसानी से पाठक के सामने रख पाया है।

“नाटक मंच पर खेलने की चीज नहीं है वह जीने की सक्रिय कला है, हर परिचित पुरानी चीज को नये सिरे से छूने की अपेक्षा है ताकि हम उसे आज का, इस क्षण का धड़कता सत्य दे सकें। हकीकत ही तो नाटक है, सिर्फ उसे समकालीन दृष्टि से पहचानने की आवश्यकता है।”

प्रसंग—‘चीड़ों पर चाँदनी’ श्री निर्मल वर्मा के यात्रा-विवरणात्मक संस्मरणों का संग्रह है। इसमें उन्होंने अपनी आइसलैंड की यात्रा तथा उसके मध्य पड़ने वाले विभिन्न पड़ावों का सुंदर चित्र प्रस्तुत किया है। यात्रा के दौरान वह एक रात के लिए बर्लिन रुके तथा वहाँ ‘बर्लिन एसेम्बल’ ब्रेख्त का नाटक देखा। उस नाटक के विषय में चर्चा करते समय लेखक ने नाटक को परिभाषित करने का प्रयास किया। उनका विचार है कि—

व्याख्या—नाटक मात्र मंच पर मंचित कर देने की चीज नहीं। अर्थात् यह केवल मनोरंजन की वस्तु नहीं, अपितु यह जीवन को समझने की एक नवीन दृष्टि प्रदान करता है। वह जीवन को जीना सिखाता है। वर्तमान काल में जीवन-मूल्यों की व्याख्या करके उन्हें कसौटी पर कसता है। यह जीवन जीने की एक कला है। नाटक का कार्य है कि हर नयी, पुरानी, परिचित चीज को उठाकर उसका मूल्यांकन करना और उनकी सत्यता प्रतिष्ठापित करना। परंपराओं का विश्लेषण करना, जीवन सत्यों के विषय में खोज करना नाटक का ही कार्य है क्योंकि नाटक का मुख्य आधार है मनुष्य और मनुष्य के क्रिया-कलाप ही नाटक की घटनाएँ बनती हैं। अतः मनुष्य के आचरण से उचित अनुचित का न्याय नाटक द्वारा संभव ही है। वस्तुतः नाटक प्रस्तुत को काल, परिस्थिति, लेखक की मनःस्थिति, सामाजिक मूल्यों एवं मर्यादाओं के आधार पर पुनः प्रस्तुत करने की एक विधा है। परिचित सत्यों को वर्तमान के जीवन सत्यों के आलोक में देखना, उसकी परीक्षा करना नाटक का कर्तव्य है। परंपराओं को प्रासंगिक बनाने के लिए नाटक उनमें से जड़ता, पश्चगामिता तथा प्रतिक्रिया के तत्व निकालकर उन्हें समकालीन बनाता है। आधुनिक काल में लिखे गये पौराणिक कथाओं पर आधारित उन्हीं मूल्यों को पुनर्विश्लेषित करने का ही एक प्रयास है। वास्तव में नाटक में कल्पना नहीं वास्तविकता ही मुख्य रूप से वर्तमान होती है। उसका सामाजिक यथार्थ ही उसे आधुनिक समकालीन एवं प्रासंगिक बनाता है। नाटक यदि आधुनिक काल में गद्य विधाओं में सबसे सशक्त विधा है तो उसका कारण यही है कि वह मूल्यों के उचित-अनुचित का न्याय उसके दोनों पक्षों को दिखाकर सुंदरतापूर्वक कर सकता है।

विशेष—प्रस्तुत गद्यांश लेखक की नाटक संबंधी मान्यताओं को प्रस्तुत करता है। लेखक ने स्वयं भी ‘तीन एकांत’ नामक नाटक की रचना की है। अतः वह नाटक की रचना-प्रक्रिया से परिचित है। उसकी यथार्थ धर्मिता तथा युगीन सत्यों को प्रस्तुत करने की क्षमता को वह मानते हैं। वस्तुतः समास शैली (सूत्र शैली) में लिखी गई ये पंक्तियाँ नाटक को, पूर्ण रूप से उसकी संवेदना को व्यक्त करती हैं। कोई भी नाटक उस समय तक अच्छा तथा प्रभावी नहीं हो सकता जब तक कि वह युगीन सत्य को व्याख्यायित करता हुआ उसका पक्ष न हो। वास्तव में नाटक सत्य है वह मनोरंजन का साधन नहीं अपितु जीवन जीने की एक कला है।



टास्क लेखक ने नाटक की क्या परिभाषा दी है?

“यह आकस्मिक नहीं कि ब्रेख्त का नाटक देखते हुए अचानक एक ऐसा क्षण आता है, जब लगता है जैसे थियेटर की दीवार के परे बरबस ही कुछ आवाजें भटक रही हैं, दरवाजा खटखटा रही हैं और हम, दर्शक और अभिनेता, समूचा मंच और ‘ऑडिटोरियम’ एक अजीब दबाव तले धँसने लगते हैं, सिर्फ एक उपाय है मुक्ति पाने का, बाहर निकल आएँ और इन आवाजों के साक्षी हो सकें....।”

प्रसंग—प्रस्तुत गद्यांश श्री निर्मल वर्मा द्वारा विरचित एवं संकलित यात्रा विवरणात्मक संस्मरण ‘चीड़ों पर चाँदनी’ से

लिया गया है। इसमें लेखक अपने बर्लिन प्रवास के समय ब्रेख्त के नाटक ‘टेरर और मिजरी’ को देखते समय अपनी प्रतिक्रियाओं को व्यक्त कर रहा है।

व्याख्या—ब्रेख्त के नाटक ‘टेरर और मिजरी’ में लेखक ने बाह्य परिस्थिति को एक ऐतिहासिक सत्य के रूप में चित्रित किया है सूक्ष्म अर्थ में नहीं। अपितु समय के हाड़-मांस ठोस पिंजर में आबद्ध, जिस सदी में हम जीते हैं, उसके संदर्भ में बहुत इंटेंस और राजनीतिक। उस नाटक में बंदी शिविर, फासिज्म, नर संहार आदि का इतना सजीव चित्रण किया गया है कि वे महज दीवार की छायाओं के समान अवास्तविक प्रतीत नहीं होते। वे सत्य रूप में उद्घाटित होते हैं क्योंकि वे स्वयं एक प्रतीक हैं उस विघटन प्रक्रिया का जिसमें हम सब अलग-अलग व्यक्ति की हैसियत से शामिल हैं। युद्ध की विभीषिका को देखकर, उसका सजीव चित्रण देखकर ऐसा महसूस होता है, जैसे यह सबकुछ मंच पर नहीं हो रहा अपितु बाहर समाज में इसी समय घटित हो रहा है। अतः यह आश्चर्य की बात नहीं कि ब्रेख्त का नाटक ‘टेरर और मिजरी’ देखकर तथा उसमें वर्णित युद्ध बंदियों के शिविर, नर-संहार आदि की घटनाओं को देखकर ऐसा महसूस हो कि थियेटर की दीवार के परे कुछ आवाजें भटक रही हैं, उनकी आवाजें जिनकी सामूहिक हत्या की गई। वे आवाजें थियेटर का दरवाजा खटखटा रही हैं कि सभी प्रेक्षक उस वास्तविकता से परिचित हो जाएँ जो उन पर बीती। उस समय उस ठोस और कठोर यथार्थ को देखकर समूचा ‘ऑडिटोरियम’ उस भय के वातावरण से युक्त हो जाता है जैसे मानो वह भी उन लोगों की कब्रों में समाने जा रहा हो जिनकी हिंसक हत्या फासिस्ट शासकों ने की थी। लेखक का मन्तव्य यह है कि उस नाटक में यथार्थ का इतना सही चित्रण किया गया है कि प्रेक्षक भावनात्मक रूप में स्वयं को भी उसी स्थिति में पाता है जबकि यह नरसंहार हो रहा था। प्रत्येक बुद्धिजीवी, जो स्वयं को समकालीन मानता है उसके लिए आवश्यक है कि वह उस नरसंहार का साक्षी रहे और साक्षी होने के नाते कहीं जिम्मेदार भी क्योंकि लेखक के लिए समकालीन होने का अर्थ है अपने निजी घरे से बाहर उन सब आवाजों का साक्षी होना जो बीसवीं सदी के अँधेरे से टकराती हुई हमारे पास आती हैं। ब्रेख्त कम्युनिस्ट थे। अतः यथार्थवादी थे और उन्होंने यथार्थ का ऐसा चित्रण किया कि लेखक उससे अत्यंत प्रभावित हुआ।

विशेष—इन पंक्तियों से ब्रेख्त की रचना की सशक्तता सिद्ध होती है कि वह प्रेक्षकों से साधारणीकरण करने में सक्षम है। वास्तव में प्रत्येक युग का सत्य उस युग के लोगों के लिए प्रासंगिक होता है। अतः उस युग के लोगों को प्रभावित भी करता है। साथ ही इन पंक्तियों के माध्यम से लेखक के संवेदनशील होने का भी संकेत मिलता है। वह उस विभीषिका से इतने आक्रान्त हैं कि उन्हें समूचा ऑडिटोरियम धँसता हुआ दिखाई देता है। सत्य की यथार्थ अभिव्यक्ति संवेदनशील व्यक्ति को ऐसे ही झिझोड़ती है। इस पद्यांश की भाषा सरल है परंतु अत्यंत प्रभावशाली, एक सफल लेखक की विशेषता है कि वह सीधे सरल शब्दों में महत्वपूर्ण एवं गंभीर बात कह जाता है। प्रसिद्ध रूसी लेखक चेखव के शब्दों में महान् लेखक साधारण शब्दों में कोई गंभीर बात इस प्रकार कहते हैं कि वह सर्वसाधारण को समझ में आ सके क्योंकि इसी से प्रभाव गहरा पड़ता है। वास्तव में विचारों की तुच्छता ही गंभीर भाषा के आवरण में छिपी रहती है।

6

“अक्सर यह कहा जाता है कि पश्चिमी देशों की संस्कृति स्वतंत्रता और न्याय जैसे आध्यात्मिक सिद्धांतों पर आधारित है, जबकि दूसरी ओर कम्युनिस्ट देश उसकी नितांत अवहेलना करते हुए मनुष्य की निम्नतम भौतिक इच्छाओं पर जोर डालते हैं। शायद यह सच हो परंतु, बर्लिन में लगता है जैसे ये ‘रोल’ आपस में बदल लिये गये हों।”

प्रसंग—प्रस्तुत पंक्तियाँ श्री निर्मल वर्मा द्वारा विरचित ‘चीड़ों पर चाँदनी’ से उद्धृत हैं। ‘चीड़ों पर चाँदनी’ यात्रा-विवरणात्मक संस्मरणों का संकलन है। जिसमें लेखक आइसलैंड जाते समय बर्लिन की संस्कृति के विषय में अपने विचार व्यक्त कर रहा है। लेखक मूलतः साम्यवादी विचारधारा से प्रभावित है। अतः उसे पश्चिम की अपेक्षा पूर्व यूरोप के देशों के राजनीतिक सिद्धांत अधिक श्रेयस्कर प्रतीत होते हैं। इसी आधार पर वह कह रहे हैं—

व्याख्या—लेखक अन्य लोगों की ओर संकेत करते हुए कहते हैं कि प्रायः लोग यह कहते हैं कि पश्चिमी यूरोप के

नोट

प्रजातांत्रिक देशों की राजनीति का मूल आधार है—वैयक्तिक स्वतंत्रता तथा समतापूर्ण न्याय। तथा पूर्वी यूरोप के साम्यवादी देश व्यक्तिगत स्वतंत्रता तथा सामाजिक न्याय की पूर्ण रूप से अवहेलना करते हैं तथा उसके स्थान पर मनुष्य की मूलभूत इच्छाओं की पूर्ति करने पर ही बल देते हैं। लेखक कहते हैं शायद यह सच हो। इस सत्य को स्वीकार करते हुए वह घबरा रहे हैं जबकि सत्य यही है कि पश्चिमी देशों में प्रजातंत्र है, बहुपार्टी प्रणाली के आधार पर चुनाव होता है तथा वहाँ व्यक्ति स्वतंत्रता तथा व्यक्ति के मौलिक अधिकारों को सर्वोपरि माना जाता है। व्यक्ति को राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक स्वतंत्रता है एवं साथ ही वहाँ सामाजिक न्याय को महत्व दिया जाता है, जबकि पूर्वी यूरोप के कम्युनिस्ट देशों में लोगों की भौतिक आवश्यकताएँ पूर्ण करने की गारंटी राज्य की है। अतः खाने-पीने की वस्तुएँ, शिक्षा इत्यादि सस्ती अथवा मुफ्त हैं परंतु व्यक्ति को मौलिक अधिकार से वंचित रखा गया है। वह कम्युनिस्ट पार्टी से भिन्न विचार नहीं रख सकता। यदि ऐसा है तो उसका स्थान जेल या मानसिक चिकित्सालय है। लेखक जब बर्लिन गया तो वहाँ उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि ये दोनों 'रोल' दोनों देशों की जनताओं ने बदल लिये हैं। उन्होंने पाया कि अमरीकी सिगरेट, व्हिस्की इत्यादि के प्रति दोनों देशों के लोगों के मन में समान रूप से आकर्षण है। उनके राजनीतिक सिद्धांत अथवा मान्यताएँ कितनी ही भिन्न क्यों न हों, व्यक्ति सामान्य रूप से अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति एक समान ही करते हैं।

विशेष—किन्हीं स्थितियों में साहित्य कितना काल-सापेक्ष होता है, इसका उदाहरण हमें इन पंक्तियों में मिल जाता है। इन संस्मरणों की रचना सन् 1964 में हुई थी जब शीतयुद्ध अपने चरम शिखर पर था परंतु 26 वर्षों बाद इन पंक्तियों की प्रासंगिकता ही समाप्त हो गई क्योंकि 1990 में अधिकांश पूर्वी यूरोप के कम्युनिस्ट देशों में राजनीतिक परिवर्तन आया और वहाँ भी प्रजातंत्र की लहर दौड़ गई। इस परिवर्तन ने उस मिथ पर से भी पर्दा उठा दिया कि किस प्रकार मार्क्स की विचारधारा पर आधारित राज्य जन-कल्याण का कार्य करते हैं। वहाँ की आर्थिक अवस्था एवं वैज्ञानिक उन्नति देखकर स्पष्ट ही दिखता है कि स्वतंत्र व्यक्ति ही अधिक प्रसन्न हो सकता है। इन पंक्तियों से लेखक की आत्मीयता झलकती है जो कि संस्मरण का एक महत्वपूर्ण तत्व है व्यक्तिगत विचारों और यशोनिन्दा का समावेश संस्मरण में सहज ही हो जाता है।



टास्क लेखक को पश्चिम की अपेक्षा पूर्वी यूरोप के देशों के राजनीतिक सिद्धांत अधिक श्रेयस्कर क्यों प्रतीत होते हैं?

7

“कौन-सी सीमा पर जाकर कम्युनिज़्म का विरोध फासिज़्म का चेहरा अपना लेता है मुझे नहीं मालूम, किंतु यह वह सीमा है, जो पश्चिमी बर्लिन को पूर्वी बर्लिन से अलग करती है। यह एक चुनौती भी है, जिसका सामना हर ईमानदार व्यक्ति को कभी न कभी करना पड़ेगा।”

प्रसंग—प्रस्तुत पंक्तियाँ श्री निर्मल वर्मा द्वारा लिखित यात्रा-विवरणात्मक संस्मरणों के संकलन 'चीड़ों पर चाँदनी' से उद्धृत की गई हैं। लेखक ने आइसलैंड जाते समय पश्चिमी बर्लिन में पड़ाव डाला और वहाँ की स्मृतियों का अंकन 'ब्रेख्त एक उदास नगर' संस्मरण में कर रहा है। लेखक टूरिस्ट बस में बैठकर पश्चिमी बर्लिन के दर्शनीय स्थल देखने गया। वहाँ गाईड ने रायर वस्तैक की इमारत दिखाते हुए कहा कि बल्गेरियन कम्युनिस्ट दित्रिट्रोव ने रायर वस्तैक को जलाने का षड्यंत्र किया था। लेखक ने कहा कि यह सच नहीं है क्योंकि दित्रिट्रोव के खिलाफ कोई सबूत नहीं मिला, इसलिए हिटलर ने उसे छोड़ दिया तो गाईड ने कहा 'बट वाजण्ट ही ए ब्लडी कम्युनिस्ट?' लेखक इस बात से इंकार नहीं कर सका और यहीं से उसके मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि—

व्याख्या—लेखक स्पष्ट नहीं है कि वह कौन सी सीमा है जहाँ कम्युनिज़्म का विरोध फासिज़्म का चेहरा अपना लेता

है। अर्थात् व्यक्ति कम्युनिज़्म का विरोध करते-करते फासिज़्म का रूप धारण कर लेता है क्योंकि उनकी दृष्टि में वहाँ के लोगों को हिटलर का नहीं दित्रोट्रोव का पक्ष लेना चाहिए था। यही वह विभाजक रेखा है जो पश्चिमी बर्लिन और पूर्वी बर्लिन को बाँट रही है। पूर्वी बर्लिन कम्युनिस्ट देश है अतः वह फासिज़्म का विरोध करता है जबकि पश्चिम जर्मनी एक प्रजातांत्रिक राष्ट्र है जो कम्युनिज़्म का विरोध करता है परंतु साथ ही वह हिटलर का भी विरोध करता है। यह एक ऐसी चुनौती है जिसका सामना लेखक की दृष्टि में हर ईमानदार व्यक्ति को करना ही होगा। उनकी मान्यता है कि हमें वह सीमा निर्धारित करनी होगी कि हम किस सीमा तक कम्युनिस्टों का विरोध करें? वास्तव में फासिज़्म मूल रूप में राष्ट्रवाद के रूप में विकसित हुआ था। जिसे बाद में अधिनायकवाद के अर्थ में जाना जाने लगा। कम्युनिस्ट इसे हासोमुख पूंजीवाद की अंतिम अवस्था मानते हैं। जबकि एक अन्य व्याख्या के अनुसार जनतंत्र में असाधारण व्यक्तियों को अपनी प्रतिभा और शक्ति दिखाने का पूरा अवसर नहीं मिलता। अतः उनका जनतंत्र के प्रति रोष उत्पन्न हो जाता है, वे ऐसी व्यवस्था की कामना करने लगते हैं जिसमें उन्हें कार्य करने का पूरा अवसर मिल सके। वास्तव में पश्चिमी बर्लिन के वासियों की राष्ट्रवादी भावना ही दित्रोट्रोव के विरोध में बोल रही थी, जब उन्हें रायर वस्टैक की इमारत में आग के विरोध में उसकी निन्दा करते हुए पाया गया। इसका अर्थ कदापि हिटलर का समर्थन करना नहीं था।

विशेष—लेखक ने वास्तव में एक मूलभूत प्रश्न को उठाया है कि प्रत्येक ईमानदार व्यक्ति को यह तय करना होगा कि फासिज़्म बुरा है, अधिनायकवाद श्रेष्ठ नहीं है। राजाओं के एकाधिपत्य से हम आगे बढ़ आये हैं और हमने प्रजातंत्र को स्वीकारा है, अतः उस स्थिति में लौट जाने की स्थिति में हम नहीं हैं। प्रजातंत्र ही व्यक्ति के लिए उपादेय तंत्र है परंतु क्या जहाँ एक ही पार्टी का शासन है वहाँ अधिनायकवाद नहीं है? इस प्रश्न पर भी प्रत्येक बुद्धिजीवी को विचार करना होगा और उसका निर्णय प्रजातंत्र के ही पक्ष में जाएगा।

8

“आश्चर्य नहीं कि आईखमैन के लिए लाखों यहूदियों को यातना में भेजना भी इतना ही सहज और मानवीय तथ्य रहा होगा। मानवीय चिंतन को उसके सोचने समझने के ढंग को कितनी आसानी से अत्यंत विकृत ढाँचे में ढालकर सहज, स्वयंसिद्ध, स्वयंचालित ‘सत्यों’ का निर्माण किया जा सकता है, इसकी कल्पना शायद जार्ज आरवेल ने अपने भयंकरतम दुःस्वप्नों में भी न की होगी।”

प्रसंग—प्रस्तुत पंक्तियाँ श्री निर्मल वर्मा द्वारा लिखित पुस्तक ‘चीड़ों पर चाँदनी’ से ली गई हैं, जिसमें उन्होंने आइसलैंड जाते समय लंदन के प्रवास की एक घटना का संस्मरण सुनाया है। इस संस्मरण का नाम है—‘रोती हुई मर्मेड का शहर’ लंदन में उसने एक अधिकारी से प्राग जाने की टिकट माँगी तो उसने कहा—‘क्या आप जानते नहीं कि वह लौह-दीवार’ के पीछे है और लेखक ने आश्चर्य-सा व्यक्त करते हुए कहा—‘क्या सचमुच?’ यही घटना उक्त पंक्तियों का मूल स्रोत है। उसे प्रतीत हुआ कि यह व्यक्ति कितने स्वाभाविक ढंग से यंत्रचालित रूप से इन शब्दों का प्रयोग कर रहा है। यदि उससे यह कहा जाए कि इस तरह के शब्द शीतयुद्ध विचारधारा के द्योतक हैं तो वह ऐसे देखेगा जैसे बहुत अनहोनी बात कह दी हो।

व्याख्या—लेखक का कथन है कि कुछ लोग स्वयं ही, बिना किसी उचित तर्क के कुछ विचार बना लेते हैं और उन्हें ही अंतिम सत्य मानने लगते हैं। ऐसा करते समय वे निश्चित व सहज होते हैं। उन्होंने एक उदाहरण देकर यह समझाने का प्रयत्न किया कि जब आईखमैन ने लाखों यहूदियों को यातना-गृहों या गैस-चैम्बर में भेजा होगा तो उसके सामने भी एक स्वयं निर्मित सत्य था कि जर्मन जाति सबसे महान् जाति है और यहूदी उनके मार्ग का सबसे बड़ा अवरोध हैं। आईखमैन के लिए यह तथ्य बड़ा ही सहज और मानवीय रहा होगा परंतु यह विचारधारा एकपक्षीय थी। लेखक प्रश्न करते हैं कि मानवीय चिंतन को कितनी सरलतापूर्वक मोड़ा जा सकता है। सोचने समझने के ढंग को कितना सरल रूप से अत्यंत विकृत ढाँचे में ढाला जा सकता है कि एक मनुष्य अथवा जाति दूसरे से श्रेष्ठ है, सभ्य है। इस आधार पर अनेक स्वयं सिद्ध, सहज और स्वयं चालित निर्णय लिये जा सकते हैं। ऐसे निर्णय जो तर्क से सिद्ध न किये गये हों। अपितु एक ही व्यक्ति की विचारधारा का परिणाम हों, निश्चित ही उतने ही घातक हैं जितना

कि द्वितीय विश्वयुद्ध में लाखों यहूदियों को मारना। जार्ज ऑरवेल ने अनेक दुःस्वप्नों का वर्णन किया है परंतु यह तथ्य उनके भयंकरतम दुःस्वप्नों से भी अधिक क्रूर है। अतः ‘आइरन कर्टेन’ का जो स्वयं निर्धारित सत्य पश्चिमी जगत ने अपना रखा है वह भी अत्यंत क्रूर और अमानवीय है।

9

“अमस्टरडम अपनी एक आत्मा है। नहरों से सटे हुए मकान इतने संतुलित और आत्मीय और कालजित् कि लगता है आदमी के हाथों ने उन्हें नहीं बनाया, खुद-ब-खुद फूलों से नहरों के किनारे किनारे उग आये हैं। वे आईना हैं—जिसमें चहारदीवारी के भीतर रहने वाले डच निवासियों की जिंदगी झलकती है।”

प्रसंग—‘रोती हुई मर्मेट का शहर’ नामक संस्मरण जो ‘चीड़ों पर चाँदनी’ संकलन में से लिया गया है, निर्मल वर्मा द्वारा लिखित है। लेखक विभिन्न स्थानों पर अपने प्रवास के दौरान उन स्थानों का सामाजिक, सांस्कृतिक जीवन व्यक्त करता हुआ, उस शहर का अपने पर पड़ा प्रभाव अंकित कर रहा है। जब वह हालैंड की राजधानी अमस्टरडम गये तो उन पर जो प्रभाव पड़ा, उसका चित्र उक्त पंक्तियों में दिखाई देता है।

व्याख्या—अमस्टरडम को नहरों का शहर कहा जाता है। वहाँ शहर की गलियों के बीच नहरें हैं और उनके दोनों तरफ मकान हैं। नहरों में ही दुकानें हैं यहाँ तक कि यातायात के लिए नावों का प्रयोग किया जाता है। इसीलिए लेखक ने कहा कि अमस्टरडम की भी एक आत्मा है। वैसे प्रत्येक शहर की एक आत्मा होती है, एक विशिष्टता होती है जो उसे अन्य नगरों से अलग करती है। उसी आधार पर अमस्टरडम की भी एक विशिष्टता है कि वह नहरों की तरह तरल, शीतल और आनन्ददायी है। लेखक का कवि उस दृश्य का वर्णन इस प्रकार करता है कि नहरों के दोनों ओर के घर मानों व्यक्तियों द्वारा निर्मित न हों। अपितु वे फूल हैं जो स्वयमेव नहरों के किनारे-किनारे उग आये हैं। मनुष्य के निर्माण में अधूरापन है जबकि प्रकृति का निर्माण पूर्ण है। उस सौंदर्य को मानो प्रकृति ने स्वयं अपने हाथों से गढ़ा हो। वे मात्र मकान नहीं हैं अपितु डच निवासियों के जीवन का प्रतिबिम्ब है। किस प्रकार हॉलैंडवासी जल से प्रेम करते हैं। वे जल ही के समान स्वच्छ और निर्मल हैं। उनमें कलुषता का लेशमात्र भी नहीं है। नहरों के किनारे बने मकान उनके जीवन के रहन-सहन के ढंग को बताते हैं। पानी में फैलाव का गुण है और जल राशि को देखते ही व्यक्ति की आत्मा भी विस्फारित हो जाती है, आनंदातिरेक से। वे डच निवासी भी जल के समान बड़े हृदय वाले हैं, यह उन व्यक्तियों के घरों से ही पता चल जाता है। मूलतः वे बहुत ही शालीन परंपराओं का आदर करने वाले हैं, संयमित एवं संकोची हैं। इसीलिए लेखक ने उनके लिए ‘चहारदीवारी के भीतर रहने वाले’ विशेषण का प्रयोग किया है।

विशेष—लेखक ने बहुत ही सुंदर भाषा में प्रतीकात्मक रूप से डच निवासियों के चरित्र का वर्णन किया है। इन पंक्तियों में काव्यात्मकता मुखरित हो रही है। लेखक के भीतर का कवि डच निवासियों के घरों की तुलना स्वयंमेव उग आये फूलों से कर रहा है। यह काव्यात्मकता संस्मरण का एक आवश्यक उपकरण है। लेखक व्यक्तिगत प्रतिक्रियाएँ करता हुआ उस स्थान का वर्णन करता चलता है। यहाँ उसकी आत्मीयता भी झलक रही है। पंक्तियों की भाषा सहज, सरल और बोधगम्य है।



टास्क लेखक पर हालैंड की राजधानी अमस्टरडम का क्या प्रभाव पड़ा?

10

“भीतर का दृश्य उस फिल्म के टुकड़े की मानिन्द धुंधला पड़ गया है जो अपने में अत्यंत तीव्र और सजीव होने के बावजूद इतनी तेजी से आँखों के आगे भड़भड़ाता हुआ गायब हो गया कि बाद में जब हम याद करने की कोशिश करते हैं तो दृश्य के बाहरी पहलू उजागर होने के बजाय महज मन के कोने-कोने में भी

नहीं हैं कुछ अनर्गल छिटपुटी प्रतिक्रियाएँ घूम जाती हैं जो उस क्षण के दबाव से ऊपर उठ आई थीं—एक दूसरे से अलग, शृंखलाहीन और झूठ-सच के ऊपर।”

प्रसंग—प्रस्तुत गद्यांश ‘चीड़ों पर चाँदनी’ नामक संस्मरण संग्रह से उद्धृत की गई है। इन पंक्तियों के लेखक श्री निर्मल वर्मा हैं। इन संस्मरणों में अधिकांश यात्रा विवरणात्मक संस्मरण हैं जिनमें लेखक अपने यूरोप प्रवास के समय विभिन्न शहरों के सामाजिक जीवन पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर रहा है।

व्याख्या—अमस्टरडम में लेखक अपने मित्र थोर्गियर और एँगुई के साथ एक बियर घर में गए। अँधेरी संकरी गलियों के भीतर वह बियर घर था। उसके वातावरण का वर्णन करते हुए कह रहे हैं कि उस बियर घर में इतनी भीड़ थी। उसका दृश्य स्मरण करना अब संभव नहीं है। उन्होंने एक सुन्दर उपमा के माध्यम से उसे समझाने का प्रयास किया है। वह दृश्य उस चित्र के मानिन्द था जो अचानक व्यक्ति की आंखों के सामने से तेजी से हटा लिया जाए। जिसकी सूक्ष्म डिटेल्स व्यक्ति को याद नहीं रहती, केवल एक मोटा प्रभाव स्मरण में रह जाता है। उस बियर घर का दृश्य भी फिल्म के उस टुकड़े के समान धुंधला पड़ गया है जो हमारे सामने तेजी से निकल गया हो। जब जब उस दृश्य का स्मरण करते हैं। तो उसके बाह्य पहलू उजागर न होकर केवल मन के एक कोने में कुछ असंबद्ध सी स्मृतियाँ ही रह जाती हैं, जो कि उस क्षण के दबाव से ऊपर उठ आई थीं। जिनका परस्पर कोई संबंध नहीं है, क्रम नहीं है जो कि झूठ-सच से ऊपर है। कुछ ऐसा ही दृश्य उस बियर घर का था। वहाँ अंधेरा था, चहल-पहल थी अतः कुछ भी स्पष्ट नहीं था।

विशेष—लेखक ने स्मृतियों की विशेषता बताई है कि कुछ ऐसे क्षण होते हैं जिनकी स्पष्ट स्मृति नहीं रहती परंतु उनकी धुंधली-सी छाया मन पर अवश्य बन जाती है। यह एक वैज्ञानिक सत्य है कि चलचित्र के दृश्य यदि तेज चला दिये जाएँ तो उनमें से कतिपय बाहरी पहलू उजागर नहीं होते फिर भी एक स्थायी-सा प्रभाव वे अवश्य छोड़ जाते हैं। उस काल की स्मृति तथा उस स्मृति के आधार पर उस दृश्य का वर्णन कर पाना अत्यंत कठिन है। यही भावना लेखक उक्त पंक्तियों में व्यक्त करना चाहता है। वहाँ अनेक चेहरे हैं परंतु एक भी चेहरा जाना पहचाना नहीं, और अंधकार के कारण स्पष्ट नहीं। अतः उनका वर्णन करना असंभव है, मात्र चेहरों का ही स्मरण रहता है। भाषा की दृष्टि से भाषा अत्यंत सरल है परंतु यह सूक्ष्म विचार को लिये होने के कारण सहज-सुबोधता के तत्व को समाविष्ट नहीं कर पाई।

11

“उनकी तुलना में हम भारतीय बहुत गंभीर हैं। (कम से कम कोशिश यही रहती है कि गंभीर दिखें।) आधारभूत समस्याओं की प्रश्नावली सदा जेब में रहती है। हालाँकि एक प्रश्न बार-बार तंग करता है कि अपनी गंभीरता के बावजूद हममें से कितने भारतीय ‘बुद्धिजीवी’ लंदन की ‘इंडिया लायब्रेरी’ को भारत वापस लौटाने के लिए उतने ही चिंतित हैं जितना वह उज्जड़ आइसलैंड व्यापारी मुखर परिहास के बावजूद अपने देश की पाण्डुलिपियों के बारे में था।”

प्रसंग—प्रस्तुत पद्यांश श्री निर्मल वर्मा द्वारा लिखित यात्रा-विवरणात्मक संस्मरण संकलन ‘चीड़ों पर चाँदनी’ से लिया गया है। इन संस्मरणों में लेखक ने अपनी आइसलैंड की यात्रा उसके सामाजिक, सांस्कृतिक जीवन के प्रभावों को अंकित करने का प्रयास किया है। यहां उन्होंने आइसलैंड की राजनीति की एक प्रखर समस्या का विश्लेषण करते हुए आइसलैंडियों की भारतीय चरित्र से तुलना की है तथा किन्हीं अर्थों में उन्हें भारतीयों से श्रेष्ठ ठहराया है।

व्याख्या—13वीं-14वीं शताब्दी में आइसलैंड में अनेक साहित्यिक और ऐतिहासिक ग्रंथों की सर्जना हुई। उन दिनों आइसलैंड डेनमार्क का उपनिवेश था। इन ग्रंथों में ‘सागा ग्रंथों’ को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। इन ग्रंथों की पाण्डुलिपियाँ आज डेनमार्क के संग्रहालयों और पुस्तकालयों में सुरक्षित हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आइसलैंड सरकार ने डेनमार्क से इन पाण्डुलिपियों को लौटाने की माँग की जिसे आज तक स्वीकार नहीं किया गया। यह प्रश्न आइसलैंड में एक ‘राष्ट्रीय प्रश्न’ बन गया है। लेखक ने जब एक व्यापारी से इस विषय में बात की तो उसने व्यंग्यपूर्ण उत्तर दिया कि

नोट

हमें नहीं पता था कि डेनमार्क वाले हमारी संस्कृति से इतना प्यार करते हैं। यह सुनकर लेखक के मन में भारतीयों का चरित्र सामने आ गया और उन्होंने कहा कि आइसलैंडियों की तुलना में हम भारतीय अधिक गंभीर हैं या हम यह दिखावा करना चाहते हैं कि हम गंभीर हैं। प्रत्येक भारतीय के पास प्रश्नों का ढेर है। वह अनेक प्रकार के राजनीतिक प्रश्न करके निरंतर बहस करता रह सकता है। अपनी सरकार को कोसता है, सामाजिक व्यवस्था पर प्रश्नचिह्न लगाता है, परंतु इस दिखावटी गंभीरता दिखाने वाले किसी बुद्धिजीवी के हृदय में यह भाव नहीं आया कि हमारी अनेक दुर्लभ पाण्डुलिपियाँ अंग्रेज ले गये थे और आज के लंदन में 'इंडिया-लाइब्रेरी' में रखी हैं, उन्हें वापस लाने के विषय में विचार किया जाए या आंदोलन खड़ा किया जाए। भारतीय कोरी सैद्धांतिक बहस करने की सीमा तक गंभीर हैं परंतु वास्तविकता में वे किन्हीं प्रश्नों को गंभीरता से नहीं लेते। आइसलैंड का एक सामान्य व्यापारी भी अपने देश के सागा-ग्रंथों की पाण्डुलिपियों को वापस लाने के लिए चिंतित है परंतु भारतीय बुद्धिजीवी भी अधिकारों की बात करते हुए कहीं अपने राष्ट्रीय दायित्व को पूरा नहीं करते। आइसलैंड व्यापारी के परिहास में भी एक पीड़ा थी परंतु भारतीय पीड़ित होने का मात्र ढोंग करके रह जाते हैं।

विशेष—लेखक ने भारतीय और आइसलैंडी मानसिकता का विश्लेषण सुंदरतापूर्वक किया है। ऐसा वही व्यक्ति कर सकता है जो दोनों ही समाजों की अभिरुचियों, संस्कृतियों आदि से परिचित हो। भारतीय बुद्धिजीवियों के विषय में की गई उनकी व्याख्या पीड़ादायक अवश्य हो सकती है। परंतु सत्य से वह परे नहीं है। गंभीर बात कहने के लिए उन्होंने जिस सहज, सरल, बोधगम्य भाषा का प्रयोग किया है, वह प्रशंसनीय है।

स्व-मूल्यांकन (Self-Assessment)

निम्नलिखित कथनों में सत्य अथवा असत्य की पहचान करें

(State Whether the following statements are True or False) :

8. सन् 1964 में शीतयुद्ध अपने चरम शिखर पर था।
9. लेखक ने पश्चिमी बर्लिन की स्मृतियों का अंकन 'ब्रेख्त एक उदास नगर' में किया है।
10. यूरोप के शहरों में घूमते हुए लेखक को महसूस हुआ कि वह केवल 'आउटसाइडर' ही नहीं है।
11. राजनीतिक प्रभुत्व एवं सांस्कृतिक प्रभाव हमेशा संग रहते हैं।

12

“क्या यह सच नहीं है कि हर जाति अपने जीवन सौंदर्य को अभिव्यक्त करने का जो विशिष्ट साधन चुनती है, उसके बाहर कोई अन्य साधन (या माध्यम) उसकी प्रेरणा को न केवल कृत्रिम और निर्बल बना देते हैं, बल्कि एक खास ढंग से विकृत भी कर देते हैं?”

प्रसंग—प्रस्तुत पद्यांश श्री निर्मल वर्मा द्वारा लिखित यात्रा-विवरणात्मक संस्करण संकलन 'चीड़ों पर चाँदनी' से उद्धृत किया गया है। इन संस्मरणों में लेखक ने अपनी आइसलैंड की यात्रा के समय मार्ग में आए अनेक स्थानों की सांस्कृतिक गतिविधियों का ब्यौरा दिया है। उसी क्रम में डेनमार्क की चित्रकला के विषय में उनकी राय यह है कि—

व्याख्या—लेखक एक प्रदर्शनी देखने गया और उसे देखकर उसे निराशा ही हुई। उनका कथन है कि फर्नीचर के 'डिजाइन' दस्तकारी का सूक्ष्म काम तथा नई वास्तुकला में दिलचस्प प्रयोग करने वाले डेन लोग चित्रकला के क्षेत्र में 'पास्तेश' और उथलेपन में सार्थकता खोजेंगे। यह देखकर एक प्रश्न उठता है, वह यह कि प्रत्येक जाति का अपने जीवन सौंदर्य को अभिव्यक्त करने का एक साधन होता है। कोई वास्तुकला के माध्यम से उस सौंदर्य की अभिव्यक्ति करता है तो कोई खाने-पीने के बर्तनों में। कोई चित्रकला के माध्यम से सौंदर्य की अभिव्यक्ति करता है तो कोई कालीनों, शालों अथवा वस्त्रों में। यह सौंदर्याभिव्यक्ति उसी माध्यम से हो तभी उचित है जबकि वह साधन अपनी सहजता के साथ उसे अपना लेता है। उसमें उसके जीवन-सौंदर्य की अभिव्यक्ति बिना किसी कृत्रिमता के हो जाती है, परंतु यदि वह जाति किसी दूसरी जाति के साधनों का अनुकरण करेगी तो उसमें निजता का अभाव रहेगा, प्रामाणिकता की कमी रहेगी। बाहर के माध्यम उसकी प्रेरणा को ही निर्बल बना देते हैं क्योंकि प्रत्येक जाति की

नोट

अपनी परिस्थितियाँ होती हैं और वह परिस्थितियों के अनुकूल ही अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति कर सकता है। लेखक कहते हैं कि चित्रकला के क्षेत्र में यह तथ्य न केवल डेनमार्क पर बल्कि न्यूनाधिक मात्रा में अन्य स्कैंडेनेवियन देशों पर भी लागू किया जा सकता है क्योंकि वे सभी नकल की उपज हैं क्योंकि इन देशों के सौंदर्य अभिव्यक्ति का माध्यम सदा से मूर्तिकला और वास्तुकला रही है।

विशेष—लेखक ने महत्वपूर्ण तथ्य इतनी सरलता और स्पष्टता से कह दिया, यह उनकी भाषा की विशेषता है। भारत में भी ऐसी अनेक जातियाँ हैं जो विभिन्न प्रकार से अपने भावों की अभिव्यक्ति करती हैं, यही उनकी विशिष्टता है। यदि वे अन्य प्रकार से, दूसरों को नकल करके किसी अन्य विधा में उनको प्रकट करने का प्रयास करेंगी तो निश्चय ही उसमें एक बनावट रहेगी। वह सहजता और अपनापन नहीं आ पाएगा जो उनकी मूल विधा में रहता है।

13

“हम असीम अंधेरे के एक छोटे से टुकड़े पर तिर रहे हैं कि हमारे नीचे एक नीली रहस्यमयी जादुई दुनिया बसी है, हमारे संग-संग रेंग रही है—क्षुब्ध अशांत और निस्तब्ध। इस दुनिया का आभास उसी समय होता है, जब कोई अल्हड़-सी लहर पूरी निर्ममता से हमारे जहाज को धकेल देती है।”

प्रसंग—प्रस्तुत गद्यांश श्री निर्मल वर्मा द्वारा विरचित संस्मरण संग्रह ‘चीड़ों पर चाँदनी’ से उद्धृत किया गया है। इनमें लेखक ने अपनी आइसलैंड की यात्रा का वर्णन किया है। उस दौरान समुद्री जहाज की यात्रा का दृश्य और उनके अनुभव इस गद्यांश में अंकित किए गए हैं।

व्याख्या—लेखक समुद्री जहाज पर ‘उत्तरी रोशनियों की ओर’ जा रहा है। रात का समय है। चारों ओर अंधकार है। समुद्र का असीम अंधकार और लेखक को अनुभव हो रहा है कि वह इस अनंत अंधकार के एक छोटे से टुकड़े पर तिरते हुए जा रहे हैं। उनके जहाज के नीचे एक रहस्यमयी नीली जादुई दुनिया है। समुद्र की दुनिया जिसमें अनेक रहस्य छुपे हुए हैं और उनके कारण वह लेखक को रहस्यमयी प्रतीत होती हैं और जादुई भी। अनेक विस्मयों से भरी जादुई दुनिया उनके नीचे और वह उसके ऊपर से तिरते चले जा रहे हैं। वह जादुई दुनियाँ समाप्त नहीं होती, वह लेखक के संग-संग तिर रही है। उस जादुई दुनिया को लेखक ने क्षुब्ध, अशांत और निस्तब्ध कहा है। समुद्र के अंदर प्रत्येक पल लहरें उठ रही हैं इसलिए लेखक को ऐसा प्रतीत होता है कि समुद्र अशांत है, क्रुद्ध है और निस्तब्ध है परंतु ऊपर से बिल्कुल शांत। उस जादुई दुनिया का आभास उन्हें केवल उसी समय होता है जब कोई बड़ी-सी लहर आकर जहाज को हिला देती है और उनके बियर पीने वाले गिलास लड़खड़ा जाते हैं, अन्यथा चारों ओर एक गंभीर शांति का वातावरण फैला हुआ है। अंधकार समय और दूरी का अंतर मानो मिटा देता है और चारों ओर दूर-तक अंधकार की परत फैली दिखाई देती है जिस पर वे चुपचाप तिर रहे हैं।

विशेष—इन पंक्तियों के माध्यम से लेखक समुद्र यात्रा के अनुभवों का वर्णन कर रहा है। समुद्र में जहाज पर रात का दृश्य बहुत ही काव्यात्मक ढंग से, प्रभावशाली रूप में किया गया है। रूपकातिशयोक्ति के द्वारा उन्होंने जादुई दुनिया का वर्णन किया है। गद्यांश की भाषा काव्यमय है परंतु भाषा में ओज गुण के अनुरूप शब्दों को प्रयोग किया गया है। संभवतः समुद्र की विकरालता का बोध करने के लिए ही लेखक ने ऐसी शब्दावली को चुना है। कुल मिलाकर ये पंक्तियाँ पाठक की दृष्टि के आगे वह बिंब प्रस्तुत करने में सफल रही हैं।



टास्क वर्मा जी ने आइसलैंड की समुद्री जहाज की यात्रा का वर्णन किस प्रकार किया है?

14

“कितने कम याद रह पाते हैं, चित्र दीवार पर टंगे फ्रेमों में बंद खून और पसीने में लिथड़े स्वप्न। और हम हैं कि हर कदम पर सदियों को पार करते जाते हैं। संग रह जाता है केवल आभास—रंगों आकृतियों से

उत्पन्न हुई किंतु उससे अलग एक स्मृति। शून्यता को काटती एक उड़ान, एक चीख, बंद सदियों की कुछ चाभियाँ, जिन्हें हम अपने संग ले जाते हैं और बाद में खोलते हैं अकेले में, अपने ही अकेलेपन को।”

प्रसंग—प्रस्तुत पंक्तियाँ श्री निर्मल वर्मा द्वारा विरचित संस्मरण संग्रह ‘चीड़ों पर चाँदनी’ से उद्धृत की गई हैं। इस पुस्तक में लेखक ने अपनी आइसलैंड की यात्रा के संस्मरण प्रस्तुत किए हैं। समुद्र की यात्रा के दौरान उनका प्रथम पड़ाव था स्कॉटलैंड। लेखक के पास समय बहुत कम था फिर भी उन्होंने एडिनबरो के राष्ट्रीय संग्रहालय को देखने का समय निकाल ही लिया। उस माध्यम से उन्होंने स्कॉट जाति के अनेक पक्षों को जाना। वहाँ की आर्ट गैलरी देखने के बाद लेखक ने अपनी प्रतिक्रिया इस प्रकार व्यक्त की—

व्याख्या—लेखक कहता है कि उसने अनेक आर्ट गैलरियाँ देखीं, उन पर टंगे हुए हजारों चित्र भी देखे परंतु उन सबको याद रखना कितना कठिन है। वे चित्र जिनको कलाकारों ने खून-पसीने की मेहनत करके बनाया था। वे चित्र जिनमें कलाकारों के स्वप्न अंकित थे। उनकी आकांक्षाएँ, आशाएँ टिकी थीं, कितना याद रह जाते हैं वे चित्र। दर्शक केवल एक दृष्टि ही उन पर डाल पाता है और आगे बढ़ जाता है। अपनी सदी के महत्वपूर्ण चित्रों को देखकर वह अगले समय के महत्वपूर्ण चित्र देखने पहुँच जाता है, इस माध्यम से वह एक कदम में ही एक सदी पार कर लेता है। जिन चित्रों को बनाने में कलाकारों का जीवन व्यतीत हो गया, उन्हें एक विहंगम दृष्टि डालकर दर्शक आगे बढ़ जाता है। उसके साथ रह जाता है एक आभास—रंगों और आकृतियों से उत्पन्न हुई एक स्मृति, जिसे वह शायद हमेशा याद रखता है। इस अनुभूति को लेखक ने मानो शून्य में एक चीख माना है या एक उड़ान। लेखक ने कहा है कि हम ‘आर्ट गैलरी’ में चित्र देखकर उन सदियों को बंद कर आते हैं परंतु उन बंद सदियों की चाभियाँ अपने साथ ले आते हैं तथा बाद में स्मृति के माध्यम से उन चित्रों को, उनके साथ जुड़ी हुई भावनाओं को पुनः खोलते हैं, जिससे अपना अकेलापन समाप्त हो जाता है।

विशेष—लेखक ने वैयक्तिक भावनाओं की प्रतिक्रिया की काव्यात्मक अभिव्यक्ति की है। ‘हर कदम पर सदियों को पार करना’, शून्यता को काटती एक उड़ान तथा ‘बंद सदियों की चाभियाँ’ सुंदर प्रयोग है। पूरा अंश ही मानो एक कविता है जिसे गद्य में प्रस्तुत किया गया है। लेखक ने स्मृतियों को बंद सदियों की ‘चाभियाँ’ कहा है। स्मृति में यह विशेष गुण होता है कि वह कभी नष्ट नहीं होती। अचेतन में दमित अवश्य हो जाती है। परंतु उन्हें चेतन में लाने के लिए विशेष प्रयास नहीं करना पड़ता। वे ऐसी चाभियाँ हैं जिनसे किसी भी समय कहीं का भी ताला खोला जा सकता है। उस व्यतीत जगत् में पुनः प्रवेश किया जा सकता है। भावों के अनुरूप ही भाषा भी काव्यात्मकता के अनुरूप है। किसी सुंदर कविता के सभी गुण हमें इन पंक्तियों में उपलब्ध होते हैं।

6.7 सारांश (Summary)

- किसी भी साहित्यिक रचना का मूल्य उसके अन्य गुणों के साथ ही भाषा-शैली से भी आँका जाता है। रचना में यदि भाषा प्रभावी मार्मिक एवं सहज संप्रेषणीय नहीं होगी उसे शब्दाडंबर की ही अभिव्यक्ति माना जाएगा जिससे रचना अपनी अर्थवत्ता खो बैठेगी।
- यूरोप के शहरों में घूमते हुए मुझे यह अक्सर महसूस हुआ है कि इन लोगों के बीच मैं महज ‘आउटसाइडर’ हूँ—एक बाहर का आदमी। यूरोप के लिए फासिज्म का जो अर्थ रहा है, क्या मैं उसे कभी सही-सही समझ सकूँगा, महसूस कर पाऊँगा?
- लेखक के साथ दुविधा यह है कि वह विदेशों में यात्रा करने निकला था। अतः स्वाभाविक रूप से उसके सभी वार्तालाप अंग्रेजी अथवा अन्य किसी विदेशी भाषा में हुए होंगे। संस्मरणों में उसने उन संवादों को स्मरण करके उनका हिंदी अनुवाद प्रस्तुत किया है।
- कोई भी रचना पूरी तरह से पढ़े जाने के लिए लिखी जाती है। इसलिए उसके प्रत्येक वाक्य और अनुच्छेदों में कुछ ऐसी व्यवस्था की जाती है कि पाठक रुचिपूर्वक उसे पढ़ता चले। इसके लिए आवश्यक है कि संस्मरण की भाषा सरल एवं प्रवाहपूर्ण हो।

नोट

- जब दुबुआ लौटे, तो रंग दूसरा ही था। इससे पेशतर कि मैं कुछ कह पाता, वह मुझे बिस्तर पर घसीट कर नाचने लगे थे। पीकर आए थे और पूरी आवाज में गा रहे थे। उनके मित्र प्लूम कोने में कुर्सी घसीटकर बैठ गए थे और बराबर हँसते जा रहे थे।
- स्मृतियों में वे जिप्सी स्मृतियाँ हैं, जिनका कोई घर ठिकाना नहीं। भीतर हमें बच-बचकर रास्ता बनाना पड़ा। बियर के गिलास से आँखें ऊपर उठीं। एक हल्की-सी मुस्कराहट उनके होंठों पर आ सिमटी।
- संस्मरण पुरानी घटनाओं का स्मरण कर उसे पुनः प्रस्तुत करने की विधि है। अतः इसमें सबसे उपयोगी शैली यही वर्णनात्मकता ही है। इस शैली में लेखक घटनाओं, चरित्रों आदि का वर्णन करता चलता है।
- जब तक व्यक्ति किसी घटना को भोग नहीं लेता वह उसके लिए व्यतीत नहीं होती। लेखक बर्लिन में गया है और विभाजित बर्लिन को देखकर उसके हृदय में द्वितीय विश्वयुद्ध की विभीषिका का आतंक भर आया।
- नाटक मात्र मंच पर मंचित कर देने की चीज नहीं अर्थात् यह केवल मनोरंजन की वस्तु नहीं, अपितु यह जीवन को समझने की एक नवीन दृष्टि प्रदान करता है। वह जीवन को जीना सिखाता है।
- इन संस्मरणों की रचना सन् 1964 में हुई थी जब शीतयुद्ध अपने चरम शिखर पर था परंतु 26 वर्षों बाद इन पंक्तियों की प्रासंगिकता ही समाप्त हो गई क्योंकि 1990 में अधिकांश पूर्वी यूरोप के कम्युनिस्ट देशों में राजनीतिक परिवर्तन आया और वहाँ भी प्रजातंत्र की लहर दौड़ गई।
- पूर्वी बर्लिन कम्युनिस्ट देश है अतः वह फासिज्म का विरोध करता है जबकि पश्चिम जर्मनी एक प्रजातांत्रिक राष्ट्र है जो कम्युनिज्म का विरोध करता है परंतु साथ ही वह हिटलर का भी विरोध करता है।
- अमस्टरडम को नहरों का शहर कहा जाता है। वहाँ शहर की गलियों के बीच नहरें हैं और उनके दोनों तरफ मकान हैं। नहरों में ही दुकानें हैं यहाँ तक कि यातायात के लिए नावों का प्रयोग किया जाता है।
- 13वीं-14वीं शताब्दी में आइसलैंड में अनेक साहित्यिक और ऐतिहासिक ग्रंथों की सर्जना हुई। उन दिनों आइसलैंड डेनमार्क का उपनिवेश था। इन ग्रंथों में ‘सागा ग्रंथों’ को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है। इन ग्रंथों की पाण्डुलिपियाँ आज डेनमार्क के संग्रहालयों और पुस्तकालयों में सुरक्षित हैं।
- लेखक समुद्री जहाज पर ‘उत्तरी रोशनियों की ओर’ जा रहा है। रात का समय है। चारों ओर अंधकार है। समुद्र का असीम अंधकार और लेखक को अनुभव हो रहा है कि वह इस अनंत अंधकार के एक छोटे से टुकड़े पर तिरते हुए जा रहे हैं।

6.8 शब्दकोश (Keywords)

- | | |
|---------------------------------|-------------------------|
| 1. रफ़ता-रफ़ता — धीरे-धीरे | 2. मुंदना — बंद होना |
| 3. क्षण — पल | 4. वीरान — उजड़ी हुई |
| 5. निर्णय — फैसला | 6. इस कदर — इतना |
| 7. परिलक्षित — दिखाई | 8. मध्यरात्रि — आधी रात |
| 9. पारदर्शी — आरपार दीखने वाला। | |

6.9 अभ्यास प्रश्न (Review Questions)

- ‘चीड़ों पर चाँदनी’ में लेखक ने भाषा के कितने रूपों का वर्णन किया है?
- निर्मल वर्मा ने अपने संस्मरण में प्रयुक्त भाषा में वाक्य रचना संबंधी किन विशेषताओं की व्याख्या की है?
- निर्मल वर्मा की भाषा के शब्द-सौंदर्य का संक्षिप्त आकलन कीजिए।
- निर्मल वर्मा जी ने संस्मरण संकलन में कितने प्रकार की शैली का वर्णन किया है?

नोट

5. लेखक ने ब्रेख्त के नाटक 'टेरर और मिजरी' देखते समय क्या प्रतिक्रियाएं व्यक्त की?
6. निर्मल वर्मा जी ने स्मृतियों की क्या विशेषता बताई है?
7. वर्मा जी के अनुसार आइसलैंड की किस प्रकार भारतीयों से श्रेष्ठ हैं?
8. एडिनबरो के राष्ट्रीय संग्रहालय की आर्ट गैलरी देखने के बाद लेखक ने क्या प्रतिक्रिया व्यक्त की?

उत्तर : स्व-मूल्यांकन (Answers : Self-Assessment)

- | | | | |
|-------------|----------------|------------|-----------|
| 1. आत्मीयता | 2. प्रवाहपूर्ण | 3. दुबुआ | 4. भाषागत |
| 5. (ख) | 6. (ग) | 7. (क) | 8. सत्य |
| 9. सत्य | 10. असत्य | 11. असत्य। | |

6.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Further Readings)



पुस्तकें चीड़ों पर चाँदनी—निर्मल वर्मा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।